इकाई एक

शिक्षकों के लिए

सामाजिक एवं राजनीतिक जीवन पर केंद्रित पिछली दोनों पाठ्यपुस्तकों में भारतीय संविधान का बार-बार ज़िक्र आया है। दोनों ही पुस्तकों में संविधान का उल्लेख तो था लेकिन उस पर पर्याप्त रूप से चर्चा नहीं की गई थी। इस साल इकाई 1 के अध्यायों में मुख्य रूप से संविधान पर ही विचार किया जा रहा है।

अध्याय 1 में सबसे पहले उन सिद्धांतों की चर्चा की गई है जिनसे उदारवादी संविधान का जन्म होता है। जिन विचारों के बारे में बात की जा रही है, बच्चों को उनसे परिचित कराने के लिए तीन छोटे-छोटे चित्रकथा-पट्ट भी दिए गए हैं। इन चित्रकथा-पट्टों में कक्षा के भीतर घटने वाली सामान्य घटनाओं के ज़रिए तीन जटिल मूलभूत सिद्धांतों (Constitutive principles) को समझाया गया है। चित्रकथा-पट्टों के ज़रिए आप विद्यार्थियों को यह समझा सकते हैं कि ये मूलभूत सिद्धांत हमें किन चीज़ों से सुरक्षा प्रदान करते हैं।

भारतीय संविधान की चर्चा एक ऐतिहासिक संदर्भ में प्रस्तुत की गई है। इसका मकसद विद्यार्थियों को इस बात का एहसास कराना है कि हमारे उपनिवेशवाद-विरोधी संघर्ष से भारतीय लोकतंत्र पर कौन-कौन से महत्त्वपूर्ण प्रभाव पड़े हैं। संविधान की चर्चा करते हुए हमें उसके कुछ मुख्य आयामों की व्याख्या करने के लिए कई नए और प्राय: कठिन शब्दों का इस्तेमाल करना पड़ा। इन शब्दों को पढ़ाते हुए इस बात को ध्यान में रखें कि बच्चों को ये बातें अगली कक्षाओं में और विस्तार से पढ़नी हैं। इसलिए, यहाँ कोशिश यह की गई है कि बच्चे भारतीय लोकतंत्र से संबंधित इन आयामों की आधारभूत समझ ग्रहण कर लें।

अध्याय 2 में धर्मनिरपेक्षता पर चर्चा की गई है। धर्मनिरपेक्षता की सबसे प्रचलित परिभाषा इस समझ पर आधारित है कि धर्म और राज्य, दोनों को एक-दूसरे से अलग रखा जाना चाहिए। यहाँ इसी परिभाषा को एक प्रस्थानबिंदु के रूप में देखा गया है और उसके आधार पर दो जटिल विचारों की व्याख्या की गई है। पहला विचार इस बात की ओर संकेत करता है कि राज्य और धर्म के बीच फ़ासला क्यों महत्त्वपूर्ण है और दूसरा इस बात पर ज़ोर देता है कि भारतीय धर्मनिरपेक्षता के कौन से खास पहलू हैं।

राज्य और धर्म के बीच पृथक्करण के दो महत्त्वपूर्ण कारण हैं। पहला कारण यह है कि एक धर्म का दूसरे धर्म पर यानी *अंतर-धार्मिक* (Inter-religious) वर्चस्व स्थापित नहीं होना चाहिए। दूसरी बात यह है कि धर्म के भीतर भी जो विभिन्न प्रकार के वर्चस्व स्थापित हो जाते हैं यानी *अंत:धार्मिक* (Intra-religious) वर्चस्व, उनका विरोध किया जाना चाहिए। उदाहरण के लिए इस अध्याय में हिंदू धर्म के भीतर छुआछूत के चलन पर चर्चा की गई है। इस प्रथा की वज़ह से 'ऊँची जातियों' के लोगों को कुछ 'निचली जातियों' के लोगों पर दबदबा कायम करने का मौका मिलता रहा है। धर्मनिरपेक्षता का संस्थागत धर्म से विरोध है और इसका मतलब है कि यह सोच धर्मों के बीच और धर्मों के भीतर स्वतंत्रता एवं समानता को प्रोत्साहित करती है।

इस अध्याय में दूसरा महत्त्वपूर्ण अवधारणात्मक सवाल इस बात पर केंद्रित है कि भारतीय धर्मनिरपेक्षता की अनूठी विशेषता क्या है। भारतीय धर्मनिरपेक्षता राज्य को धर्म से अलग रखकर व्यक्तियों की धार्मिक स्वतंत्रता की रक्षा करती है। लेकिन यह अवधारणा धर्मों के भीतर सुधार की गुंजाइश भी पैदा करती है। मिसाल के तौर पर, इसके ज़रिए छुआछूत और बाल-विवाह जैसी कुरीतियों के उन्मूलन की दिशा में बढ़ा जा सकता है। फलस्वरूप धार्मिक समानता (धर्मों के भीतर और धर्मों के बीच) स्थापित करने के ज़रिए भारतीय धर्मनिरपेक्ष राज्य धर्मों से दूर भी रहता है और उनमें हस्तक्षेप भी करता है। यह हस्तक्षेप पाबंदी के रूप में भी हो सकता है (जैसे छुआछूत के मामले में) और धार्मिक अल्पसंख्यकों को सहायता मुहैया कराने के रूप में भी। इस अध्याय में इस बात की व्याख्या की गई है और इसे 'सैद्धांतिक फ़ासला' बताया गया है। इसका मतलब यह है कि राज्य की ओर से धर्म में किसी भी तरह का हस्तक्षेप संविधान में सूत्रबद्ध किए गए आदर्शों पर आधारित होना चाहिए।

ऊपर जिन बातों की चर्चा की गई है उनमें से कई बिंदु काफ़ी जटिल हैं। लिहाज़ा यह बहुत ज़रूरी है कि यह अध्याय पढ़ाने से पहले आप इन बातों को अच्छी तरह समझ लें। विद्यार्थियों की तरफ़ से इस बारे में कई तरह के सुझाव आ सकते हैं कि सरकार को धार्मिक मामलों में दखल क्यों देना चाहिए या क्यों नहीं देना चाहिए। इसमें कोई संदेह नहीं कि किसी भी तरह की चर्चा को ज़्यादा से ज़्यादा प्रोत्साहित किया जाए, लेकिन यह चर्चा एक सीमा के भीतर ही रहे ताकि धार्मिक अल्पसंख्यकों के बारे में बच्चों के ज़ेहन में मौजूद प्रचलित रूढ़ छवियाँ और मज़बूत न होने लगें।

अध्याय 1

भारतीय संविधान

इस अध्याय में हम फुटबॉल के खेल से अपनी बात शुरू करेंगे। आपमें से ज़्यादातर बच्चों ने इस खेल के बारे में ज़रूर सुना होगा। बहुतों ने खेला भी होगा। जैसा कि इसके नाम से ही अंदाज़ा हो जाता है, यह खेल पैरों से संबंधित है। फुटबॉल का एक नियम यह है कि गोलकीपर के अलावा और कोई खिलाड़ी गेंद को बाँह से नहीं छू सकता। अगर किसी खिलाड़ी की बाँह गेंद को छू जाती है तो इसे फाउल या गलत माना जाता है। कहने का मतलब यह है कि अगर खिलाड़ी फुटबॉल को हाथों में लेकर एक-दूसरे को थमाने लगें तो उस खेल को फुटबॉल नहीं माना जाएगा। इसी तरह हॉकी या क्रिकेट आदि दूसरे खेलों के भी कुछ तय नियम होते हैं। इन नियमों से खेल को परिभाषित करने और अलग-अलग खेलों के बीच फ़र्क करने में मदद मिलती है। इन खेलों की तरह हर समाज के भी कुछ मूलभूत नियम (Constitutive rules) होते हैं। उन्हीं से समाज का स्वरूप तय होता है और अलग-अलग समाजों के बीच फ़र्क पता चलता है। बड़े समाजों में कई अलग-अलग समुदाय एक साथ रहते हैं। वहाँ नियमों को आम सहमति के ज़रिए तय किया जाता है। आधुनिक देशों में यह सहमति आमतौर पर लिखित रूप में पाई जाती है। जिस दस्तावेज़ में हमें ऐसे नियम मिलते हैं उसे संविधान कहा जाता है।

कक्षा 6 और 7 में भी *सामाजिक एवं राजनीतिक जीवन* की पाठ्यपुस्तकों में हम भारतीय संविधान पर चर्चा कर चुके हैं। इन किताबों को पढ़कर क्या कभी यह सवाल आपके भीतर पैदा हुआ कि हमें संविधान की ज़रूरत क्यों पड़ती है? क्या आपने यह जानने की कोशिश की कि संविधान कैसे लिखा गया? या उसे किसने लिखा था? इस अध्याय में हम इन्हीं मुद्दों पर चर्चा करेंगे और भारतीय संविधान की मुख्य बातों पर ध्यान देंगे। ये बातें भारतीय लोकतंत्र के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। इस पुस्तक के विभिन्न अध्यायों में इनमें से कुछ बातों पर विशेष ज़ोर दिया जाएगा।

किसी देश को संविधान की ज़रूरत क्यों पड़ती है?

आज दुनिया के ज़्यादातर देशों के पास अपना संविधान है। आमतौर पर सभी लोकतांत्रिक देशों के बारे में उम्मीद की जा सकती है कि उनके पास संविधान ज़रूर होगा। लेकिन इसका यह मतलब नहीं है कि जिन देशों के पास अपने संविधान होते हैं वे सभी लोकतांत्रिक देश ही होंगे। संविधान कई उद्देश्यों की पूर्ति करता है। पहला, यह दस्तावेज़ उन आदर्शों को सूत्रबद्ध करता है जिनके आधार पर नागरिक अपने देश को अपनी इच्छा और सपनों के अनुसार रच सकते हैं। यानी संविधान ही बताता है कि हमारे समाज का मूलभूत स्वरूप क्या हो। देश के भीतर आमतौर पर कई समुदाय रहते हैं। उनके बीच कई बातें समान होती हैं लेकिन ज़रूरी नहीं कि वे सारे मुद्दों पर एक-दूसरे से सहमत हों। संविधान नियमों का एक ऐसा समूह होता है जिसको एक देश के सभी लोग अपने देश को चलाने की पद्धति के रूप में अपना सकते हैं। इसके ज़रिए वे न केवल यह तय करते हैं कि सरकार किस तरह की होगी बल्कि उन आदर्शों पर भी एक साझी समझ विकसित करते हैं जिनकी हमेशा पूरे देश में रक्षा की जानी चाहिए।

1934 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने संविधान सभा के गठन की माँग को पहली बार अपनी अधिकृत नीति में शामिल किया। केवल भारतीयों को लेकर बनने वाली एक स्वतंत्र संविधान सभा की यह माँग दूसरे विश्व युद्ध के दौरान और तेज़ हो गई और अंतत: दिसंबर 1946 में संविधान सभा का गठन किया गया। पृष्ठ 2 पर दिए गए चित्र में संविधान सभा के कुछ सदस्यों को दर्शाया गया है।

दिसबंर 1946 से नवंबर 1949 के बीच संविधान सभा ने स्वतंत्र भारत के लिए नए संविधान का एक प्रारूप तैयार किया। 150 साल की अंग्रेज़ी हुकूमत के बाद भारतीयों को आखिरकार अपनी नियति और भविष्य तय करने का मौका मिला था। संविधान सभा के सदस्यों ने स्वतंत्रता संघर्ष से उपजे महान आदर्शों को ध्यान में रखते हुए इस काम को गंभीरता से अंजाम दिया। संविधान सभा के कामों के बारे में आप इसी अध्याय में आगे पढ़ेंगे।

बगल में दिए गए चित्र में प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरु संविधान सभा को संबोधित कर रहे हैं।

नेपाल में लोकतंत्र के लिए कई जनसंघर्ष हो चुके हैं। 1990 में हुए संघर्ष के बाद लोकतंत्र की स्थापना हुई यह लोकतांत्रिक व्यवस्था 2002 तक यानी 12 साल कायम रही। अक्तूबर 2002 में राजा ज्ञानेन्द्र ने गाँवों में माओवादी संगठनों के बढ़ते प्रभाव का बहाना बनाकर सेना की मदद से सरकार के विभिन्न कामों को अपने कब्ज़े में लेना शुरू कर दिया। फ़रवरी 2005 में राजा ने शासन की बागडोर पूरी तरह अपने हाथों में ले ली। नवंबर 2005 में माओवादियों ने अन्य राजनीतिक दलों के साथ एक 12 सूत्री समझौते पर दस्तखत किए। इस समझौते में आम लोगों को लोकतंत्र और अमन-चैन बहाल होने की उम्मीद दिखाई दे रही थी। लोकतंत्र के लिए चल रहा यह जनांदोलन 2006 तक अपने शिखर पर पहुँच चुका था। आंदोलनकारियों ने राजा की ओर से दी गई छोटी-मोटी रियायतों को नामंज़ूर कर दिया और आखिरकार अप्रैल 2006 में राजा को तृतीय संसद बहाल करके राजनीतिक दलों को सरकार बनाने का मौका देना पड़ा। 2007 में नेपाल ने अंतरिम संविधान बनाया और उसके मुताबिक शासन चलाया। 2006 में लोकतंत्र की माँग को लेकर चलने वाले जनतांत्रिक आंदोलन के दृश्य ऊपर के चित्रों में हैं।

अपने शिक्षक के साथ चर्चा करें कि मूलभूत (Constitutive) शब्द से आप क्या समझते हैं? अपने रोज़मर्रा के जीवन के आधार पर मूलभूत नियम का एक उदाहरण दें।

नेपाल की जनता एक नया संविधान क्यों चाहती थी?

इन बातों का क्या मतलब है, यह समझने के लिए आइए दो बिल्कुल अलग-अलग परिस्थितियों पर गौर करें। दोनों घटनाएँ भारत की उत्तरी सीमा पर स्थित नेपाल के ताज़ा इतिहास की घटना है। समाचार पत्रों के माध्यम से ऊपर दी गई खबर में बताया गया है कि नेपाल के लोगों ने हाल ही में एक अंतरिम संविधान को मंज़ूरी दी है। सवाल यह उठता है कि जब नेपाल में पहले से ही संविधान था तो उसे नए संविधान की ज़रूरत क्यों पड़ी? इसका कारण यह है कि कुछ समय पहले तक नेपाल एक राजतंत्र था। वहाँ राजा का शासन था। 1990 में बना नेपाल का पिछला संविधान इस सिद्धांत पर आधारित था कि शासन की सर्वोच्च सत्ता राजा के पास रहेगी। नेपाल के लोग कई दशक से लोकतंत्र की स्थापना के लिए जनांदोलन करते चले आ रहे थे। इसी संघर्ष के फलस्वरूप 2006 में आखिरकार उन्हें राजा की सत्ता को खत्म करने में कामयाबी मिल गई अब नेपाल के लोग लोकतंत्र के रास्ते पर चलना चाहते हैं और इसके लिए उन्हें एक नया संविधान चाहिए। वे पिछले संविधान को इसलिए नहीं अपनाना चाहते क्योंकि उसमें वे आदर्श नहीं हैं जो वे नेपाल के लिए चाहते हैं और जिनके लिए वे लड़ते रहे हैं।

जिस तरह फुटबॉल के खेल में नियम बदलते ही खेल बदल जाता है, उसी तरह नेपाल को भी राजतंत्र की जगह लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था पर चलने के कारण अपने सारे नियम बदलने होंगे ताकि एक नए समाज की रचना की जा सकें यही कारण है कि नेपाल के लोग अपने देश के लिए एक नया संविधान बना रहे हैं। ऊपर के चित्र के साथ दिए गए अंश में लोकतंत्र के लिए नेपाल के संघर्ष के बारे में बताया गया है।

संविधान का दूसरा मुख्य उद्देश्य होता है देश की राजनीतिक व्यवस्था को तय करना। नेपाल के पुराने संविधान में कहा गया था कि देश के

शासन की बागडोर राजा और मंत्रिपरिषद् के हाथ में रहेगी। जिन देशों ने लोकतांत्रिक शासन पद्धति या राज्य व्यवस्था चुनी है वहाँ निर्णय प्रक्रिया के नियम तय करने में संविधान बहुत अहम भूमिका अदा करता है।

लोकतंत्र में हम अपने नेता खुद चुनते हैं ताकि हमारी ओर से वे सत्ता का ज़िम्मेदारी के साथ इस्तेमाल कर सकें। फिर भी इस बात की संभावना हमेशा रहती है कि ये नेता सत्ता का दुरुपयोग कर सकते हैं। इस तरह की विकृतियों से बचाव का उपाय संविधान में मिलता है। राजनेताओं द्वारा सत्ता के इस दुरुपयोग से लोगों के साथ भारी अन्याय हो सकता है। इसका एक उदाहरण नीचे दी गई चित्रकथा–पट्ट में देखा जा सकता है –

लोकतांत्रिक समाजों में प्राय: संविधान ही ऐसे नियम तय करता है जिनके द्वारा राजनेताओं के हाथों सत्ता के इस दुरुपयोग को रोका जा सकता है। भारतीय संविधान में ऐसे बहुत सारे कानून मौलिक अधिकारों वाले खण्ड में दिए गए हैं। क्या आपको कक्षा 7 की पुस्तक में दिए गए दलित लेखक ओमप्रकाश वाल्मीकि के अनुभवों की कुछ याद है? उस अध्याय में बताया गया था कि ओमप्रकाश को दलित होने के कारण किस तरह के भेदभाव का सामना करना पड़ा। वहाँ आपने पढ़ा था कि भारतीय संविधान देश के सभी व्यक्तियों को समानता का अधिकार देता है। हमारा संविधान कहता है कि धर्म, नस्ल, जाति, लिंग और जन्मस्थान के आधार पर देश के किसी भी नागरिक के साथ भेदभाव नहीं किया जा सकता। इस प्रकार समानता का अधिकार भारतीय संविधान में दिया गया एक मौलिक अधिकार है।

1. मॉनीटर अपनी शक्ति का किस तरह दुरुपयोग कर रहा है?

2. नीचे दी गई किस परिस्थिति में मंत्री को अपनी सत्ता के दुरुपयोग का दोषी कहा जाएगा–

(क) जब वह ठोस तकनीकी कारणों से अपने मंत्रालय की किसी परियोजना को नामंज़ूर कर देता है;

(ख) जब वह अपने पड़ोसी को अपने सुरक्षाकर्मियों से पिटवाने की धमकी देता है;

(ग) जब वह थाने में फ़ोन करके पुलिस अधिकारियों पर दबाव डालता है कि उसके किसी दोषी रिश्तेदार के खिलाफ़ एफ.आई.आर. दर्ज न की जाए।

लोकतंत्र में संविधान का एक महत्त्वपूर्ण काम यह होता है कि कोई भी ताकतवर समूह किसी दूसरे या कम ताकतवर समूह या लोगों के खिलाफ़ अपनी ताकत का इस्तेमाल न करे। नीचे दिए गए चित्रकथा–पट्ट में कक्षा के भीतर की एक घटना के आधार पर इस बात को समझाया गया है।

उपरोक्त चित्रकथा-पट्ट में कौन लोग अल्पसंख्या में हैं? बहुसंख्यक गुट द्वारा लिए गए फ़ैसलों से यह अल्पसंख्यक गुट किस तरह दबाया जा रहा है?

इस तरह के अस्वस्थ हालात लोकतांत्रिक समाजों में भी पैदा हो सकते हैं जहाँ बहुमत वाला गुट लगातार ऐसे फ़ैसले लागू करता रहता है जिनमें अल्पसंख्यकों की सहमति नहीं होती और उनका नुकसान होता है। जैसा कि इस चित्रकथा–पट्ट से पता चलता है, बहुमत की निरंकुशता का खतरा हर समाज में बना रहता है। संविधान में दिए गए नियमों से इस बात का खयाल रखा जाता है कि अल्पसंख्यकों को किसी ऐसी चीज़ से वंचित न किया जाए जो बहुसंख्यकों के लिए सामान्य रूप से उपलब्ध है। अल्पसंख्यकों पर बहुसंख्यकों की इस निरंकुशता या दबदबे पर प्रतिबंध लगाना भी संविधान का महत्त्वपूर्ण कार्य है। यह दबदबा एक समुदाय द्वारा दूसरे समुदाय के ऊपर भी हो सकता है जिसे अंतर–सामुदायिक (Inter-community) वर्चस्व कहते हैं, या फिर एक ही समुदाय के भीतर कुछ लोग दूसरों को दबा सकते हैं, जिसे अंत:सामुदायिक (Intra-community) वर्चस्व कहते हैं।

संविधान क्यों होना चाहिए – इसका तीसरा महत्त्वपूर्ण कारण यह है कि हम खुद को अपने आप से बचा सकें। यह बात सुनने में जरा अजीब लगती है। असल में इसका मतलब यह है कि कई बार हम किसी मुद्दे पर बहुत तीखे ढंग से सोचने लगते हैं। ऐसे विचार हमारे व्यापक हितों के लिए नुकसानदेह हो सकते हैं। संविधान हमें ऐसी भावनाओं से बचाने में मदद करता है। इसे समझने के लिए नीचे के चित्रकथा–पट्ट को देखिए।

संविधान हमें ऐसे फ़ैसले लेने से भी रोकता है जिनसे उन बड़े सिद्धांतों को ठेस पहुँच सकती है जिनमें देश आस्था रखता है। उदाहरण के तौर पर हो सकता है कि लोकतंत्र को मानने वाले अधिकांश लोग गंभीरता से महसूस करने लगें कि दलगत राजनीति यानी पार्टी पॉलिटिक्स बहुत विकृत हो चुकी है, इसलिए अब चीज़ों को दुरुस्त करने के लिए किसी तानाशाह को ही शासन सौंप देना चाहिए या फ़ौज़ी शासन हो जाना चाहिए। इस भावना में बह कर लोग बहुधा इस बात को महसूस नहीं कर पाएँगे कि लंबे दौर में तानाशाही शासन तो उनके सारे हितों को तहस–नहस कर देगा। एक अच्छा संविधान देश की बुनियादी संरचना को इस तरह के उन्माद से बचाता है। यह ऐसे प्रावधानों को आसानी से पलटने नहीं देता जिनके ज़रिए नागरिकों को अधिकारों का आश्वासन मिलता है और उनकी स्वतंत्रता की रक्षा होती है।

शबनम इस बात पर क्यों खुश हो रही है कि उसने टी.वी. नहीं देखा? ऐसी स्थिति में आप क्या करते?

इस चर्चा से आप समझ जाएँगे कि संविधान किसी भी लोकतांत्रिक समाज में कितनी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

आइए अब निम्नलिखित उदाहरणों से जुड़े मूलभूत नियमों से तालिका को भरें। इसके ज़रिए इस बात को दोहराएँ कि लोकतांत्रिक समाजों में संविधान इतनी महत्त्वपूर्ण भूमिका क्यों निभाता है–

उदाहरण	मूलभूत नियम
नेपाल में लोकतंत्र के लिए चले आंदोलन की सफलता के बाद वहाँ के लोग एक नया संविधान तैयार कर रहे हैं।	ये ऐसे आदर्श हैं जिनसे पता चलता है कि हम किस तरह की शासन व्यवस्था में रहना चाहते हैं।
सुरेश अपने सहपाठी अनिल को बेवज़ह परेशान कर रहा है।	
लड़कियों को बास्केटबॉल खेलने का मौका नहीं मिलता क्योंकि उनकी कक्षा में लड़कों की संख्या ज़्यादा है।	
शबनम ने टी.वी. देखने की बजाय अपने अध्यायों को दोहराने का फ़ैसला लिया।	

आइए अब भारतीय संविधान के कुछ मुख्य आयामों का अध्ययन करें और इस बात को समझें कि उपरोक्त बिंदु कुछ खास आदर्शों और नियमों का रूप किस तरह ग्रहण करते हैं।

भारतीय संविधान : मुख्य लक्षण

बीसवीं सदी तक आते-आते भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन कई दशक पुराना हो चुका था। स्वतंत्रता संघर्ष के दौरान राष्ट्रवादियों ने इस बात पर काफ़ी विचार किया था कि स्वतंत्र भारत किस तरह का होना चाहिए। ब्रिटिश शासन के अंतर्गत उन्हें जिन नियमों को मानना पड़ता था वे उन्होंने खुद नहीं बनाए थे। औपनिवेशिक राज्य के लंबे अत्याचारी शासन ने भारतीयों के सामने इतना ज़रूर स्पष्ट कर दिया था कि स्वतंत्र भारत को एक लोकतांत्रिक देश होना चाहिए। उसमें प्रत्येक नागरिक को समान माना जाएगा और सभी को सरकार में हिस्सेदारी का अधिकार होगा। इसके बाद यह तय करना था कि भारत में लोकतांत्रिक सरकार का गठन कैसे किया जाए और उसके कामकाज के नियम क्या हों। यह काम किसी एक आदमी के वश का नहीं था। इसमें लगभग 300 लोगों ने योगदान दिया जो 1946 में गठित की गई संविधान सभा के सदस्य थे। भावी संविधान के निर्माण के लिए अगले तीन साल तक संविधान सभा की बैठकें होती रहीं।

संविधान सभा के सदस्यों के बीच एकता की एक ज़बरदस्त भावना थी। भावी संविधान के एक-एक प्रावधान पर जमकर चर्चा हुई और सभी लोग सहमति विकसित करने के बारे में गंभीर थे। उपरोक्त चित्र के मध्य में सरदार वल्लभभाई पटेल दिखाई दे रहे हैं जो संविधान सभा के एक महत्त्वपूर्ण सदस्य थे।

संविधान सभा के इन सदस्यों के सामने एक बड़ी ज़िम्मेदारी थी। हमारे देश में कई समुदाय थे। उनकी न तो भाषा एक थी, न एक धर्म था और न ही एक जैसी संस्कृति थी। वैसे भी जब संविधान लिखा जा रहा था, उस समय हमारा देश भारी उथल-पुथल से गुज़र रहा था। भारत और पाकिस्तान का बँटवारा लगभग तय हो चुका था। कुछ रियासतें तय नहीं कर पा रही थीं कि उनका भविष्य क्या होगा, वे किधर जाएँगी। जनता की सामाजिक-आर्थिक स्थिति भयानक थी। संविधान सभा के सदस्यों के सामने ये सारे मुद्दे थे। लेकिन उन्होंने अपने इस ऐतिहासिक दायित्व को बहादुरी से पूरा किया और देश को एक ऐसा कल्पनाशील दस्तावेज़ दिया जिसमें राष्ट्रीय एकता को बनाए रखते हुए विविधता के प्रति गहरा सम्मान दिखाई देता है। उन्होंने जो दस्तावेज़ तैयार किया उसमें सामाजिक-आर्थिक सुधारों के ज़रिए गरीबी उन्मूलन और जनप्रतिनिधियों के चयन में जनता की महत्त्वपूर्ण भूमिका पर काफ़ी ज़ोर दिया गया है।

बाबा साहेब डॉ. अम्बेडकर को भारतीय संविधान का जनक कहा जाता है। डॉ. अम्बेडकर का विश्वास था कि संविधान सभा में उनकी हिस्सेदारी से अनुसूचित जातियों को संविधान के प्रारूप में कुछ सुरक्षात्मक व्यवस्था मिली है। लेकिन उन्होंने यह भी कहा था कि भले ही कानून बन गए हों, अभी भी अनुसूचित जातियाँ बेफ़िक्र नहीं हो सकतीं क्योंकि इन कानूनों का संचालन 'सवर्ण हिंदू अधिकारियों' के हाथों में ही है। इसलिए उन्होंने अनुसूचित जातियों से आह्वान किया कि वे सरकार के अलावा लोक सेवाओं में भी बढ़-चढ़कर शामिल हों।

आगे के हिस्सों में भारतीय संविधान के कुछ मुख्य आयामों का उल्लेख किया गया है। इन बातों को पढ़ते हुए विविधता, एकता, सामाजिक-आर्थिक सुधार और प्रतिनिधित्व से संबंधित उपरोक्त चिंताओं को लगातार ध्यान में रखिए जिनसे इस दस्तावेज़ को लिखने वाले जूझ रहे थे। इसे समझने की कोशिश कीजिए कि उन्होंने स्वतंत्र भारत को एक शक्तिशाली लोकतांत्रिक समाज बनाने के उद्देश्य को पूरा करने के साथ इन चिंताओं को किस तरह हल किया।

1. संघवाद (Federalism)- इसका मतलब है देश में एक से ज़्यादा स्तर की सरकारों का होना। हमारे देश में राज्य स्तर पर भी सरकारें हैं और केंद्र स्तर पर भी। पंचायती राज व्यवस्था शासन का तीसरा स्तर है जिसके बारे में आप कक्षा 6 में पढ़ चुके हैं। कक्षा 7 की किताब में आपने राज्य सरकार के कामकाज को देखा था। इस साल हम केंद्र सरकार के बारे में ज़्यादा पढ़ेंगे।

भारत में इतने सारे समुदायों की उपस्थिति का सीधा मतलब यह था कि यहाँ शासन की एक ऐसी व्यवस्था विकसित करनी होगी जिसमें राजधानी दिल्ली में बैठे मुट्ठी भर लोग ही पूरे देश के फ़ैसले न लेने

लगें। इसीलिए प्रांतीय स्तर पर भी सरकार की व्यवस्था की गई ताकि इलाकों के हिसाब से अलग फ़ैसले भी लिए जा सकें। भारत के सभी राज्यों को कुछ मुद्दों पर फ़ैसले लेने का स्वायत्त अधिकार है। राष्ट्रीय महत्त्व के सवालों पर सभी राज्यों को केंद्र सरकार द्वारा बनाए गए कानूनों को मानना पड़ता है। कार्यक्षेत्र की स्पष्टता के लिए संविधान में कुछ सूचियाँ दी गई हैं जिनमें बताया गया है कि कौन से स्तर की सरकार किन मुद्दों पर कानून बना सकती है। इसके साथ संविधान यह भी तय करता है कि प्रत्येक स्तर की सरकार अपने कार्यों के लिए पैसे का इंतज़ाम कहाँ से कर सकती है। संघवाद के अंतर्गत राज्य केवल केंद्रीय सरकार के प्रतिनिधि नहीं होते। उन्हें भी संविधान से ही अपनी ताकत और अधिकार मिलते हैं। भारत के सभी लोग इन सभी स्तरों की सरकारों द्वारा बनाए गए कानूनों और नीतियों के अंतर्गत आते हैं।

जब संविधान सभा ने सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार के सिद्धांत को स्वीकृति दी तो सभा के सदस्य ए.के. अय्यर ने कहा था कि यह कदम "आम आदमी और लोकतांत्रिक शासन की सफलता में गहरी आस्था का द्योतक और इस विश्वास पर आधारित है कि वयस्क मताधिकार के ज़रिए लोकतांत्रिक सरकार की स्थापना ज्ञानोदय लाएगी। यह आम आदमी के कुशलक्षेम, जीवन स्तर, सुविधा और बेहतर जीवन स्थिति को प्रोत्साहन देगी।"

ऑस्टिन, जी. 1966, *दि इंडियन कॉन्स्टीट्यूशन : कॉर्नरस्टोन ऑफ़ ए नेशन*, क्लेरेंडन प्रेस, ऑक्सफ़ोर्ड।

2. संसदीय शासन पद्धति– सरकार के सभी स्तरों पर प्रतिनिधियों का चुनाव लोग खुद करते हैं। कक्षा 7 की किताब के शुरू में कांता की कहानी दी गई थी जो वोट डालने के लिए कतार में खड़ी है। भारत का संविधान अपने सभी वयस्क नागरिकों को वोट डालने का अधिकार देता है। संविधान सभा के सदस्य जब संविधान की रचना कर रहे थे

नीचे चित्र में दर्शाया गया है कि लोग अपना वोट डालने के लिए कतार में खड़े हैं।

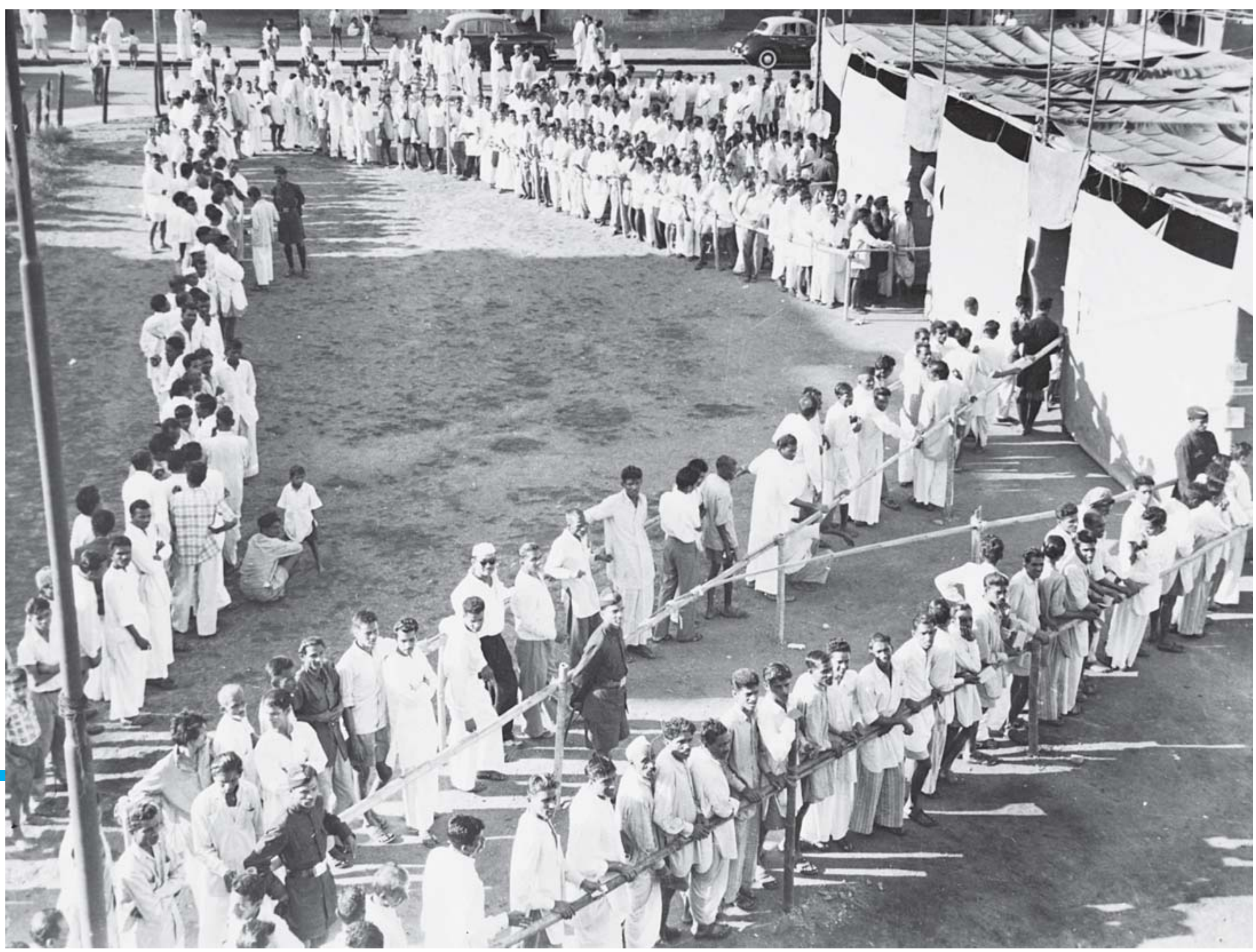

तो उन्हें लगा कि स्वतंत्रता संघर्ष ने भारतीय जनता को वयस्क मताधिकार का प्रयोग करने के योग्य बना दिया है। उन्हें विश्वास था कि इससे न केवल लोकतांत्रिक सोच व तौर-तरीकों को प्रोत्साहन मिलेगा, बल्कि जाति, वर्ग और औरत-मर्द के फ़र्क पर आधारित ऊँच-नीच की बेड़ियों को भी तोड़ा जा सकता है। सार्वभौमिक मताधिकार का मतलब है कि अपने प्रतिनिधियों के चुनाव में देश के सभी लोगों की सीधी भूमिका होती है। इसके अलावा हर व्यक्ति खुद चुनाव भी लड़ सकता है चाहे उसकी सामाजिक पृष्ठभूमि कैसी भी क्यों न हो। ये प्रतिनिधि जनता के प्रति जवाबदेह होते हैं। लोकतांत्रिक कार्यपद्धति में प्रतिनिधित्व क्यों महत्त्वपूर्ण होता है, इसके बारे में आप इसी पुस्तक की दूसरी इकाई में और विस्तार से पढ़ेंगे।

3. शक्तियों का बँटवारा- संविधान के अनुसार राज्य के तीन अंग हैं – विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका। विधायिका में हमारे निर्वाचित प्रतिनिधि होते हैं। कार्यपालिका ऐसे लोगों का समूह है जो कानूनों को लागू करने और शासन चलाने का काम देखते हैं। न्यायालयों की व्यवस्था को न्यायपालिका कहा जाता है जिसके बारे में आप इस पुस्तक की इकाई 3 में पढ़ेंगे। राज्य की किसी भी शाखा द्वारा सत्ता के दुरुपयोग को रोकने के लिए प्रावधान किया गया है कि इन सभी अंगों की शक्तियाँ एक-दूसरे से अलग होंगी। शक्तियों के इस बँटवारे के आधार पर प्रत्येक अंग दूसरे अंग पर अंकुश रखता है और इस तरह तीनों अंगों के बीच सत्ता का संतुलन बना रहता है।

संविधान सभा के सदस्यों को भय था कि कहीं कार्यपालिका इतनी ताकतवर न हो जाए कि विधायिका के प्रति अपने दायित्वों की उपेक्षा ही करने लगे। इस आशंका को ध्यान में रखते हुए सभा ने ऐसे कई प्रावधानों को संविधान में शामिल किया जिनके ज़रिए शासन की कार्यकारी शाखा द्वारा की जाने वाली कार्रवाइयों को सीमित और नियंत्रित किया जा सकें उपरोक्त चित्र में संविधान सभा के कुछ सदस्य गहन चर्चा में व्यस्त दिखाई दे रहे हैं।

इस अध्याय में 'राज्य' शब्द का अकसर इस्तेमाल किया गया है। ध्यान रखें, इसका मतलब राज्य सरकारों से **नहीं** है। जब हम 'राज्य' शब्द का इस्तेमाल करते हैं तो हम उसे 'सरकार' से भिन्न अर्थ में लेते हैं। 'सरकार' की ज़िम्मेदारी होती है कानून बनाना और लागू करना। लेकिन चुनावों के ज़रिए सरकार बदल सकती है। पर राज्य एक ऐसी राजनीतिक संस्था होती है जो निश्चित भूभाग में रहने वाले संप्रभु लोगों का प्रतिनिधित्व करती है। इस आधार पर हम भारतीय राज्य, नेपाली राज्य आदि की बात कर सकते हैं। भारतीय राज्य की एक लोकतांत्रिक सरकार है। सरकार (या कार्यपालिका) राज्य का एक हिस्सा होती है। राज्य का मतलब सरकार से कहीं ज़्यादा व्यापक होता है। उसे सरकार के स्थान पर इस्तेमाल नहीं किया जा सकता।

अपने शिक्षक के साथ चर्चा करें कि राज्य और सरकार के बीच क्या फ़र्क होता है।

भारतीय संविधान में उल्लिखित मौलिक अधिकारों में से कुछ अधिकार–

1. समानता का अधिकार
कानून की नज़र में सभी लोग समान हैं। इसका मतलब है कि सभी लोगों को देश का कानून बराबर सुरक्षा प्रदान करेगा। इस अधिकार में यह भी कहा गया है कि धर्म, जाति या लिंग के आधार पर किसी भी नागरिक के साथ भेदभाव नहीं किया जा सकता। खेल के मैदान, होटल, दुकान इत्यादि सार्वजनिक स्थानों पर सभी को बराबर पहुँच का अधिकार होगा। रोज़गार के मामले में राज्य किसी के साथ भेदभाव नहीं कर सकता। लेकिन इसके कुछ अपवाद हैं जिनके बारे में इसी किताब में हम आगे पढ़ेंगे। छुआछूत की प्रथा का भी उन्मूलन कर दिया गया है।

2. स्वतंत्रता का अधिकार
इस अधिकार के अंतर्गत अभिव्यक्ति और भाषण की स्वतंत्रता, सभा/संगठन बनाने की स्वतंत्रता, देश के किसी भी भाग में आने-जाने और रहने तथा कोई भी व्यवसाय, पेशा या कारोबार करने का अधिकार शामिल है।

3. शोषण के विरुद्ध अधिकार
संविधान में कहा गया है कि मानव व्यापार, जबरिया श्रम और 14 वर्ष से कम उम्र के बच्चों को मज़दूरी पर रखना अपराध है।

4. धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार
सभी नागरिकों को पूरी धार्मिक स्वतंत्रता दी गई है। प्रत्येक व्यक्ति को अपनी इच्छा का धर्म अपनाने, उसका प्रचार-प्रसार करने का अधिकार है।

5. सांस्कृतिक और शैक्षणिक अधिकार
संविधान में कहा गया है कि धार्मिक या भाषाई, सभी अल्पसंख्यक समुदाय अपनी संस्कृति की रक्षा और विकास के लिए अपने-अपने शैक्षणिक संस्थान खोल सकते हैं।

6. संवैधानिक उपचार का अधिकार
यदि किसी नागरिक को लगता है कि राज्य द्वारा उसके किसी मौलिक अधिकार का उल्लंघन हुआ है तो इस अधिकार का सहारा लेकर वह अदालत में जा सकता है।

4. मौलिक अधिकार– मौलिक अधिकारों वाला खंड भारतीय संविधान की 'अंतरात्मा' भी कहलाता है। औपनिवेशिक शासन ने राष्ट्रवादियों के दिमाग में राज्य के प्रति संदेह का भाव पैदा कर दिया था। इसीलिए राष्ट्रवादी चाहते थे कि स्वतंत्र भारत में राज्य की सत्ता के दुरुपयोग से बचने के लिए कुछ लिखित अधिकार होने चाहिए। लिहाज़ा मौलिक अधिकार देश के सभी नागरिकों को राज्य की सत्ता के मनमाने और निरंकुश इस्तेमाल से बचाते हैं। इस तरह संविधान राज्य और अन्य व्यक्तियों के समक्ष व्यक्तियों के अधिकारों की रक्षा करता है।

विभिन्न अल्पसंख्यक समुदाय भी चाहते थे कि संविधान में ऐसे अधिकारों को शामिल किया जाए जो उनके समूह की रक्षा कर सकें। फलस्वरूप बहुसंख्यकों से अल्पसंख्यकों के अधिकारों की रक्षा का आश्वासन भी संविधान में दिया गया है। इन मौलिक अधिकारों के बारे में डॉ. अम्बेडकर ने कहा था कि इनका दोहरा उद्देश्य है– पहला, हरेक नागरिक ऐसी स्थिति में हो कि वह उन अधिकारों के लिए दावेदारी कर सकें और दूसरा, ये अधिकार हर उस सत्ता और संस्था के लिए बाध्यकारी हों जिसे कानून बनाने का अधिकार दिया गया है।

मौलिक अधिकारों के अलावा हमारे संविधान में एक खंड नीति–निर्देशक तत्त्वों का भी है। संविधान सभा के सदस्यों ने यह खंड इसलिए जोड़ा था ताकि और ज़्यादा सामाजिक व आर्थिक सुधार लाए जा सकें। वे चाहते थे कि स्वतंत्र भारतीय राज्य जनता की गरीबी दूर करने वाले कानून और नीतियाँ बनाते हुए इन सिद्धांतों को मार्गदर्शक के रूप में हमेशा अपने सामने रखे।

निम्नलिखित परिस्थितियों में कौन से मौलिक अधिकारों का उल्लघंन हो रहा है –

- **यदि 13 साल का एक बच्चा कालीन के कारखाने में मज़दूरी करता है।**
- **यदि किसी राज्य का कोई नेता दूसरे राज्यों के लोगों को अपने राज्य में काम करने से रोकता है।**
- **यदि किसी जनसमूह को राजस्थान में तेलुगु माध्यम का स्कूल खोलने की अनुमति नहीं दी जाती है।**
- **यदि सरकार सशस्त्र बलों में कार्यरत किसी अधिकारी को इसलिए पदोन्नति नहीं दे रही है क्योंकि वह अधिकारी महिला है।**

5. धर्मनिरपेक्षता– धर्मनिरपेक्ष राज्य वह होता है जिसमें राज्य अधिकृत रूप से किसी भी धर्म को राजकीय धर्म के रूप में बढ़ावा नहीं देता। इसके बारे में हम अगले अध्याय में और विस्तार से पढ़ेंगे।

अब आप इस बात को समझने लगे होंगे कि कभी–कभी देश का इतिहास यह तय कर देता है कि देश का संविधान कैसा होगा। संविधान उन आदर्शों को तय करने में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है जिन्हें हम अपने देश और अपने प्रतिनिधियों के ज़रिए साकार करना चाहते हैं। जिस तरह फुटबॉल के नियम बदलते ही खेल बदल जाता है, उसी तरह जिन देशों के संविधान में भारी बदलाव आ जाते हैं वहाँ देश का बुनियादी स्वरूप भी बदल जाता है। हम नेपाल में यह देख चुके हैं। वहाँ लोकतांत्रिक समाज बनाने की ज़रूरत के साथ ही एक नए संविधान की ज़रूरत भी पैदा हो गई है।

ऊपर हमने भारतीय संविधान के जिन आयामों का ज़िक्र किया है वे कई बार काफ़ी जटिल दिखाई देते हैं और उन्हें समझने में मुश्किल भी महसूस होती है। लेकिन अभी आप इस बारे में ज़्यादा फ़िक्र न करें। इस पुस्तक के बाकी अध्यायों में और अगली कक्षाओं में भारतीय संविधान के इन सभी पहलुओं के बारे में आप लगातार सीखते जाएँगे। ठोस रूप से उनका अर्थ जान पाएँगे।

उपरोक्त तस्वीरों में संविधान सभा के विभिन्न सदस्य अपनी आखिरी बैठक में संविधान की एक प्रति पर हस्ताक्षर कर रहे हैं। सबसे ऊपर वाले चित्र में प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू दस्तखत कर रहे हैं। दूसरे चित्र में संविधान सभा के अध्यक्ष डॉ. राजेन्द्र प्रसाद हैं। सबसे निचले चित्र में दाएँ से बाएँ क्रम में ये लोग दिखाई दे रहे हैं : श्री जयरामदास दौलतराम, खाद्य एवं कृषि मंत्री; राजकुमारी अमृत कौर, स्वास्थ्य मंत्री; डॉ. जॉन मथाई, वित्त मंत्री; सरदार वल्लभभाई पटेल, उपप्रधानमंत्री तथा उनके पीछे श्री जगजीवन राम, श्रम मंत्री खड़े हैं।

संविधान में मूल कर्त्तव्यों का भी उल्लेख किया गया है। अपने शिक्षक की सहायता से पता लगाएँ कि ये कर्त्तव्य कौन से हैं और लोकतंत्र में नागरिकों द्वारा इन कर्त्तव्यों का पालन करना क्यों महत्त्वपूर्ण है?

अभ्यास

1. किसी लोकतांत्रिक देश को संविधान की ज़रूरत क्यों पड़ती है?

2. नीचे दिए गए दो दस्तावेज़ों के हिस्सों को देखिए। पहला कॉलम 1990 का नेपाल के संविधान का है। दूसरा कॉलम नेपाल के ताज़ा अंतरिम संविधान में से लिया गया है।

1990 का नेपाल का संविधान **भाग-7: कार्यपालिका**	**2007 अंतरिम संविधान** **भाग-5: कार्यपालिका**
अनुच्छेद 35: कार्यकारी शक्तियाँ नेपाल अधिराज्य की कार्यकारी शक्तियाँ महामहिम नरेश एवं मंत्रिपरिषद् में निहित होंगी।	*अनुच्छेद 37: कार्यकारी शक्तियाँ* नेपाल की कार्यकारी शक्तियाँ मंत्रिपरिषद् में निहित होंगी।

नेपाल के इन दोनों संविधानों में 'कार्यकारी शक्ति' के उपयोग में क्या फ़र्क दिखाई देता है? इस बात को ध्यान में रखते हुए क्या आपको लगता है कि नेपाल को एक नए संविधान की ज़रूरत है? क्यों?

3. अगर निर्वाचित प्रतिनिधियों की शक्ति पर कोई अंकुश न होता तो क्या होता?

4. निम्नलिखित स्थितियों में अल्पसंख्यक कौन हैं? इन स्थितियों में अल्पसंख्यकों के विचारों का सम्मान करना क्यों महत्त्वपूर्ण है। इसका एक-एक कारण बताइए।

   (क) एक स्कूल में 30 शिक्षक हैं और उनमें से 20 पुरुष हैं।

   (ख) एक शहर में 5 प्रतिशत लोग बौद्ध धर्म को मानते हैं।

   (ग) एक कारखाने के भोजनालय में 80 प्रतिशत कर्मचारी शाकाहारी हैं।

   (घ) 50 विद्यार्थियों की कक्षा में 40 विद्यार्थी संपन्न परिवारों से हैं।

5. नीचे दिए गए बाएँ कॉलम में भारतीय संविधान के मुख्य आयामों की सूची दी गई है। दूसरे कॉलम में प्रत्येक आयाम के सामने दो वाक्यों में लिखिए कि आपकी राय में यह आयाम क्यों महत्त्वपूर्ण है–

मुख्य आयाम	**महत्त्व**
संघवाद	
शक्तियों का बँटवारा	
मौलिक अधिकार	
संसदीय शासन पद्धति	

6. इस नक्शे में निम्नलिखित देशों पर रंग भरें–

(क) भारत को लाल रंग से भरें

(ख) नेपाल को हरे रंग से भरें

(ग) बांग्लादेश को पीले रंग से भरें

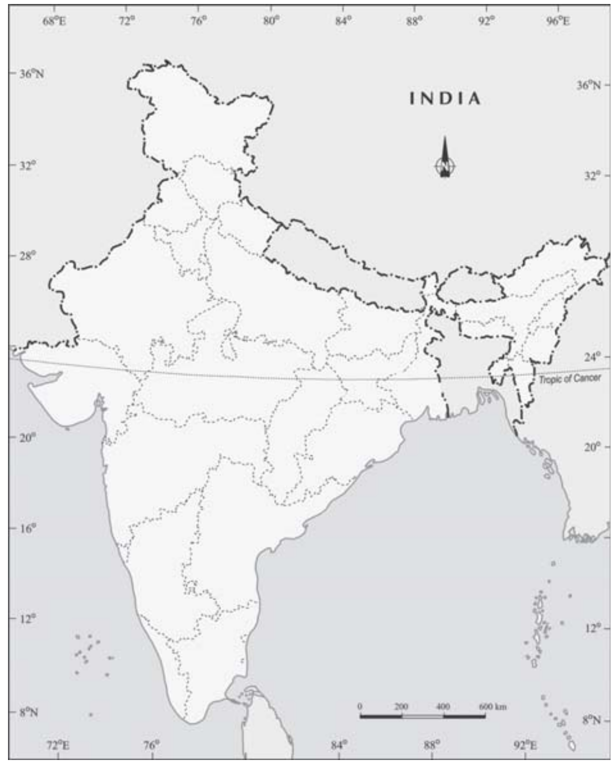

शब्द संकलन

मनमानापन – जब सब कुछ किसी के व्यक्तिगत फ़ैसलों या पसंद–नापसंद से चलने लगता है तो उसे मनमानापन कहा जाता है। जहाँ नियम तय नहीं किए गए हों या जहाँ फैसलों का कोई आधार नहीं है, उसे ही मनमाना कहा जा सकता है।

आदर्श– जब कोई लक्ष्य या सिद्धांत अपने सबसे शुद्ध या सर्वश्रेष्ठ रूप में होता है तो उसे आदर्श कहा जाता है।

भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन– भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन का उदय उन्नीसवीं सदी में हुआ था। इस आंदोलन में हज़ारों मर्द–औरत ब्रिटिश शासन से लोहा लेने के लिए एकजुट हो गए थे। यह आंदोलन 1947 में भारत की आज़ादी में परिणत हुआ। इसी वर्ष की इतिहास की पाठ्यपुस्तक में इस आंदोलन को आप और अच्छी तरह से जानेंगे।

राज्य व्यवस्था (Polity)– इसका आशय एक ऐसे समाज से है जिसकी राजनीतिक संरचना व्यवस्थित है। भारत एक लोकतांत्रिक राज्यव्यवस्था है।

संप्रभु– इस अध्याय के संदर्भ में स्वतंत्र जनता को संप्रभु कहा गया है।

मानव व्यापार– राष्ट्रीय सीमाओं के आर–पार विभिन्न चीज़ों की ग़ैरकानूनी खरीद–बिक्री को अवैध व्यापार कहा जाता है। इस अध्याय में जिन मौलिक अधिकारों की चर्चा की गई है, उनके संबंध में अवैध व्यापार का मतलब औरतों और बच्चों की ग़ैरकानूनी ख़रीद–फ़रोख़्त से है जिसे मानव व्यापार कहा जाता है।

निरंकुशता– इसका मतलब सत्ता या अधिकारों के क्रूर एवं अन्यायपूर्ण इस्तेमाल से है।

अध्याय 2

धर्मनिरपेक्षता की समझ

कल्पना कीजिए कि आप हिंदू या मुसलमान हैं और अमेरिका के किसी ऐसे भाग में रहते हैं जहाँ ईसाई कट्टरपंथी बहुत ताकतवर हैं। मान लीजिए कि अमेरिका का नागरिक होते हुए भी कोई आपको किराये पर मकान नहीं देना चाहता। आपको कैसा महसूस होगा? क्या आपको गुस्सा नहीं आएगा? अगर आप इस भेदभाव के खिलाफ़ शिकायत करें और जवाब में आपको कहा जाए कि यह देश तुम्हारा नहीं है, तुम भारत लौट जाओ, तो आपको कैसा लगेगा? क्या आपको बुरा नहीं लगेगा? आपका यह गुस्सा दो रूप ले सकता है। एक, हो सकता है आप प्रतिक्रिया में यह कहें कि जहाँ हिंदू और मुसलमानों की तादाद ज़्यादा है वहाँ ईसाइयों के साथ भी इसी तरह का बर्ताव होना चाहिए। यह बदला लेने वाली बात है। या फिर आप यह राय बना सकते हैं कि सबको इंसाफ़ मिलना चाहिए। इस सोच के आधार पर आप संघर्ष का रास्ता चुनकर इस बात के लिए आवाज़ उठा सकते हैं कि धर्म और आस्था के आधार पर किसी के साथ भेदभाव नहीं होना चाहिए। यह सोच इस मान्यता पर आधारित है कि धर्म से संबंधित किसी भी तरह का वर्चस्व खत्म होना चाहिए। यही धर्मनिरपेक्षता का मूलमंत्र है। इस अध्याय में हम यही चर्चा करेंगे कि भारतीय संदर्भ में इसका क्या अर्थ है।

इतिहास में हमें धर्म के आधार पर भेदभाव, बेदखली और अत्याचार के अनेक उदाहरण मिलते हैं। शायद आपने पढ़ा होगा कि हिटलर ने जर्मनी में यहूदियों पर किस तरह के अत्याचार किए। वहाँ कई लाख लोगों को केवल धर्म के आधार पर मार दिया गया था। लेकिन अब यहूदी धर्म को मानने वाले इजरायल में भी मुसलमान और ईसाई अल्पसंख्यकों के साथ अमानवीय व्यवहार किया जा रहा है। सऊदी अरब में ग़ैर-मुसलमानों को मंदिर या गिरजाघर बनाने की छूट नहीं है। न ही इन धर्मों के लोग वहाँ पूजा-अर्चना के लिए किसी सार्वजनिक स्थल पर इकट्ठा हो सकते हैं।

इस अध्याय की भूमिका को एक बार फिर पढ़िए। आपको ऐसा क्यों लगता है कि बदले की भावना इस समस्या से निपटने का सही रास्ता नहीं हो सकती? अगर सारे समूह बदले के रास्ते पर चल पड़ें तो क्या होगा?

इन सभी उदाहरणों में एक धर्म के लोग अन्य धार्मिक समुदायों के लोगों के साथ या तो भेदभाव कर रहे हैं या उनका उत्पीड़न कर रहे हैं। भेदभाव की ऐसी घटनाएँ तब और ज़्यादा बढ़ जाती हैं जब दूसरे धर्मों के स्थान पर राज्य किसी एक धर्म को अधिकृत मान्यता प्रदान कर देता है। ज़ाहिर है कोई भी व्यक्ति अपने धर्म की वज़ह से न तो भेदभाव का शिकार होना चाहता है और न ही किसी दूसरे धर्म का दबदबा झेलना चाहता है। भारत में क्या राज्य धर्म के आधार पर किसी नागरिक के साथ भेदभाव कर सकता है?

धर्मनिरपेक्षता क्या है?

पिछले अध्याय में आपने पढ़ा कि भारतीय संविधान में मौलिक अधिकारों की व्यवस्था की गई है। ये अधिकार न केवल राज्य की सत्ता से हमें बचाते हैं बल्कि बहुमत की निरंकुशता से भी हमारी रक्षा करते हैं। भारतीय संविधान सभी को अपने धार्मिक विश्वासों और तौर-तरीकों को अपनाने की पूरी छूट देता है। सबके लिए समान धार्मिक स्वतंत्रता के इस विचार को ध्यान में रखते हुए भारतीय राज्य ने धर्म और राज्य की शक्ति को एक-दूसरे से अलग रखने की रणनीति अपनाई है। धर्म को राज्य से अलग रखने की इसी अवधारणा को धर्मनिरपेक्षता कहा जाता है।

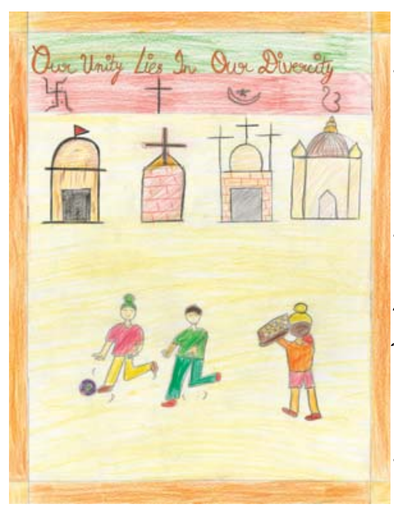

तन्वी, अभिलाषा और स्नेहल, VII बी, सृजन स्कूल, दिल्ली

इस अध्याय में तीन चित्र आप ही के उम्र के विद्यार्थियों ने बनाए हैं। उन्हें धार्मिक सहिष्णुता पर चित्र बनाने के लिए कहा गया था।

धर्म को राज्य से अलग रखना महत्त्वपूर्ण क्यों है?

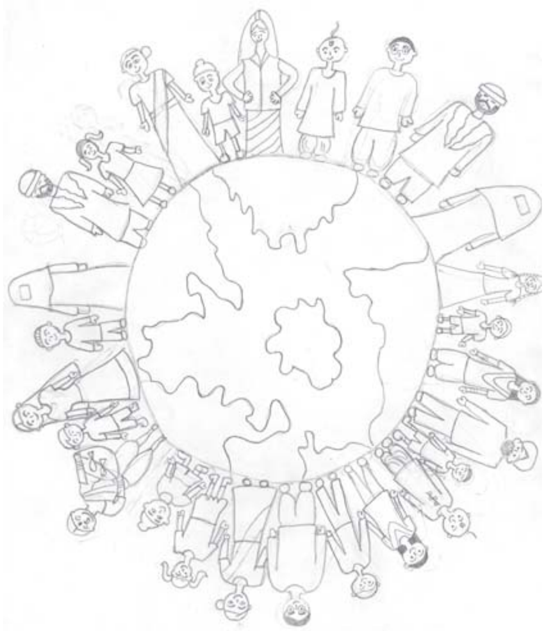

अक्षिता जैन, V, सृजन स्कूल, दिल्ली

जैसी कि पीछे चर्चा की गई है, धर्मनिरपेक्षता का सबसे महत्त्वपूर्ण पहलू है धर्म को राजसत्ता से अलग करना। एक लोकतांत्रिक देश में यह बहुत ज़रूरी है। दुनिया के तकरीबन सारे देशों में एक से ज़्यादा धर्मों के लोग साथ-साथ रहते हैं। ज़ाहिर है हर देश में किसी एक धर्म के लोगों की संख्या ज़्यादा होगी। अब अगर बहुमत वाले धर्म के लोग राज्य सत्ता में पहुँच जाते हैं तो उनका समूह दूसरे धर्मों के खिलाफ़ भेदभाव करने और उन्हें परेशान करने के लिए इस सत्ता और राज्य के आर्थिक संसाधनों का इस्तेमाल कर सकता है। बहुमत की इस निरंकुशता के चलते धार्मिक अल्पसंख्यकों के साथ भेदभाव हो सकता है। उनके साथ ज़ोर-ज़बरदस्ती हो सकती है। यहाँ तक कि कई बार उनकी हत्या भी कर दी जाती है। बहुमत चाहे तो अल्पसंख्यकों को उनके धर्म के अनुसार जीने से रोक सकता है। धर्म के आधार पर किसी भी तरह का भेदभाव उन अधिकारों का उल्लंघन है जो एक लोकतांत्रिक समाज किसी भी धर्म को मानने वाले अपने प्रत्येक नागरिक को प्रदान करता है। लिहाजा बहुमत की निरंकुशता और उसके कारण मौलिक अधिकारों का हनन, वह अहम कारण है जिसके चलते लोकतांत्रिक समाजों में राज्य और धर्म को अलग-अलग रखना इतना महत्त्वपूर्ण माना जाता है।

लोकतांत्रिक समाजों में धर्म को राज्य से अलग रखने का एक महत्त्वपूर्ण कारण यह है कि हमें लोगों के धार्मिक चुनाव के अधिकार की रक्षा करनी है। इसका अर्थ यह है कि देश के किसी भी व्यक्ति को एक धर्म से निकलने और दूसरे धर्म को अपनाने या धार्मिक उपदेशों की अलग ढंग से व्याख्या करने की स्वतंत्रता होती है। आइए इस बात को और अच्छी तरह समझने के लिए छुआछूत की प्रथा पर विचार करें। संभव है आपको हिंदुओं के बीच प्रचलित यह प्रथा अच्छी न लगती हो। इसका मतलब है कि आप इसे बदलने की कोशिश भी करेंगे। लेकिन अगर राज्य की सत्ता ऐसे हिंदुओं के हाथ में है जो छुआछूत को सही मानते हैं तो क्या आप आसानी से इस प्रथा को बदल पाएँगे? अगर आप प्रभुत्वशाली धार्मिक समुदाय के सदस्य हैं तो भी आपको अपने समुदाय के ही दूसरे लोगों की ओर से भारी विरोध का सामना करना पड़ सकता है। राज्य सत्ता पर नियंत्रण रखने वाले ऐसे सदस्य कहेंगे कि हिंदुत्व की केवल एक ही व्याख्या होती है और उसकी कोई और व्याख्या करने का तुम्हें कोई अधिकार नहीं है।

कक्षा में चर्चा करें– क्या एक ही धर्म के भीतर अलग-अलग दृष्टिकोण हो सकते हैं?

पिंकी, VI G, सर्वोदय कन्या विद्यालय, दिल्ली

भारतीय धर्मनिरपेक्षता क्या है?

भारतीय संविधान में कहा गया है कि भारतीय राज्य धर्मनिरपेक्ष रहेगा। हमारे संविधान के अनुसार, केवल धर्मनिरपेक्ष राज्य ही अपने उद्देश्यों को साकार करते हुए निम्नलिखित बातों का खयाल रख सकता है कि–

1. कोई एक धार्मिक समुदाय किसी दूसरे धार्मिक समुदाय को न दबाए;
2. कुछ लोग अपने ही धर्म के अन्य सदस्यों को न दबाएँ; और
3. राज्य न तो किसी खास धर्म को थोपेगा और न ही लोगों की धार्मिक स्वतंत्रता छीनेगा।

इस तरह के दबदबे को रोकने के लिए भारतीय राज्य कई तरह से काम करता है। पहला तरीका यह है कि वह खुद को धर्म से दूर रखता है। भारतीय राज्य की बागडोर न तो किसी एक धार्मिक समूह के हाथों में है और न ही राज्य किसी एक धर्म को समर्थन देता है। भारत में कचहरी, थाने, सरकारी विद्यालय और दफ़्तर जैसे सरकारी संस्थानों में किसी खास धर्म को प्रोत्साहन देने या उसका प्रदर्शन करने की अपेक्षा नहीं की जाती है।

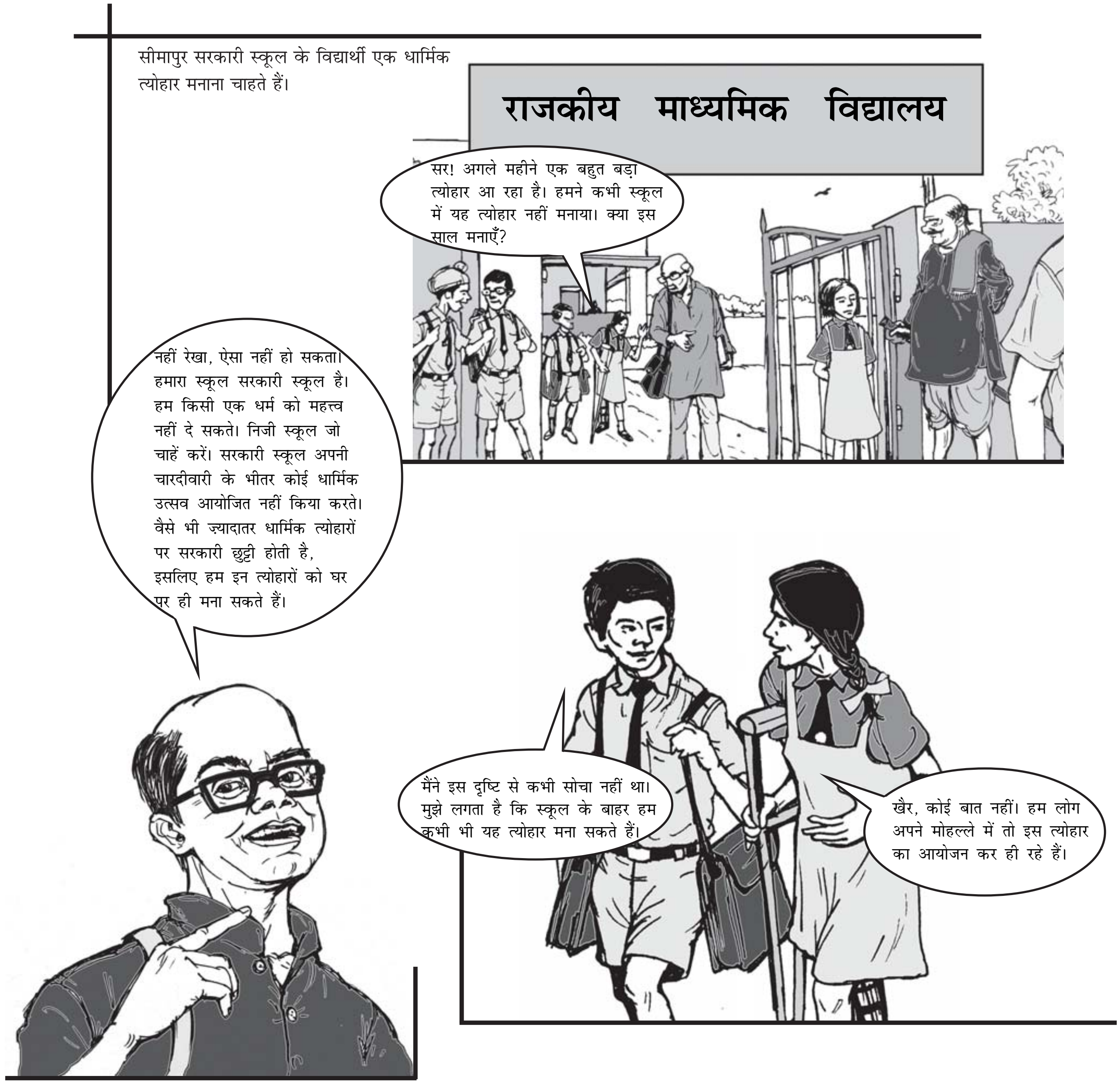

उपरोक्त चित्रकथा–पट्ट में स्कूल के भीतर किसी धार्मिक त्योहार का आयोजन सभी धर्मों के साथ एक जैसा व्यवहार करने की सरकारी नीति के खिलाफ़ होता। सरकारी स्कूल अपनी प्रातःकालीन प्रार्थनाओं या धार्मिक आयोजनों के ज़रिए किसी एक धर्म को बढ़ावा नहीं दे सकते। यह नियम निजी स्कूलों पर लागू नहीं है।

उपरोक्त चित्रकथा–पट्ट में शिक्षक ने जो उत्तर दिया है उस पर चर्चा करें।

धार्मिक वर्चस्व को रोकने के लिए भारतीय धर्मनिरपेक्षता का दूसरा तरीका है अहस्तक्षेप की नीति। इसका मतलब है कि सभी धर्मों की भावनाओं का सम्मान करने और धार्मिक क्रियाकलापों में दखल न देने के लिए, राज्य कुछ खास धार्मिक समुदायों को कुछ विशेष छूट देता है।

सरकारी स्कूलों में अकसर कई धर्मों के बच्चे आते हैं। इस बात को ध्यान में रखते हुए धर्मनिरपेक्ष राज्य के तीन उद्देश्यों को दोबारा पढ़िए। आप इस बारे में दो वाक्य लिखिए कि सरकारी स्कूलों को किसी एक धर्म को बढ़ावा क्यों नहीं देना चाहिए।

इस चित्रकथा-पट्ट में सिख युवक परमजीत को हैलमेट पहनने की ज़रूरत नहीं है। कारण यह कि भारतीय राज्य इस बात को मान्यता देता है कि पगड़ी पहनना सिख धर्म की प्रथाओं के मुताबिक महत्त्वपूर्ण है। लिहाज़ा इन धार्मिक आस्थाओं में दखलंदाज़ी से बचने के लिए राज्य ने कानून में रियायत दे दी है।

धार्मिक वर्चस्व को रोकने के लिए भारतीय धर्मनिरपेक्षता का तीसरा तरीका हस्तक्षेप का तरीका है। इसी अध्याय में पीछे आप छुआछूत के बारे में पढ़ चुके हैं। यह इस बात का उपयुक्त उदाहरण है कि किस

तरह एक ही धर्म के लोग ('ऊँची जाति' के हिंदू) अपने ही धर्म के अन्य सदस्यों (कुछ 'निचली जातियों') को दबाते हैं। धर्म के नाम पर अलग-थलग करने और भेदभाव को रोकने के लिए भारतीय संविधान ने छुआछूत पर पाबंदी लगाई है। इस उदाहरण में राज्य धर्म के नाम पर अलग-थलग करने और भेदभाव को बढ़ावा देने वाली उस प्रथा को खत्म करने के लिए धर्म में हस्तक्षेप कर रहा है जो 'निचली जातियों' के लोगों के मौलिक अधिकारों का हनन करता है क्योंकि वे भी इसी देश के नागरिक हैं। इसी तरह माँ-बाप की संपत्ति में बराबर हिस्से के अधिकार का सम्मान करने के लिए राज्य को समुदायों के धर्म पर आधारित 'निजी कानूनों' में भी हस्तक्षेप करना पड़ सकता है।

राज्य का हस्तक्षेप सहायता के रूप में भी हो सकता है। भारतीय संविधान धार्मिक समुदायों को अपने स्कूल और कॉलेज खोलने का अधिकार देता है। गैर-प्राथमिकता के आधार पर राज्य से उन्हें सीमित आर्थिक सहायता भी मिलती है।

भारतीय धर्मनिरपेक्षता दूसरे लोकतांत्रिक देशों की धर्मनिरपेक्षता से किस तरह अलग है?

ऊपर दिए गए तीनों उद्देश्य दुनिया के अन्य धर्मनिरपेक्ष लोकतांत्रिक देशों के संविधान में दिए गए उद्देश्यों से मिलते-जुलते हैं। अमेरिकी संविधान में हुए पहले संविधान संशोधन के ज़रिए विधायिका को ऐसे कानून बनाने से रोक दिया गया है जो "धार्मिक संस्थानों का पक्ष लेते" हों या "धार्मिक स्वतंत्रता को रोकते" हों। इसका मतलब है कि विधायिका किसी भी धर्म को राजकीय धर्म घोषित नहीं कर सकती, न ही विधायिका किसी एक धर्म को ज़्यादा प्राथमिकता दे सकती है। संयुक्त राज्य अमेरिका में राज्य और धर्म के पृथक्करण का मतलब है कि राज्य और धर्म, दोनों ही एक-दूसरे के मामलों में किसी तरह का दखल नहीं दे सकते।

संयुक्त राज्य अमेरिका में सरकारी स्कूलों के ज़्यादातर बच्चे सुबह सबसे पहले 'वफ़ादारी की शपथ' (Pledge of allegiance) लेते हैं। इस शपथ में "ईश्वर की छत्रछाया" शब्द आते हैं। साठ साल से भी पहले ही वहाँ यह तय कर दिया गया था कि अगर यह शपथ किसी बच्चे की धार्मिक आस्था को ठेस पहुँचाती है तो उसे इसको दोहराने की ज़रूरत नहीं है। इसके बावजूद वहाँ "ईश्वर की छत्रछाया" वाक्यांश को कई बार कानूनी चुनौती दी जा चुकी है। चुनौती देने वालों का कहना है कि यह वाक्यांश अमेरिकी संविधान के पहले संशोधन में चर्च और राज्य के बीच किए गए पृथक्करण का उल्लंघन करता है। उपरोक्त चित्र में अमेरकिा के सरकारी स्कूल के बच्चे 'वफादारी की शपथ' लेते हुए दिखाई दे रहे हैं।

शायद आप समझ गए होंगे कि भारतीय धर्मनिरपेक्षता और अमेरिकी धर्मनिरपेक्षता के बीच एक अहम फ़र्क है। ऐसा इसलिए है कि अमेरिकी धर्मनिरपेक्षता में धर्म और राज्य के बीच स्पष्ट अलगाव के विपरीत भारतीय धर्मनिरपेक्षता में राज्य को धार्मिक मामलों में हस्तक्षेप करने की छूट दी गई है। आप पढ़ चुके हैं कि किस तरह भारतीय

संविधान ने छुआछूत को खत्म करने के लिए हिंदू धार्मिक क्रियाकलापों में हस्तक्षेप किया है। भारतीय धर्मनिरपेक्षता में राज्य धर्म से अलग तो है, लेकिन धर्म से उसका फ़ासला सैद्धांतिक है। इसका मतलब यह है कि संविधान में दिए गए आदर्शों के आधार पर राज्य किसी भी धर्म के मामलों में हस्तक्षेप कर सकता है। ये आदर्श वह कसौटी मुहैया कराते हैं जिसके ज़रिए इस बारे में फैसला लिया जा सकता है कि हमारा राज्य धर्मनिरपेक्ष सिद्धांतों के अनुरूप काम कर रहा है या नहीं।

भारतीय राज्य धर्मनिरपेक्ष है और धार्मिक वर्चस्व को रोकने के लिए कई तरह से काम करता है। भारतीय संविधान अपने नागरिकों को मौलिक अधिकारों का आश्वासन देता है। ये मूलभूल अधिकार इन धर्मनिरपेक्ष सिद्धांतों पर आधारित हैं। लेकिन इसका यह मतलब नहीं है कि भारतीय समाज में इन अधिकारों का उल्लंघन बंद हो गया है। बल्कि वास्तव में ऐसे उल्लंघनों की वज़ह से ही हमारे सामने संवैधानिक व्यवस्था की ज़रूरत बनी हुई है। इस तरह के अधिकारों के होने का ज्ञान हमें इन अधिकारों के उल्लंघन के प्रति संवेदनशील बनाता है। जब कभी ऐसा होता है तो हमें इसके खिलाफ़ सही कदम उठाने की क्षमता भी उसी से मिलती है।

क्या आप भारत के किसी भी भाग से हाल की कोई ऐसी घटना बता सकते हैं जहाँ संविधान के धर्मनिरपेक्ष आदर्शों का उल्लंघन किया गया हो और लोगों को उनके धर्म की वज़ह से प्रताड़ित किया गया हो या मारा गया हो?

फ़रवरी 2004 में फ्रांस में एक कानून बनाया गया। इस कानून में प्रावधान किया गया कि कोई भी विद्यार्थी इस्लामी बुरका, यहूदी टोपी या बड़े-बड़े ईसाई क्रॉस जैसे धार्मिक अथवा राजनीतिक चिह्नों या प्रतीकों को धारण करके स्कूल में नहीं आएगा। फ्रांस में रहने वाले उन आप्रवासियों ने इस कानून का काफ़ी विरोध किया। वे मुख्यतया अल्जीरिया, ट्यूनीशिया और मोरक्को आदि उन देशों से आए थे जो पहले फ्रांस के उपनिवेश थे। 1960 के दशक में फ्रांस में मज़दूरों की कमी हो गई थी। उस समय इन आप्रवासियों को फ्रांस आकर काम करने के लिए वीज़ा यानी प्रवेश पत्र दिए गए थे। इन आप्रवासियों की बेटियाँ स्कूल में अकसर सिर पर रूमाल बाँधकर जाती हैं। लेकिन इस नए कानून के लागू होने के बाद उन्हें सिर पर रूमाल बाँधने के कारण स्कूलों से निकाल दिया गया है।

अभ्यास

1. अपने आस-पड़ोस में प्रचलित धार्मिक क्रियाकलापों की सूची बनाइए। आप विभिन्न प्रकार की प्रार्थनाओं, विभिन्न देवताओं की पूजा विभिन्न पवित्र स्थानों, विभिन्न प्रकार के धार्मिक संगीत और गायन आदि को देख सकते हैं। क्या इससे धार्मिक क्रियाकलापों की स्वतंत्रता का पता चलता है?

2. अगर किसी धर्म के लोग यह कहते हैं कि उनका धर्म नवजात शिशुओं को मारने की छूट देता है तो क्या सरकार किसी तरह का दखल देगी या नहीं? अपने उत्तर के समर्थन में कारण बताइए।

3. इस तालिका को पूरा कीजिए-

उद्देश्य	**यह महत्त्वपूर्ण क्यों है?**	**इस उद्देश्य के उल्लंघन का एक उदाहरण**
एक धार्मिक समुदाय दूसरे समुदाय पर वर्चस्व नहीं रखता		
राज्य न तो किसी धर्म को थोपता है और न ही लोगों की धार्मिक स्वतंत्रता छीनता है		
एक ही धर्म के कुछ लोग अपने ही धर्म के दूसरे लोगों को न दबाएँ		

4. अपने स्कूल की छुट्टियों के वार्षिक कैलेंडर को देखिए। उनमें से कितनी छुट्टियाँ विभिन्न धर्मों से संबंधित हैं? इससे क्या संकेत मिलता है?

5. एक ही धर्म के भीतर अलग-अलग दृष्टिकोणों के कुछ उदाहरण दें?

6. भारतीय राज्य धर्म से फ़ासला भी रखता है और उसमें हस्तक्षेप भी करता है। यह उलझाने वाला विचार लग सकता है। इस पर कक्षा में एक बार फिर चर्चा कीजिए। चर्चा के लिए इस अध्याय में दिए गए उदाहरणों के अलावा आप अपनी जानकारी के अन्य उदाहरणों का भी सहारा ले सकते हैं।

7. साथ में दिया गया यह पोस्टर 'शांति' के महत्त्व को रेखांकित करता है। इस पोस्टर में कहा गया है कि "शांति कभी न खत्म होने वाली प्रक्रिया है... यह हमारी आपसी भिन्नताओं और साझा हितों को नज़रअंदाज़ करके नहीं चल सकती।" ये वाक्य क्या बताते हैं? अपने शब्दों में लिखिए। धार्मिक सहिष्णुता से इसका क्या संबंध है?

इस अध्याय में आप ही की उम्र के विद्यार्थियों ने भी धार्मिक सहिष्णुता पर तीन तस्वीरें बनाई हैं। धार्मिक सहिष्णुता को ध्यान में रखते हुए अपने साथियों को दिखाने के लिए खुद एक पोस्टर बनाइए।

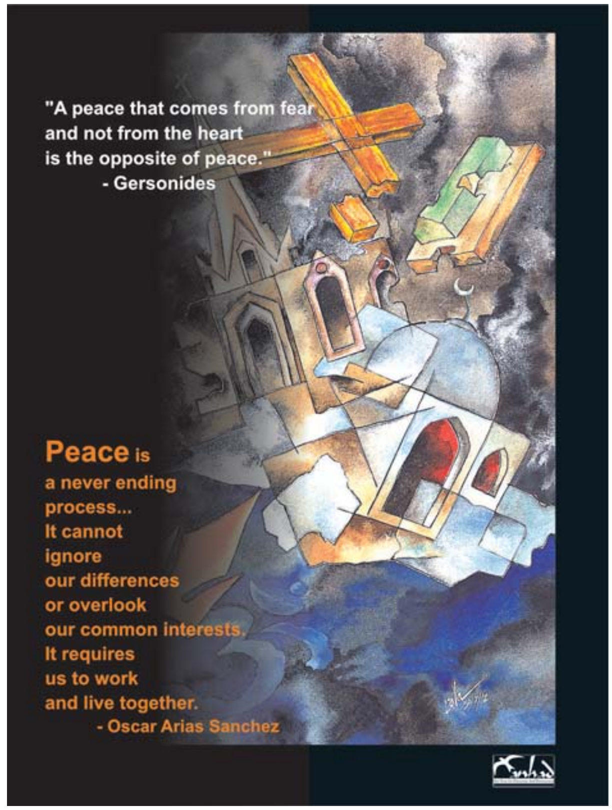

शब्द संकलन

ज़ोर-ज़बरदस्ती– इसका मतलब है किसी को कोई चीज़ करने के लिए मजबूर करना। इस अध्याय के संदर्भ में यह शब्द राज्य जैसी किसी कानूनी सत्ता द्वारा ताकत के इस्तेमाल से है।

व्याख्या की स्वतंत्रता– सभी व्यक्तियों को अपने हिसाब से चीज़ों को समझने की छूट होती है। इस अध्याय में व्याख्या की स्वतंत्रता का मतलब है कि हरेक व्यक्ति अपने धर्म की समझ और अर्थ खुद तय कर सकता है।

हस्तक्षेप– प्रस्तुत अध्याय में इसका मतलब है संविधान के सिद्धांतों के अनुरूप किसी मामले को प्रभावित करने के लिए राज्य की ओर से होने वाला प्रयास।

इकाई दो

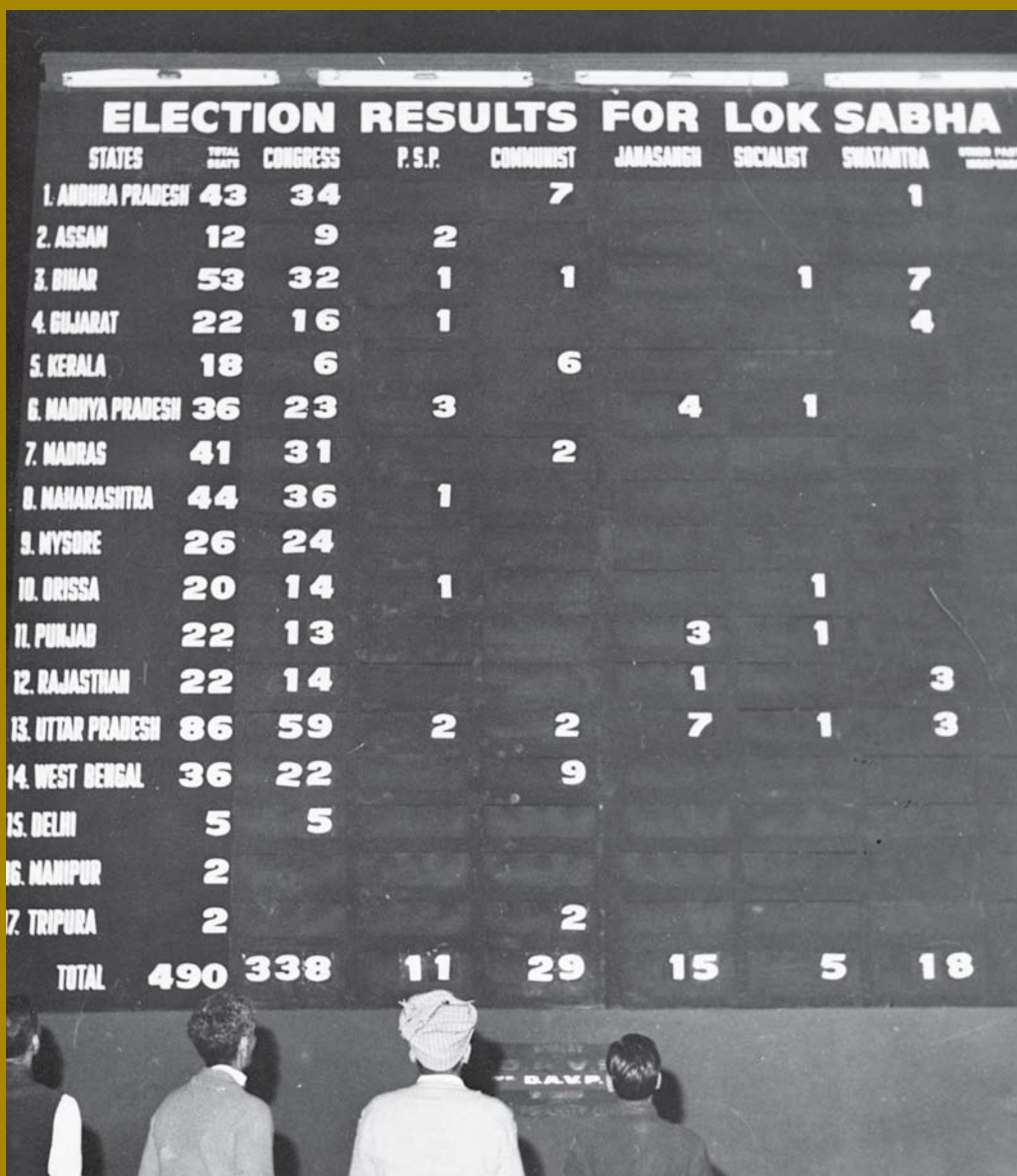
ELECTION RESULTS FOR LOK SABHA
STATES TOTAL SEATS CONGRESS P.S.P. COMMUNIST JANASANGH SOCIALIST SWATANTRA
1. ANDHRA PRADESH 43 34 7 1
2. ASSAM 12 9 2
3. BIHAR 53 32 1 1 1 7
4. GUJARAT 22 16 1 4
5. KERALA 18 6 6
6. MADHYA PRADESH 36 23 3 4 1
7. MADRAS 41 31 2
8. MAHARASHTRA 44 36 1
9. MYSORE 26 24
10. ORISSA 20 14 1 1
11. PUNJAB 22 13 3 1
12. RAJASTHAN 22 14 1 3
13. UTTAR PRADESH 86 59 2 2 7 1 3
14. WEST BENGAL 36 22 9
15. DELHI 5 5
16. MANIPUR 2
17. TRIPURA 2 2
TOTAL 490 338 11 29 15 5 18

शिक्षकों के लिए

कक्षा 6 और 7 की पाठ्यपुस्तकों में शासन व्यवस्था के बारे में बात की गई थी। यह उसी क्रम में अगली कड़ी है। लिहाज़ा अब तक जिन विचारों पर चर्चा की गई है उनको संक्षेप में दोहरा लेना अच्छा रहेगा, खासतौर से निर्वाचन, प्रतिनिधित्व और सहभागिता से जुड़े विचारों को। अगर कक्षा में वास्तविक जीवन के उदाहरणों का इस्तेमाल किया जाए तो बच्चे इन विचारों को और अच्छी तरह समझ सकते हैं। इस प्रसंग में अखबार और टेलीविजन रिपोर्टों का भी इस्तेमाल किया जा सकता है।

अध्याय 3 में संसद के कुछ कार्यों पर चर्चा की गई है। ये कार्य संसदीय लोकतंत्र के विचार से किस तरह जुड़ते हैं, इस बात पर खास ज़ोर दिया जाना चाहिए। इसीलिए नागरिकों की अहम भूमिका को समझाना और विद्यार्थियों को इसके बारे में अपनी राय व्यक्त करने का मौका देना बहुत महत्त्वपूर्ण है। कई विद्यार्थी राजनीतिक प्रक्रिया के बारे में सनक भरा या नाउम्मीदी का रवैया लिये होते हैं। ऐसी सूरत में शिक्षक के तौर पर आपकी भूमिका इस निराशा को खारिज़ करने या बच्चों के सुर में सुर मिलाने की नहीं होगी। आपको उन्हें यह बताना है कि संविधान का सही उद्देश्य क्या है।

अध्याय 4 कानूनों की समझ पर केंद्रित है। बच्चों को कानूनों के बारे में विशेष जानकारी नहीं होती। कानूनों के बारे में उन्हें समझाने के लिए ज़्यादातर उदाहरण उनके आसपास के माहौल से लेने पड़ेंगे। तभी वे यह समझ सकते हैं कि कानून सबके लिए बराबर होते हैं। अध्याय की शुरुआत में चर्चा की गई है कि कानून का यह शासन किस तरह विकसित हुआ और राष्ट्रवादियों ने ब्रिटिश कानूनों के मनमानेपन का किस तरह विरोध किया।

अध्याय 4 में दिए गए चित्रकथा-पट्ट में बताया गया है कि नया कानून किस तरह बनता है। इस चित्रकथा-पट्ट का मुख्य ज़ोर संसद में चलने वाली प्रक्रियाओं पर नहीं है। यह इस बात को दर्शाता है कि किसी महत्त्वपूर्ण सामाजिक मुद्दे को कानून का रूप देने में आम लोग कितनी अहम भूमिका निभाते हैं। इस अध्याय में उल्लिखित कानूनों के अलावा आप किसी नए/विचाराधीन/प्रस्तावित कानून का भी उदाहरण दे सकते हैं ताकि विद्यार्थी उसके संदर्भ में लोगों की भूमिका को समझ पाएँ।

अध्याय के आखिर में अलोकप्रिय कानूनों की चर्चा की गई है। इसका मतलब ऐसे कानूनों से है जो आबादी के कुछ हिस्सों के मौलिक अधिकारों को बाधित करते हैं। इतिहास में हमें ऐसे बहुत सारे समूह दिखाई देते हैं जिन्होंने अन्यायपूर्ण दिखने वाले कानूनों का विरोध किया था। कोई कानून किस आधार पर अलोकप्रिय हो सकता है, इस बात की चर्चा के लिए इतिहास के इन उदाहरणों का सहारा लें। विद्यार्थियों को भारतीय संदर्भ में ऐसे और उदाहरण ढूँढ़ने और अध्याय 1 में दिए गए मौलिक अधिकारों की कसौटी का इस्तेमाल करते हुए कक्षा में उन पर चर्चा करने का मौका दें।

अध्याय 3

हमें संसद क्यों चाहिए?

हम भारतीयों को इस बात का गर्व है कि हम एक लोकतांत्रिक व्यवस्था का हिस्सा हैं। इस अध्याय में हम निर्णय प्रक्रिया में सहभागिता और लोकतांत्रिक सरकार के लिए नागरिकों की सहमति के महत्त्व जैसे विचारों के आपसी संबंधों को समझने की कोशिश करेंगे।

यही वे तत्त्व हैं जो सम्मिलित रूप से भारत में एक लोकतांत्रिक व्यवस्था का निर्माण करते हैं। इस बात की सबसे अच्छी अभिव्यक्ति संसद के रूप में मिलती है। इस अध्याय में हम यह देखेंगे कि किस तरह हमारी संसद देश के नागरिकों को निर्णय प्रक्रिया में हिस्सा लेने और सरकार पर अंकुश रखने में मदद देती है। इसी आधार पर संसद भारतीय लोकतंत्र का सबसे महत्त्वपूर्ण प्रतीक और संविधान का केंद्रीय तत्त्व है।

लोगों को फ़ैसला क्यों लेना चाहिए?

जैसा कि हम जानते हैं, भारत 15 अगस्त 1947 को आज़ाद हुआ। इस आज़ादी के लिए पूरे देश की जनता ने एक लंबा और मुश्किल संघर्ष चलाया था। इस संघर्ष में समाज के बहुत सारे तबकों की हिस्सेदारी थी। तरह-तरह की पृष्ठभूमि के लोगों ने इसमें भाग लिया। वे स्वतंत्रता, समानता तथा निर्णय प्रक्रिया में हिस्सेदारी के विचारों से प्रेरित थे। औपनिवेशिक शासन के तहत लोग ब्रिटिश सरकार से भयभीत रहते थे। वे सरकार के बहुत सारे फ़ैसलों से असहमत थे। लेकिन अगर वे इन फ़ैसलों की आलोचना करते तो उन्हें भारी खतरों का सामना करना पड़ता था। स्वतंत्रता आंदोलन ने यह स्थिति बदल डाली। राष्ट्रवादी खुलेआम ब्रिटिश सरकार की आलोचना करने लगे और अपनी माँगें पेश करने लगे। 1885 में ही भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने माँग की कि विधायिका में निर्वाचित सदस्य होने चाहिए और उन्हें बजट पर चर्चा करने एवं प्रश्न पूछने का अधिकार मिलना चाहिए। 1909 में बने गवर्नमेंट ऑफ़ इंडिया एक्ट ने कुछ हद तक निर्वाचित प्रतिनिधित्व की व्यवस्था को मंज़ूरी दे दी। हालाँकि ब्रिटिश सरकार के अंतर्गत बनाई गई ये शुरुआती विधायिकाएँ राष्ट्रवादियों के बढ़ते जा रहे दबाव के कारण ही बनी थीं, लेकिन इनमें भी सभी वयस्कों को न तो वोट डालने का अधिकार दिया गया था और न ही आम लोग निर्णय प्रक्रिया में हिस्सा ले सकते थे।

जैसा कि आपने पहले अध्याय में पढ़ा था, औपनिवेशिक शासन के अनुभव और स्वतंत्रता संघर्ष में तरह-तरह के लोगों की हिस्सेदारी के आधार पर राष्ट्रवादियों को विश्वास हो गया था कि स्वतंत्र भारत में सभी लोग अपने जीवन को प्रभावित करने वाले फ़ैसलों में हिस्सा लेने की क्षमता रखते हैं। स्वतंत्रता मिलने पर हम एक स्वतंत्र देश के नागरिक बनने वाले थे। लेकिन इसका यह मतलब नहीं था कि सरकार जो चाहे कर सकती थी। इसका मतलब यह था कि अब सरकार को लोगों की ज़रूरतों और माँगों के प्रति संवेदनशील रहना होगा। स्वतंत्रता

पिछले पन्ने पर दी गई संसद की तस्वीर के ज़रिए कलाकार क्या कहने का प्रयास कर रहा है?

इस चित्र में एक मतदाता इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीन (ई.वी.एम.) के इस्तेमाल की विधि पढ़ रहा है। 2004 के आम चुनावों में पहली बार पूरे देश में ई.वी.एम. का इस्तेमाल किया गया था। इस चुनाव में ई.वी.एम. के इस्तेमाल से लगभग 1,50,000 पेड़ों की रक्षा हुई क्योंकि मतपत्रों की छपाई के लिए इन पेड़ों को काट कर 8,000 टन कागज बनाना पड़ता।

सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार क्यों मिलना चाहिए, इसके पक्ष में एक कारण बताइए।

क्लास मॉनीटर का चुनाव शिक्षक द्वारा किया जाता है या विद्यार्थियों द्वारा – आपकी राय में इस बात से कोई फ़र्क पड़ता है या नहीं? चर्चा कीजिए।

संघर्ष के सपनों और आकांक्षाओं ने स्वतंत्र भारत के संविधान में ठोस रूप ग्रहण किया। इस संविधान ने सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार के सिद्धांत को अपनाया। सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार का मतलब है कि देश के सभी वयस्क नागरिकों को वोट देने का अधिकार है।

लोग और उनके प्रतिनिधि

सहमति का विचार लोकतंत्र का प्रस्थानबिंदु होता है। सहमति का मतलब है चाह, स्वीकृति और लोगों की हिस्सेदारी। लोगों का निर्णय ही लोकतांत्रिक सरकार का गठन करता है और उसके कामकाज के बारे में फ़ैसला देता है। इस तरह के लोकतंत्र के पीछे मूल सोच यह होती है कि व्यक्ति या नागरिक ही सबसे महत्त्वपूर्ण है और सैद्धांतिक स्तर पर सरकार एवं अन्य सार्वजनिक संस्थानों में इन नागरिकों की आस्था होनी चाहिए।

व्यक्ति सरकार को अपनी मंज़ूरी कैसे देता है? जैसा कि आपने पढ़ा है, मंज़ूरी देने का एक तरीका चुनाव है। लोग संसद के लिए अपने प्रतिनिधियों का चुनाव करते हैं। इन्हीं निर्वाचित प्रतिनिधियों में से एक समूह सरकार बनाता है। जनता द्वारा चुने गए सभी प्रतिनिधियों के इस समूह को ही संसद कहा जाता है। यह संसद सरकार को नियंत्रित करती है और उसका मार्गदर्शन करती है। इस लिहाज़ से अपने निर्वाचित प्रतिनिधियों के माध्यम से लोग ही सरकार बनाते हैं और उस पर नियंत्रण रखते हैं।

इस फ़ोटो में चुनाव कर्मचारी एक दुर्गम इलाके में स्थित मतदान केंद्र तक मतदान सामग्री और इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीन पहुँचाने के लिए हाथी का इस्तेमाल कर रहे हैं।

प्रतिनिधित्व का यह विचार कक्षा 6 और 7 की *सामाजिक एवं राजनीतिक जीवन* पाठ्यपुस्तकों का एक महत्त्वपूर्ण विषय था। आप इस बात से पहले ही परिचित हैं कि सरकार के विभिन्न स्तरों पर प्रतिनिधियों का चुनाव किस तरह किया जाता है। आइए निम्नलिखित अभ्यास के माध्यम से इन विचारों को एक बार फिर दोहरा लें।

1. विधायक (एमएलए) कौन होता है और उसका चुनाव कैसे किया जाता है – इस बात को समझाने के लिए 'निर्वाचन क्षेत्र' और 'प्रतिनिधित्व' शब्दों का प्रयोग करें।

2. राज्य विधानसभा और संसद (लोकसभा) के बीच क्या फ़र्क है – इस बारे में अपने शिक्षक के साथ चर्चा कीजिए।

3. नीचे दिये गए विकल्पों में से कौन से काम राज्य सरकार के हैं और कौन से केंद्र सरकार के हैं?

   (क) चीन के साथ शांतिपूर्ण संबंध रखा जाएगा।

   (ख) मध्य प्रदेश में बोर्ड के तहत आने वाले सभी स्कूलों में कक्षा 8 को बोर्ड की परीक्षाओं से बाहर रखा जाएगा।

   (ग) अजमेर और मैसूर के बीच एक नयी रेलगाड़ी चलाई जाएगी।

   (घ) 1000 रुपये का नया नोट जारी किया जाएगा।

4. निम्नलिखित शब्दों को रिक्त स्थानों में भरें-
   सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार; विधायकों; प्रतिनिधियों; प्रत्यक्ष रूप से

   हमारे समय में लोकतांत्रिक सरकारों को आमतौर पर प्रतिनिधिमूलक लोकतंत्र की संज्ञा दी जाती है। प्रतिनिधिमूलक लोकतंत्र में लोग .... हिस्सेदारी नहीं करते बल्कि चुनाव प्रक्रिया के ज़रिए अपने .... को चुनते हैं। ये .... पूरी जनता के बारे में मिलकर फ़ैसले लेते हैं। आज के दौर में ऐसी किसी सरकार को लोकतांत्रिक नहीं कहा जा सकता जो अपने लोगों को .... न देती हो। इसका मतलब यह है कि देश के सभी वयस्क नागरिकों को वोट देने का अधिकार होता है।

5. आप पढ़ चुके हैं कि पंचायत, राज्य विधायिका या संसद के लिए चुने जाने वाले ज़्यादातर निर्वाचित प्रतिनिधियों को 5 साल की अवधि के लिए चुना जाता है। ऐसा क्यों है कि जनप्रतिनिधियों को केवल कुछ सालों के लिए ही चुना जाता है, जीवनभर के लिए नहीं?

6. आप यह पढ़ चुके हैं कि सरकार की कार्रवाइयों पर अपनी सहमति या असहमति व्यक्त करने के लिए लोग केवल चुनावों का ही इस्तेमाल नहीं करते, बल्कि वे दूसरे रास्ते भी अख्तियार करते हैं। क्या आप छोटे से नाटक के ज़रिए इस तरह के तीन तरीके बता सकते हैं?

1. भारतीय संसद देश की सर्वोच्च कानून निर्मात्री संस्था है। इसके दो सदन हैं – राज्य सभा और लोक सभा।
2. राज्य सभा में कुल 245 सदस्य होते हैं। देश के उपराष्ट्रपति राज्य सभा के सभापति होते हैं।
3. लोक सभा में कुल 545 सदस्य होते हैं। इसकी अध्यक्षता लोक सभा अध्यक्ष करते हैं।

संसद की भूमिका

आज़ादी के बाद गठित की गई भारतीय संसद लोकतंत्र के सिद्धांतों में भारतीय जनता की आस्था का प्रतीक है। ये सिद्धांत हैं निर्णय प्रक्रिया में जनता की हिस्सेदारी और सहमति पर आधारित शासन। हमारी व्यवस्था में संसद के पास महत्त्वपूर्ण शक्तियाँ हैं क्योंकि यह जनता का प्रतिनिधित्व करती है। लोक सभा के लिए भी उसी तरह चुनाव होते हैं जिस तरह राज्य विधानसभा के लिए चुनाव होते हैं। आम तौर पर लोक सभा के लिए हर पाँच साल में चुनाव करवाए जाते हैं। जैसा कि पृष्ठ संख्या 41 पर दिए गए नक्शे में दिखाया गया है, देश को बहुत सारे निर्वाचन क्षेत्रों में बाँटा गया है। प्रत्येक निर्वाचन क्षेत्र से एक व्यक्ति को संसद में भेजा जाता है। चुनाव लड़ने वाले उम्मीदवार आमतौर पर विभिन्न राजनीतिक दलों के सदस्य होते हैं।

नीचे दी गई तालिका के माध्यम से आइए इस बात को और अच्छी तरह समझें।

आठवीं लोक सभा के चुनाव का परिणाम (1984)

राजनीतिक दल	निर्वाचित सांसदों की संख्या
राष्ट्रीय दल	
भारतीय जनता पार्टी (भाजपा)	2
भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी (भाकपा)	2
भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी) (माकपा)	22
इंडियन कांग्रेस सोशलिस्ट	4
भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस	404
जनता पार्टी	10
लोक दल	3
क्षेत्रीय दल	
ऑल इंडिया अन्ना द्रमुक	12
द्रविड मुनेत्र कड़गम (द्रमुक)	2
ऑल इंडिया फारवर्ड ब्लॉक	2
इंडियन कांग्रेस (जे)	1
जम्मू एंड कश्मीर कांफ्रेंस	3
केरल कांग्रेस (जे)	2
मुसलिम लीग	2
पीजेंट्स एंड वर्कर्स पार्टी ऑफ इंडिया	1
रेवाल्यूशनरी सोशलिस्ट पार्टी	3
तेलुगु देशम पार्टी (तेदेपा)	30
निर्दलीय	5
कुल योग	**514**

नोट : 1984 में असम और पंजाब में लोकसभा चुनाव नहीं हुए थे।
स्रोत : www.eci.gov.in

बगल में दी गई तालिका के आधार पर नीचे दिए गए प्रश्नों के उत्तर दें-

कौन सरकार बनाएगा? क्यों?

विपक्ष किसको कहा जाएगा? उसकी क्या भूमिका है?

लोक सभा में चर्चा के लिए कौन उपस्थित होंगे?

क्या यह प्रक्रिया कक्षा 7 में पढ़ाई गई प्रक्रिया जैसी ही है?

पृष्ठ 28 पर दिए गए चित्र में 1962 में हुए तीसरे लोक सभा चुनावों के परिणाम दिखाए गए हैं। इस चित्र के आधार पर निम्नलिखित सवालों के जवाब दें-

(क) लोक सभा में किस राज्य के सांसद सबसे अधिक हैं? आपके विचार से ऐसा क्यों है?

(ख) लोक सभा में किस राज्य के सांसदों की संख्या सबसे कम है?

(ग) किस राजनीतिक दल ने सभी राज्यों में सबसे ज़्यादा सीटें जीती हैं?

(घ) आपके राज्य में कौन सा दल सरकार बनाएगा? कारण बताएँ।

तेरहवीं लोक सभा के चुनाव का परिणाम (1999)

राजनीतिक दल	***प्राप्त सीटें***
राष्ट्रीय दल	
भारतीय जनता पार्टी (भाजपा)	182
बहुजन समाज पार्टी (बसपा)	14
भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी) (माकपा)	33
भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस	114
जनता दल (यूनाइटेड) (जद-यू)	21
अन्य	5
क्षेत्रीय दल	
ऑल इंडिया अन्ना द्रमुक	10
ऑल इंडिया तृणमूल कांग्रेस	8
बिजु जनता दल	10
द्रविड़ मुनेत्र कडगम (द्रमुक)	12
इंडियन नेशनल लोक दल	5
राष्ट्रवादी कांग्रेस पार्टी	8
पट्टाली मक्कल काची	5
राष्ट्रीय जनता दल (राजद)	7
शिव सेना	15
समाजवादी पार्टी (सपा)	26
तेलुगु देशम पार्टी (तेदेपा)	29
अन्य	23
पंजीकृत (गैर-मान्यता प्राप्त) दल	10
निर्दलीय	6
कुल योग	**543**

स्रोत : www.eci.gov.in

इस तालिका में 1999 में हुए तेरहवीं लोक सभा के चुनाव परिणाम दिखाए गए हैं। इन चुनावों में भाजपा को सबसे ज़्यादा सीटें मिलीं लेकिन फिर भी वह लोक सभा में बहुमत हासिल नहीं कर पाई थी। लिहाज़ा उसे अन्य दलों के साथ मिलकर राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन (राजग) का गठन करके सरकार बनानी पड़ी।

चुने जाने के बाद ये उम्मीदवार संसद सदस्य या सांसद (एम.पी.) कहलाते हैं। इन सांसदों को मिलाकर संसद बनती है। संसद के चुनाव हो जाने के बाद संसद को निम्नलिखित काम करने होते हैं–

(क) राष्ट्रीय सरकार का चुनाव करना

भारतीय संसद के तीन अंग हैं – राष्ट्रपति, राज्य सभा और लोक सभा। लोक सभा चुनावों के बाद सांसदों की एक सूची बनाई जाती है। इससे पता चलता है कि किस राजनीतिक दल के कितने सांसद हैं। यदि कोई राजनीतिक दल सरकार बनाना चाहता है तो उसे निर्वाचित सांसदों में बहुमत प्राप्त होना चाहिए। चूँकि लोक सभा में कुल 543 निर्वाचित सदस्य (और 2 मनोनीत सदस्य) होते हैं। इसलिए बहुमत हासिल करने के लिए लोक सभा में किसी भी दल के पास कम से कम 272 सदस्य होने चाहिए। संसद में बहुमत प्राप्त करने वाले दल या गठबंधन का विरोध करने वाले सभी राजनीतिक दल विपक्षी दल कहलाते हैं।

कार्यपालिका का चुनाव करना लोक सभा का एक महत्त्वपूर्ण काम होता है। जैसा कि आपने पहले अध्याय में पढ़ा था, कार्यपालिका ऐसे लोगों का समूह होती है जो संसद द्वारा बनाए गए कानूनों को लागू करने के लिए मिलकर काम करते हैं। जब हम सरकार शब्द का इस्तेमाल करते हैं तो हमारे ज़ेहन में अकसर यही कार्यपालिका होती है।

भारत का प्रधानमंत्री लोक सभा में सत्ताधारी दल का मुखिया होता है। प्रधानमंत्री अपने दल के सांसदों में से मंत्रियों का चुनाव करता है जो प्रधानमंत्री के साथ मिलकर फ़ैसलों को लागू करते हैं। ये मंत्री स्वास्थ्य, शिक्षा, वित्त इत्यादि विभिन्न सरकारी कार्यों का जिम्मा सँभालते हैं।

हाल के सालों में काफ़ी बार किसी एक राजनीतिक दल को बहुमत नहीं मिल पाया है जो कि सरकार बनाने के लिए एकदम ज़रूरी है। ऐसी सूरत में कई राजनीतिक दल मिलकर एक गठबंधन सरकार बना लेते हैं और साझा मुद्दों पर काम करते हैं।

केंद्रीय सचिवालय की ये दो मुख्य इमारतें हैं। इनमें से एक का नाम साउथ ब्लॉक और दूसरी का नाम नॉर्थ ब्लॉक है। इनका निर्माण 1930 के दशक में किया गया था। बाईं ओर साउथ ब्लॉक का चित्र है जिसमें प्रधानमंत्री कार्यालय, रक्षा मंत्रालय और विदेश मंत्रालय के दफ़्तर हैं। दाईं ओर नॉर्थ ब्लॉक है जहाँ वित्त मंत्रालय और गृह मंत्रालय स्थित हैं। केंद्र सरकार के अन्य मंत्रालय नई दिल्ली की विभिन्न इमारतों में स्थित हैं।

राज्य सभा मुख्य रूप से देश के राज्यों की प्रतिनिधि के रूप में काम करती है। राज्य सभा भी कोई कानून बनाने का प्रस्ताव पेश कर सकती है। किसी विधेयक को कानून के रूप में लागू करने के लिए यह ज़रूरी है कि उसे राज्य सभा की भी मंज़ूरी मिल चुकी हो। इस प्रकार राज्य सभा की भी बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। संसद का यह सदन लोक सभा द्वारा पारित किए गए कानूनों की समीक्षा करता है और अगर ज़रूरत हुई तो उसमें संशोधन करता है। राज्य सभा के सदस्यों का चुनाव विभिन्न राज्यों की विधानसभाओं के निर्वाचित सदस्य करते हैं। राज्य सभा में 233 निर्वाचित सदस्य होते हैं और 12 सदस्य राष्ट्रपति की ओर से मनोनीत किए जाते हैं।

(ख) सरकार को नियंत्रित करना, मार्गदर्शन देना और जानकारी देना

जब संसद का सत्र चल रहा होता है तो उसमें सबसे पहले प्रश्नकाल होता है। प्रश्नकाल एक महत्त्वपूर्ण व्यवस्था है। इसके माध्यम से सांसद सरकार के कामकाज के बारे में जानकारियाँ हासिल करते हैं। इसके ज़रिए संसद कार्यपालिका को नियंत्रित करती है। सवालों के माध्यम से सरकार को उसकी खामियों के प्रति आगाह किया जाता है। इस तरह सरकार को भी जनता के प्रतिनिधियों यानी सांसदों के ज़रिए जनता की राय जानने का मौका मिलता है। सरकार से सवाल पूछना किसी भी सांसद की बहुत महत्त्वपूर्ण ज़िम्मेदारी होती है। लोकतंत्र के स्वस्थ संचालन में विपक्षी दल एक अहम भूमिका अदा करते हैं। वे सरकार की नीतियों और कार्यक्रमों की कमियों को सामने लाते हैं और अपनी नीतियों के लिए जनसमर्थन जुटाते हैं।

संसद में पूछे गए एक प्रश्न का उदाहरण

लोक सभा

अतारांकित प्रश्न संख्या 2007
दिनांक 30 नवम्बर 2007 को उत्तर के लिए

विद्यालयों में 'जंक फूड'

2007. श्री सालरापट्टी कुप्पुसामी खारवेन्तन :

क्या महिला और बाल विकास मंत्री यह बताने की कृपा करेंगे कि :

(क) : क्या नेशनल कमीशन फॉर प्रोटेक्शन ऑफ चाइल्ड राइट्स (एन.सी.पी.सी.आर.) ने सभी राज्य सरकारों से विद्यालयों में 'जंक फूड' पर प्रतिबंध लगाने तथा पोषण मानक विकसित करने को भी कहा है;

(ख) : यदि हाँ, तो तत्संबंधी ब्यौरा क्या है;

(ग) : क्या केंद्र सरकार ने राज्यों द्वारा उपर्युक्त मानकों का अनुपालन सुनिश्चित किया है; और

(घ) : यदि हाँ, तो तत्संबंधी ब्यौरा क्या है?

उत्तर

महिला और बाल विकास मंत्रालय की राज्य मंत्री

(क) और (ख) : जी, नहीं। राष्ट्रीय बाल अधिकार संरक्षण आयोग ने राज्यों को पत्र भेजकर उनसे कहा कि वे विद्यालय पोषण नीति तैयार करने के लिए विद्यालयों को दिशा-निर्देश जारी करने के विषय में विचार करें।

(ग) और (घ) : प्रश्न नहीं उठता।

स्रोत : http://loksabha.nic.in

उपरोक्त प्रश्न के माध्यम से महिला और बाल विकास मंत्री से क्या जानकारी माँगी जा रही है?

अगर आप सांसद होते तो कौन-से दो सवाल पूछते?

सांसदों के प्रश्नों से सरकार को भी महत्त्वपूर्ण फ़ीडबैक मिलता है। इसके चलते सरकार चुस्त रहती है। इसके अलावा वित्त से संबंधित सभी मामलों में संसद की मंज़ूरी सरकार के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण होती है। यह उन कई तरीकों में से एक है जिसके माध्यम से संसद सरकार को नियंत्रित करती है, उसका मार्गदर्शन करती है और उसको सूचित करती है। जनप्रतिनिधियों के रूप में संसद को नियंत्रित, निर्देशित और सूचित करने में सांसदों की एक अहम भूमिका होती है और यह भारतीय लोकतंत्र का एक मुख्य आयाम है।

(ग) कानून बनाना

कानून बनाना संसद का एक महत्त्वपूर्ण काम है। इसके बारे में हम अगले अध्याय में पढ़ेंगे।

संसद में कौन लोग होते हैं?

संसद में विभिन्न पृष्ठभूमि वाले लोगों की संख्या बढ़ती जा रही है। उदाहरण के लिए, अब ग्रामीण पृष्ठभूमि वाले सदस्यों की संख्या पहले से ज़्यादा है। बहुत सारे क्षेत्रीय दलों के सदस्य भी अब बढ़ गए हैं। जिन समूहों और तबकों का अब तक संसद में कोई प्रतिनिधित्व नहीं था, वे अब चुनाव जीत कर आने लगे हैं।

दलित, पिछड़ी जातियों और अल्पसंख्यकों की राजनीतिक हिस्सेदारी भी बढ़ रही है। निम्नलिखित तालिका से पता चलता है कि अलग-अलग सालों में लोक सभा के लिए वोट डालने वाली आबादी का प्रतिशत कितना था।

लोक सभा	चुनाव वर्ष	मतदान प्रतिशत
पहली	1951-52	44.87
चौथी	1967	61.04
पाँचवी	1971	55.27
छठी	1977	60.49
आठवीं	1984	63.56
दसवीं	1991	56.73
चौदहवीं	2004	58.07

स्रोत : www.eci.gov.in

इस तालिका को देखने के बाद क्या आप यह कह सकते हैं कि पिछले 50 सालों में चुनावों में जनता की सहभागिता कम हुई है या बढ़ी है या शुरुआती वृद्धि के बाद प्रायः स्थिर रही है?

देखने में आया है कि प्रतिनिधिमूलक लोकतंत्र अपने समाज को पूरे तौर पर सही ढंग से प्रतिबिंबित नहीं कर सकता। यह बात साफ़ दिखाई देने लगी है कि जब हमारे हित और अनुभव अलग-अलग होते हैं तो एक समूह के व्यक्ति सबके हित में आवाज़ नहीं उठा सकते। इसी बात को ध्यान में रखते हुए संसद में कुछ सीटें अनुसूचित जातियों (एस.सी.) और अनुसूचित जनजातियों (एस.टी.) के लिए आरक्षित की गई हैं। ऐसा इसलिए किया गया है ताकि इन चुनाव क्षेत्रों से केवल दलितों और

उपरोक्त चित्र में कुछ महिला सांसद दिखाई पड़ रही हैं।

आपको संसद में महिलाओं की कम संख्या का क्या कारण समझ में आता है? चर्चा करें।

आदिवासी उम्मीदवार ही जीतें और संसद में उनकी भी उचित हिस्सेदारी हो। उनसे उम्मीद की जाती है कि वे दलितों और आदिवासियों की ज़िंदगी से जुड़े मुद्दों को ज़्यादा अच्छी तरह संसद में उठा सकते हैं।

इसी प्रकार हाल ही में महिलाओं के लिए भी सीटों के आरक्षण का सुझाव पेश किया गया है। इस सवाल पर अभी भी बहस जारी है। 60 साल पहले संसद में केवल 4 प्रतिशत महिलाएँ थीं। आज भी उनकी संख्या 9 प्रतिशत से जरा सा ऊपर ही पहुँच पाई है। जब आप इस बात पर ध्यान देते हैं कि आधी आबादी औरतों की है तो यह साफ़ हो जाता है कि संसद में उन्हें बहुत कम जगह मिल रही है।

इसी तरह के मुद्दों की वज़ह से आज हमारा देश ऐसे कुछ मुश्किल और अनसुलझे सवालों से जूझ रहा है कि क्या हमारी लोकतांत्रिक व्यवस्था वाकई प्रतिनिधिक है या नहीं। हम ऐसे सवाल पूछ सकते हैं और उनके जवाब ढूँढ़ने की कोशिश कर रहे हैं, यह बात लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था की ताकत और उसमें भारत के लोगों की आस्था को झलकाती है।

शब्द संकलन

स्वीकृति– किसी चीज़ पर अपनी सहमति देना और उसके पक्ष में काम करना। इस अध्याय में यह शब्द संसद के पास उपलब्ध औपचारिक सहमति (निर्वाचित प्रतिनिधियों के माध्यम से) और संसद में लोगों की आस्था बनाए रखने की ज़रूरत, दोनों संदर्भों में इस्तेमाल किया गया है।

गठबंधन– इसका मतलब समूहों या दलों के तात्कालिक गठजोड़ से होता है। इस अध्याय में गठबंधन शब्द का इस्तेमाल चुनावों के बाद किसी भी दल को बहुमत न मिलने की स्थिति में बनने वाले गठजोड़ के लिए किया गया है।

अनसुलझे– इसका आशय ऐसी परिस्थितियों से है जहाँ समस्याओं का कोई आसान समाधान उपलब्ध नहीं होता है।

अभ्यास

1. राष्ट्रवादी आंदोलन ने इस विचार का समर्थन किया कि सभी वयस्कों को मत देने का अधिकार होना चाहिए?

2. बगल में 2004 के संसदीय चुनाव क्षेत्रों का नक्शा दिया गया है। इस नक्शे में अपने राज्य के चुनाव क्षेत्रों को पहचानने का प्रयास करें। आपके चुनाव क्षेत्र के सांसद का क्या नाम है? आपके राज्य से संसद में कितने सांसद जाते हैं? कुछ निर्वाचन क्षेत्रों को हरे और कुछ को नीले रंग में क्यों दिखाया गया है?

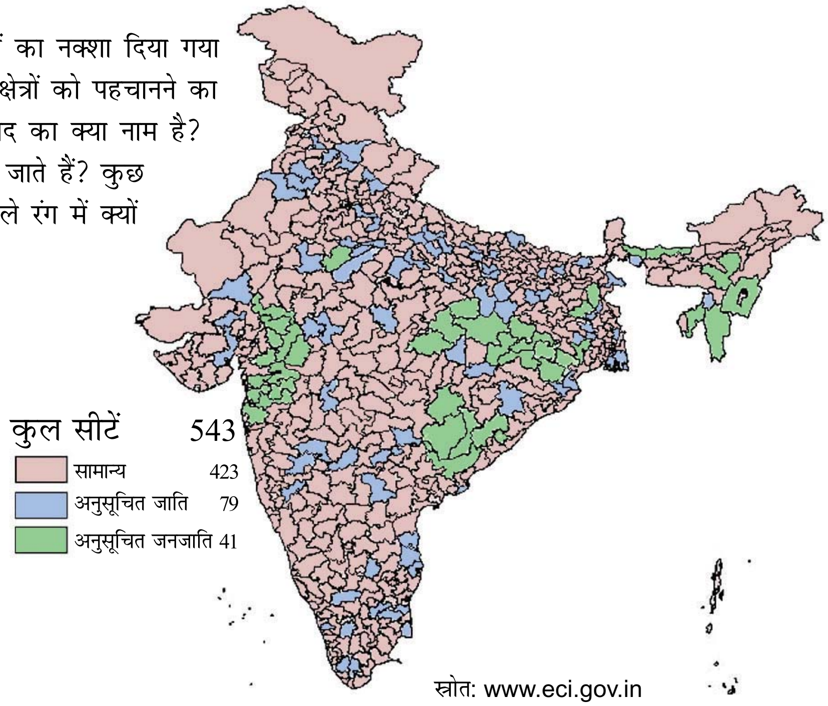

3. अध्याय 1 में आपने पढ़ा था कि भारत में प्रचलित 'संसदीय शासन व्यवस्था' में तीन स्तर होते हैं। इनमें से एक स्तर संसद (केंद्र सरकार) तथा दूसरा स्तर विभिन्न राज्य विधायिकाओं (राज्य सरकारों) का होता है। अपने क्षेत्र के विभिन्न प्रतिनिधियों से संबंधित सूचनाओं के आधार पर निम्नलिखित तालिका को भरें–

	राज्य सरकार	**केंद्र सरकार**
कौन सा/से राजनीतिक दल अभी सत्ता में है/हैं?		
आपके क्षेत्र से निर्वाचित प्रतिनिधि कौन है?		
अभी कौन सा राजनीतिक दल विपक्ष में है?		
पिछले चुनाव कब हुए थे?		
अगले चुनाव कब होंगे?		
आपके राज्य से कितनी महिला प्रतिनिधि हैं?		

अध्याय 4

कानूनों की समझ

आप कुछ कानूनों से परिचित होंगे। शायद आपको शादी की उम्र सीमा या मताधिकार की उम्र सीमा का पता होगा। संभव है आप संपत्ति को खरीदने-बेचने के कानूनों को भी जानते हों। अभी तक आप यह जान चुके हैं कि कानून बनाने का ज़िम्मा संसद का होता है। क्या ये कानून सभी पर लागू होते हैं? नए कानून किस तरह अस्तित्व में आते हैं? क्या कोई कानून अलोकप्रिय या विवादास्पद भी होता है? नागरिक के नाते हमें ऐसी परिस्थितियों में क्या करना चाहिए?

क्या कानून सब पर लागू होते हैं?

इस स्थिति को पढ़ें और उसके नीचे दिए गए प्रश्नों के उत्तर दें–

एक सरकारी अधिकारी के बेटे को ज़िला अदालत ने 10 साल की सज़ा सुनाई है। इस वज़ह से वह सरकारी अधिकारी अपने बेटे को भाग निकलने में मदद करता है।

क्या आपको लगता है कि उस सरकारी अधिकारी ने सही काम किया? क्या उसके बेटे को केवल इसलिए कानून से माफ़ी मिल जानी चाहिए कि उसका बाप आर्थिक और राजनीतिक रूप से बहुत ताकतवर है?

यह सीधे–सीधे कानून के उल्लंघन का मामला है। जैसा कि आप इकाई एक में पढ़ चुके हैं, राष्ट्रवादियों के बीच इस बात पर पूरी सहमति थी कि स्वतंत्र भारत में सत्ता के मनमाने इस्तेमाल की कोई गुंजाइश नहीं होनी चाहिए। इसीलिए उन्होंने संविधान में कई ऐसे प्रावधान जोड़े जो कानून पर आधारित शासन की स्थापना के लिए ज़रूरी थे। इनमें सबसे महत्त्वपूर्ण प्रावधान यह था कि स्वतंत्र भारत में सभी लोग कानून की नज़र में बराबर होंगे।

हमारा कानून धर्म, जाति और लिंग के आधार पर लोगों के बीच कोई भेदभाव नहीं करता। कानून के शासन का मतलब है कि सभी कानून देश के सभी नागरिकों पर समान रूप से लागू होते हैं। कानून से ऊपर कोई व्यक्ति नहीं है। चाहे वह सरकारी अधिकारी हो या धन्नासेठ हो और यहाँ तक कि राष्ट्रपति ही क्यों न हो। किसी भी अपराध या कानून के उल्लंघन की एक निश्चित सज़ा होती है। सज़ा तक पहुँचने की भी एक तय प्रक्रिया है जिसमें व्यक्ति का अपराध साबित किया जाता है। लेकिन क्या हमेशा से ऐसा ही था?

प्राचीन भारत में असंख्य स्थानीय कानून थे। अकसर एक जैसे मामले में कई तरह के स्थानीय कानून लागू होते थे। विभिन्न समुदाय इन

रॉलट एक्ट अंग्रेज़ों के मनमानेपन का एक और उदाहरण था। इस कानून के ज़रिए ब्रिटिश सरकार बिना मुकदमा चलाए लोगों को कारावास में डाल सकती थी। महात्मा गाँधी सहित सभी भारतीय राष्ट्रवादी नेता रॉलट एक्ट के सख्त खिलाफ़ थे। भारतीय विरोध के बावजूद 10 मार्च 1919 से रॉलट एक्ट को लागू कर दिया गया। पंजाब में इस कानून का भारी पैमाने पर विरोध होता रहा। इसी क्रम में 10 अप्रैल को डॉ. सत्यपाल और डॉ. सैफ़ुद्दीन किचलू को गिरफ़्तार कर लिया गया। इन नेताओं की गिरफ़्तारियों के विरोध में 13 अप्रैल को अमृतसर के जलियाँवाला बाग में एक सभा का आयोजन किया गया। जिस समय यह सभा चल रही थी उसी समय जनरल डायर ब्रिटिश फ़ौजी टुकड़ियों के साथ बाग में दाखिल हुआ। उसने बाहर निकलने का रास्ता बंद करके बिना चेतावनी दिए लोगों पर अंधाधुंध गोलियाँ चलवा दीं। इस हत्याकांड में कई सौ लोग मारे गए और असंख्य जख्मी हुए। मरने और घायल होने वालों में बहुत सारी औरतें और बच्चे भी थे। इस पेंटिंग में जलियाँवाला बाग जनसंहार के समय हुई गोलीबारी का दृश्य दिखाया गया है।

कानूनों को अपने अधिकार क्षेत्र में अपने हिसाब से लागू करने के लिए आज़ाद थे। कुछ मामलों में जाति के आधार पर एक ही अपराध के लिए अलग-अलग व्यक्ति को अलग-अलग सज़ा दी जाती थी। जैसे, निचली मानी जाने वाली जाति के अपराधी को ज़्यादा सज़ा दी जाती थी। औपनिवेशिक शासन के दौरान कानून पर आधारित व्यवस्था जैसे-जैसे परिपक्व होती गई, जाति के आधार पर सज़ा देने में भेदभाव का यह चलन खत्म होने लगा।

बहुत सारे लोग मानते हैं कि हमारे देश में कानून के शासन की शुरुआत अंग्रेज़ों ने की थी। इतिहासकारों में इस बात पर काफ़ी विवाद रहा है। इसके कई कारण हैं। एक कारण तो यह है कि औपनिवेशिक कानून मनमानेपन पर आधारित था। दूसरी वज़ह यह बताई जाती है कि ब्रिटिश भारत में कानूनी मामलों के विकास में भारतीय राष्ट्रवादियों ने एक अहम भूमिका निभाई थी। 1870 का राजद्रोह एक्ट अंग्रेज़ी शासन के मनमानेपन की मिसाल था। इस कानून में राजद्रोह की परिभाषा बहुत व्यापक थी। इसके मुताबिक अगर कोई भी व्यक्ति ब्रिटिश सरकार का विरोध या आलोचना करता था तो उसे मुकदमा चलाए बिना ही गिरफ़्तार किया जा सकता था।

भारतीय राष्ट्रवादी अंग्रेज़ों द्वारा सत्ता के इस मनमाने इस्तेमाल का विरोध और उसकी आलोचना करते थे। अपनी बातों को मनवाने के लिए

उन्होंने संघर्ष शुरू कर दिया। यह समानता का संघर्ष था। उनके लिए कानून का मतलब ऐसे नियम नहीं थे जिनका पालन करना उनकी मजबूरी हो। वे कानून को उससे अलग ऐसी व्यवस्था के रूप में देखना चाहते थे जो न्याय के विचार पर आधारित हों। उन्नीसवीं सदी के आखिर तक भारत में कानूनी पेशा भी उभरने लगा था। कानूनी पेशे में लगे भारतीयों ने माँग की कि औपनिवेशिक अदालतों में उन्हें सम्मान की नज़र से देखा जाए। ऐसे भारतीय कानून विशेषज्ञ अपने देश के लोगों के अधिकारों की हिफाजत के लिए कानून का इस्तेमाल करने लगे। भारतीय न्यायाधीश भी फ़ैसले लेने में पहले से ज़्यादा भूमिका निभाने लगे थे। इस प्रकार औपनिवेशिक शासन के दौरान कानून के शासन के विकासक्रम में यहाँ के लोग भी कई तरह से अपना योगदान दे रहे थे।

इस किताब में मनमाना शब्द का इस्तेमाल पीछे भी आ चुका है। अध्याय 1 के शब्द संकलन में आप इसका मतलब पढ़ चुके हैं। अब एक कारण बताइए कि आप 1870 के राजद्रोह कानून को मनमाना क्यों मानते हैं। 1870 का राजद्रोह कानून किस प्रकार कानून के शासन का उल्लंघन करता है?

संविधान को स्वीकृति मिलने के बाद यह दस्तावेज़ एक ऐसी आधारशिला बन गया जिसके आधार पर हमारे प्रतिनिधि देश के लिए कानून बनाने लगे। हर साल हमारे प्रतिनिधि कई नए कानून बनाते हैं और कई पुराने कानूनों में संशोधन करते हैं। कक्षा 6 की पुस्तक में आपने 2005 के हिंदू उत्तराधिकार संशोधन कानून के बारे में पढ़ा होगा। इस नए कानून के मुताबिक बेटे, बेटियाँ और उनकी माँ, तीनों को परिवार की संपत्ति में बराबर हिस्सा मिल सकता है। इसी प्रकार प्रदूषण को नियंत्रित करने और रोज़गार मुहैया कराने के लिए भी नए कानून बनाए गए हैं। लोग इस निर्णय पर कैसे पहुँचते हैं कि एक नया कानून ज़रूरी है? वे कानून का प्रस्ताव किस तरह पेश करते हैं? इनके बारे में आप अगले हिस्से में पढ़ेंगे।

नए कानून किस तरह बनते हैं?

कानून बनाने में संसद की एक महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। यह प्रक्रिया कई तरह से आगे बढ़ती है। आमतौर पर सबसे पहले समाज के विभिन्न समूह ही किसी खास कानून के लिए आवाज़ उठाते हैं। यह संसद की ज़िम्मेदारी है कि वह लोगों के सामने आ रही समस्याओं के प्रति संवेदनशील हो। आइए देखें कि घरेलू हिंसा का सवाल किस तरह संसद के सामने आया और घरेलू हिंसा की रोकथाम पर कानून बनने की प्रक्रिया क्या थी।

जब परिवार का कोई पुरुष सदस्य (आमतौर पर पति) घर की किसी औरत (आमतौर पर पत्नी) के साथ मारपीट करता है, उसे चोट पहुँचाता है, या मारपीट अथवा चोट की धमकी देता है तो इसे घरेलू हिंसा कहा जाता है। औरत को यह नुकसान शारीरिक मारपीट या भावनात्मक शोषण के कारण पहुँच सकता है। यह शोषण मौखिक, यौन या फिर आर्थिक शोषण भी हो सकता है। घरेलू हिंसा कानून, 2005 में महिलाओं की सुरक्षा की परिभाषा ने 'घरेलू' शब्द की समझ को और अधिक व्यापक बना दिया है। अब ऐसी महिलाएँ भी घरेलू दायरे का हिस्सा मानी जाएँगी जो हिंसा करने वाले पुरुष के साथ एक ही मकान में 'रहती हैं' या 'रह चुकी' हैं।

अक्तूबर 2006
THE DAILY
The Protection of Women from Domestic Violence Act 2005 Passed.
FESTIVAL SALE
अरे शाज़िया, आज का अखबार पढ़ा तुमने? ये महिलाओं के लिए कितनी बड़ी बात है ना?
महिलाओं के लिए ही क्यों...! हिंसा-मुक्त परिवार तो सबके लिए ही अच्छे हैं। देखो न कुसुम इस कानून को बनने में कितना वक्त लग गया। बल्कि पहले तो हमें नए कानून की ज़रूरत ही साबित करनी पड़ी।
कुसुम और शाज़िया एक महिला संगठन की सदस्य हैं। उन्हें इस सफर की एक-एक कड़ी याद है।
अप्रैल 1991: दफ़्तर का एक आम दिन...
मुझे सलाह चाहिए। मेरा आदमी मुझे पीटता है। मैंने अभी तक किसी से यह बात नहीं बताई मुझे बड़ी शर्म आती है। पर अब बर्दाश्त नहीं होता। लेकिन मेरे पास कोई चारा भी नहीं है। मैं कहाँ जाऊँ?
मेरा बेटा और बहू मुझसे बहुत बुरा बर्ताव करते हैं। बहुत भला-बुरा कहते हैं मुझे। मैं अपने बैंक खातों का भी इस्तेमाल नहीं कर सकती। वे चाहें तो मुझे घर से भी निकाल सकते हैं।
मैं पुलिस के पास नहीं जाना चाहती। मैं तो बस यह चाहती हूँ कि मारपीट बंद हो जाए।
मैं बस यह चाहती हूँ कि मुझे मेरे घर से न निकाला जाए।
बदकिस्मती से मौजूदा कानून फ़ौजदारी कानून है। उसमें ये दोनों रास्ते मुमकिन नहीं हैं।
1990 के दशक में विभिन्न मंचों से एक नए कानून की माँग उठती रही।
हमने कई महिलाओं की आपबीती सुनी है। हमने देखा है कि महिलाएँ मारपीट से बचाव चाहती हैं, वे अपने मकान में रहना चाहती हैं। कई बार उन्हें सिर्फ़ थोड़ी-सी राहत की दरकार होती है। इस मुद्दे से निपटने के लिए एक नया नागरिक कानून होना चाहिए।
जन सुनवाई
1999 में वकीलों, कानून के विद्यार्थियों और समाज वैज्ञानिकों के संगठन 'लॉयर्स कलेक्टिव' ने राष्ट्रव्यापी चर्चा के बाद घरेलू हिंसा (रोकथाम एवं सुरक्षा) विधेयक का मसौदा तैयार किया। इस विधेयक को बहुत सारे लोगों को पढ़ाया गया।
घरेलू हिंसा की परिभाषा में शारीरिक, आर्थिक, यौन और मौखिक व भावनात्मक दुर्व्यवहार को भी शामिल किया जाना चाहिए।
साझा घरेलू दायरे में रहने वाली किसी भी महिला को इस कानून के तहत रखा जाना चाहिए। उन्हें साझा मकान से बेदखली से बचाया जाना चाहिए।
और आर्थिक मदद के बारे में क्या खयाल है?

विचार-विमर्श के लिए अलग-अलग संस्थानों के साथ बैठकें की गईं।

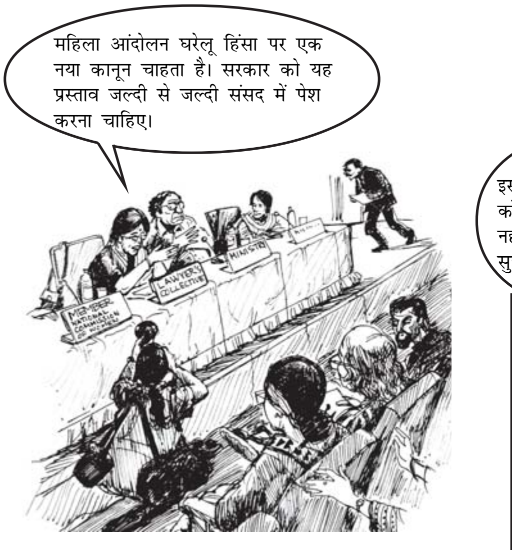

आखिरकार 2002 में यह विधेयक संसद में पेश कर दिया गया। लेकिन...

कई महिला संगठनों और राष्ट्रीय महिला आयोग ने संसदीय स्थायी समिति को अपने सुझाव सौंप दिए।

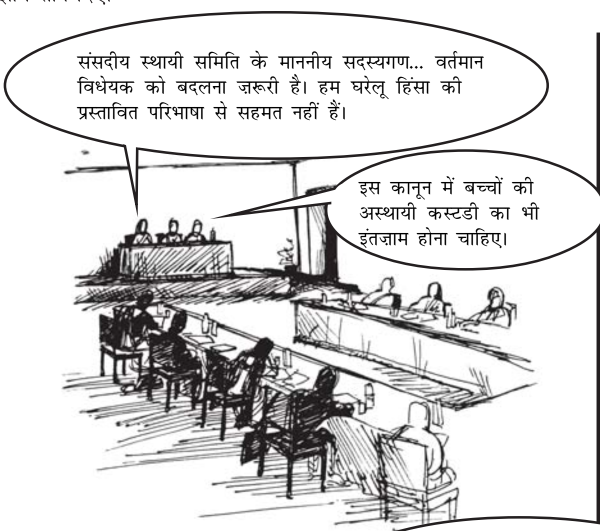

दिसंबर 2002 में स्थायी समिति ने अपनी सिफ़ारिशें राज्यसभा को सौंप दीं। इन सिफ़ारिशों को लोकसभा में भी पेश किया गया। कमिटी की रिपोर्ट में महिला संगठनों की ज़्यादातर माँगों को स्वीकार कर लिया गया था। 2005 में संसद के सामने एक नया विधेयक पेश किया गया। दोनों सदनों से मंज़ूरी मिल जाने के बाद उसे राष्ट्रपति के पास स्वीकृति के लिए भेज दिया गया। 2006 से घरेलू हिंसा महिला सुरक्षा कानून लागू हुआ।

अक्तूबर 2006 में एक संवाददाता सम्मेलन के दौरान...

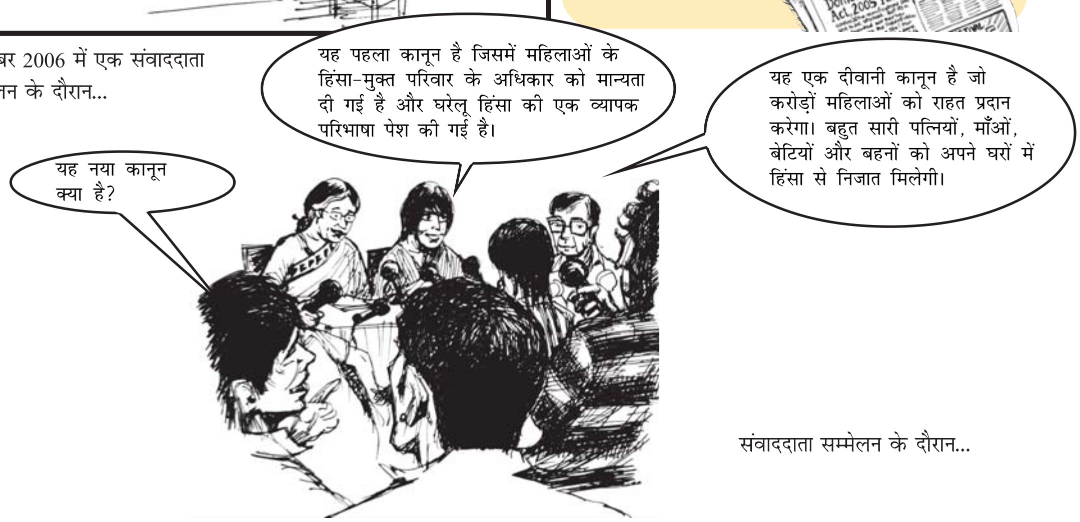

संवाददाता सम्मेलन के दौरान...

'घरेलू हिंसा' से आप क्या समझते हैं? हिंसा की शिकार महिलाओं को नए कानून से कौन से दो मुख्य अधिकार प्राप्त हुए हैं?

क्या आप एक ऐसी प्रक्रिया बता सकते हैं जिसका इस्तेमाल इस कानून की ज़रूरत के बारे में लोगों को अवगत कराने के लिए किया गया हो?

उपरोक्त चित्रकथा-पट्ट को पढ़कर बताइए कि लोगों ने कौन से दो तरीकों से संसद पर दबाव बनाया?

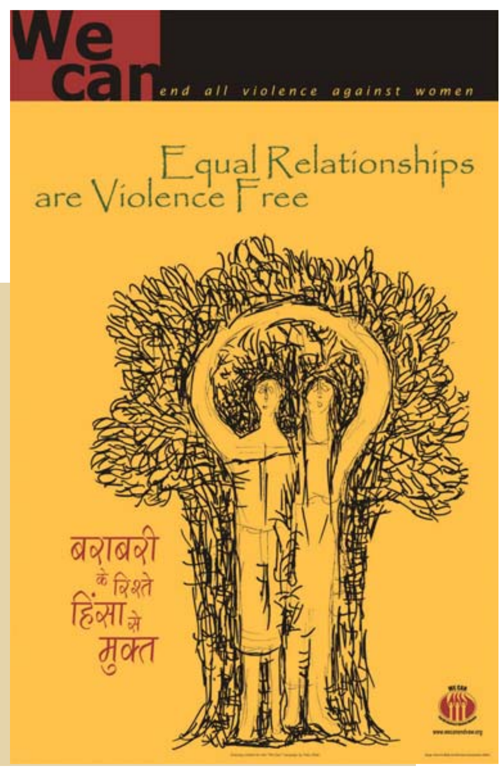

जिन औरतों के साथ हिंसा या दुराचार होता है उन्हें आमतौर पर पीड़ित माना जाता है। इन हालात से उबरने के लिए औरतें तरह-तरह से संघर्ष करती हैं। इसलिए उन्हें पीड़ित की बजाय 'सरवाइवर' कहना ज़्यादा बेहतर है। इस अंग्रेज़ी शब्द का अर्थ है जो बचा रहे।

बगल में दिए गए पोस्टर के 'बराबरी के रिश्ते हिंसा से मुक्त' वाक्य खंड से आप क्या समझते हैं?

इस उदाहरण से साफ़ हो जाता है कि नागरिकों की भूमिका कानून बनाने में कितनी अहम है। वे जनता की चिंताओं को कानून के दायरे में लाने के लिए संसद की मदद कर सकते हैं। इस प्रक्रिया के हर चरण में नागरिकों की आवाज़ बहुत मायने रखती है। यह आवाज़ टेलीविजन रिपोर्टों, अखबारों के संपादकीयों, रेडियो प्रसारणों और आम सभाओं के ज़रिए सुनी और व्यक्त की जा सकती है। इन सारे संचार माध्यमों के ज़रिए संसद का काम ठोस और पारदर्शी तरीके से जनता के सामने आता है।

अलोकप्रिय और विवादास्पद कानून

आइए अब एक और स्थिति पर विचार करें। कई बार संसद एक ऐसा कानून पारित कर देती है जो बेहद अलोकप्रिय साबित होता है। ऐसा कानून संवैधानिक रूप से वैध होने के कारण कानूनन सही हो सकता है। फिर भी वह लोगों को रास नहीं आता क्योंकि उन्हें लगता है कि उसके पीछे नीयत सही नहीं थी। इसीलिए लोग उसकी आलोचना कर सकते हैं, उसके खिलाफ़ जनसभाएँ कर सकते हैं, अखबारों में लिख सकते हैं, टीवी चैनलों में रिपोर्ट भेज सकते हैं। हमारे जैसे लोकतंत्र में आम नागरिक संसद द्वारा बनाए जाने वाले दमनकारी कानूनों के बारे में अपनी असहमति व्यक्त कर सकते हैं। जब बहुत सारे लोग यह मानने लगते हैं कि गलत कानून पारित हो गया है तो संसद के ऊपर भी उस कानून पर दोबारा विचार करने का दबाव पड़ता है।

उदाहरण के लिए, नगरपालिका की सीमाओं के भीतर जगह के इस्तेमाल से संबंधित विभिन्न नगरपालिका कानूनों में पटरी पर दुकान लगाने और फेरी लगाने को गैरकानूनी घोषित किया गया है। इसमें कोई संदेह नहीं कि सार्वजनिक स्थानों को साफ़-सुथरा और खुला रखने के लिए कुछ कानून ज़रूरी हैं। तभी लोग आसानी से फुटपाथों पर चल पाएँगे। लेकिन हम इस बात को भी नज़रअंदाज़ नहीं कर सकते कि पटरी वाले एवं फेरी वाले किसी भी बड़े शहर में रहने वाले लाखों लोगों को ज़रूरी चीज़ें और सेवाएँ बहुत सस्ती कीमत पर और कुशलतापूर्वक पहुँचाते हैं। इसी से उनकी रोज़ी-रोटी भी चलती है। लिहाज़ा अगर कानून किसी एक समूह की हिमायत करता है और दूसरे समूह की उपेक्षा करता है तो उस पर विवाद खड़ा होगा और टकराव की स्थिति पैदा हो जाएगी। जो लोग सोचते हैं कि संबंधित कानून सही नहीं है,

जैसा कि आपने कानून के शासन पर केंद्रित पिछले भाग में पढ़ा है, भारतीय राष्ट्रवादी खेमा अंग्रेज़ों द्वारा थोपे जा रहे मनमाने और दमनकारी कानूनों का विरोध व उनकी आलोचना करता था। इतिहास में हमें ऐसे बहुत सारे लोग और समुदाय दिखाई देते हैं जिन्होंने अन्यायपूर्ण कानूनों को खत्म करवाने के लिए संघर्ष किए हैं। कक्षा 7 की पुस्तक में आपने पढ़ा था कि रोज़ा पार्क्स नामक अफ़्रीकी-अमेरिकी महिला ने 1 दिसंबर 1955 को एक श्वेत व्यक्ति के लिए बस में अपनी सीट छोड़ने से इनकार कर दिया था। रोज़ा पार्क्स उस कानून का विरोध कर रही थीं जो सभी सार्वजनिक स्थानों पर श्वेत नागरिकों और अफ़्रीकी-अमेरिकी नागरिकों के लिए अलग-अलग दायरे तय करता था। यहाँ तक कि सड़कों पर भी दोनों समुदायों की जगह अलग-अलग होती थी। रोज़ा पार्क्स का यह इनकार एक ऐतिहासिक घटना थी। इसी के बाद वहाँ नागरिक अधिकार आंदोलन शुरू हुआ जिसके फलस्वरूप 1964 में नागरिक अधिकार कानून पारित किया गया। इस कानून के ज़रिए संयुक्त राज्य अमेरिका में नस्ल, धर्म या राष्ट्रीयता के आधार पर किसी भी तरह के भेदभाव को ग़ैर-कानूनी घोषित कर दिया गया। उपरोक्त चित्र में रोज़ा पार्क्स बस में यात्रा करती हुई दिखाई दे रही हैं।

एक सप्ताह तक अखबार पढ़ें या टेलीविजन पर खबरें देखें और पता लगाएँ कि क्या कोई ऐसा अलोकप्रिय कानून है जिसका भारत या कहीं और के लोग विरोध कर रहे हैं।

वे इस मुद्दे पर फ़ैसले के लिए अदालत की शरण में जा सकते हैं। यदि अदालत को ऐसा लगता है कि वह कानून संविधान के विरुद्ध है तो वह उसमें संशोधन कर सकती है या उसे रद्द कर सकती है।

ऊपर दी गई तस्वीरों में अन्यायपूर्ण कानूनों के विरुद्ध के कुछ अन्य तरीके भी दिखाए गए हैं।

हमें इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि नागरिक के रूप में हमारी भूमिका प्रतिनिधियों के चुनाव के साथ खत्म नहीं होती। इसके बाद हम अखबारों और अन्य संचार माध्यमों के ज़रिए इस बात पर नज़र रखते हैं कि हमारे सांसद क्या कर रहे हैं। अगर हमें लगता है कि वे सही काम नहीं कर रहे हैं तो हम उनकी आलोचना करते हैं। इस प्रकार हमें इस बात को सदा ध्यान में रखना चाहिए कि लोगों की जितनी हिस्सेदारी होगी और जितने उत्साह से वे जुड़ेंगे, उतना ही संसद को अपना काम सही ढंग से करने में मदद मिलेगी।

अभ्यास

1. 'कानून का शासन' पद से आप क्या समझते हैं? अपने शब्दों में लिखिए। अपना जवाब देते हुए कानून के उल्लंघन का कोई वास्तविक या काल्पनिक उदाहरण दीजिए।

2. इतिहासकार इस दावे को गलत ठहराते हैं कि भारत में कानून का शासन अंग्रेज़ों ने शुरू किया था। इसके कारणों में से दो कारण बताइए।

3. घरेलू हिंसा पर नया कानून किस तरह बना, महिला संगठनों ने इस प्रक्रिया में अलग-अलग तरीके से क्या भूमिका निभाई, उसे अपने शब्दों में लिखिए।

4. अपने शब्दों में लिखिए कि इस अध्याय में आए निम्नलिखित वाक्य (पृष्ठ 44-45) से आप क्या समझते हैं: अपनी बातों को मनवाने के लिए उन्होंने संघर्ष शुरू कर दिया। यह समानता का संघर्ष था। उनके लिए कानून का मतलब ऐसे नियम नहीं थे जिनका पालन करना उनकी मजबूरी हो। वे कानून को उससे अलग ऐसी व्यवस्था के रूप में देखना चाहते थे जो न्याय के विचार पर आधारित हों।

शब्द संकलन

आलोचना– किसी व्यक्ति या चीज़ में कमियाँ निकालना या उसे अस्वीकार कर देना। इस अध्याय में आलोचना शब्द का इस्तेमाल सरकार के कामकाज पर नागरिकों की ओर से होने वाली आलोचना के लिए किया गया है।

विकासक्रम– सरल से जटिल रूप तक विकास की प्रक्रिया को विकासक्रम कहा जाता है। आमतौर पर इस शब्द का इस्तेमाल पौधों या पशुओं की किसी प्रजाति के विकास का वर्णन करने के लिए किया जाता है। इस अध्याय में विकासक्रम का मतलब इस बात से है कि महिलाओं को घरेलू हिंसा से सुरक्षा प्रदान करने का विचार किस तरह एक अखिल भारतीय कानून के रूप में विकसित हुआ।

राजद्रोह– जब सरकार को ऐसा लगता है कि उसके खिलाफ़ प्रतिरोध पैदा हो रहा है या विद्रोह किया जा रहा है तो उसे राजद्रोह कहा जाता है। ऐसी स्थिति में सरकार को किसी की गिरफ़्तारी के लिए ठोस सुबूत की ज़रूरत नहीं होती। 1870 के राजद्रोह एक्ट के अंतर्गत अंग्रेज़ सरकार राजद्रोह की बहुत व्यापक परिभाषा का इस्तेमाल करती थी। लिहाजा वे इस कानून के तहत किसी भी व्यक्ति को गिरफ़्तार करके जेल में डाल सकते थे। राष्ट्रवादी नेता इस कानून को मनमाना मानते थे क्योंकि बहुत सारे लोगों को गिरफ़्तारी से पहले वज़ह भी नहीं बताई जाती थी। उन्हें बिना मुकदमा चलाए ही जेल में डाल दिया जाता था।

दमनकारी– स्वतंत्र और स्वाभाविक विकास या अभिव्यक्ति को रोकने के लिए सख्ती से नियंत्रण स्थापित करना। इस अध्याय में उन कानूनों को दमनकारी कहा गया है जो लोगों को बहुत निर्मम ढंग से नियंत्रित करते हैं और उन्हें सभा करने व अपनी बात कहने सहित मौलिक अधिकारों का इस्तेमाल करने से भी रोक देते हैं।

इकाई तीन

शिक्षकों के लिए

इन अध्यायों के ज़रिए विद्यार्थियों को न्यायपालिका से परिचित कराया जा रहा है। इस व्यवस्था के पुलिस, अदालत जैसे कुछ आयामों के बारे में बच्चे पहले से ही काफ़ी कुछ जानते होंगे। वे मीडिया के ज़रिए या अपने निजी अनुभवों के आधार पर इन संस्थाओं के बारे में जानते हैं। इस इकाई में मुख्य प्रयास यह है कि न्याय व्यवस्था की बुनियादी जानकारी और आपराधिक न्याय व्यवस्था से संबंधित उपयोगी जानकारियों को जोड़ा जाए। अध्याय 5 में जो मुद्दे उठाए गए हैं उन पर अगली कक्षाओं में भी बल दिया जाएगा। इन अध्यायों को पढ़ाते हुए विद्यार्थियों को इस बात का एहसास कराएँ कि संविधान के सिद्धांतों को कायम रखने में न्यायपालिका कितनी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। अध्याय 6 में आपराधिक न्याय व्यवस्था से जुड़े विभिन्न व्यक्तियों की भूमिका बताई गई है ताकि विद्यार्थी हर व्यक्ति की भूमिका और न्याय के विचार को समझ सकें।

अध्याय 5 शुरू करने से पहले पिछली इकाई में हुई 'कानून के शासन' की चर्चा को दोहरा लेना अच्छा रहेगा। इसके बाद ही कानून के शासन को कायम रखने में न्यायपालिका की भूमिका पर चर्चा शुरू की जा सकती है। अध्याय 5 में न्यायपालिका से संबंधित पाँच अलग-अलग, लेकिन एक-दूसरे से जुड़ी अवधारणाओं पर चर्चा की गई है। न्यायपालिका की स्वतंत्रता उसकी ज़िम्मेदारियों के निर्वाह के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण है। यह काफ़ी जटिल विचार है, लेकिन बच्चों को इसे समझना पड़ेगा। इसे बुनियादी स्तर पर ऐसी निर्णय प्रक्रियाओं के उदाहरणों से समझाया जा सकता है जिनसे विद्यार्थी परिचित हैं। इसकी संरचना को एक मामले के ज़रिए दिखाया गया है। विद्यार्थियों को इस बात के लिए प्रोत्साहित किया जाए कि वे न्यायिक प्रक्रिया की कार्यपद्धति को समझने के लिए कुछ अन्य मामलों पर भी चर्चा करें। 'न्याय तक पहुँच' शीर्षक इस अध्याय की अंतिम अवधारणा में जनहित याचिका (पी.आई.एल.) की भूमिका पर ज़ोर दिया गया है। इस हिस्से में न्याय मिलने में 'विलंब' का भी ज़िक्र किया गया है। इस भाग की चर्चा करते हुए मौलिक अधिकारों के बारे में बच्चों की बढ़ती समझदारी का इस्तेमाल करें।

अध्याय 6 के ज़रिए बच्चों को आपराधिक न्याय व्यवस्था से जुड़े विभिन्न व्यक्तियों की भूमिका तथा निष्पक्ष मुकदमे की प्रक्रिया से परिचित कराया जाएगा। इस अध्याय की शुरुआत एक चित्रकथा-पट्ट से होती है जिसमें चोरी की एक घटना का वर्णन किया गया है। इस कहानी के माध्यम से पुलिस, सरकारी वकील, न्यायाधीश की भूमिका तथा निष्पक्ष मुकदमे के बारे में चर्चा की गई है। इस बात की काफ़ी संभावना है कि इन चीज़ों के बारे में विद्यार्थियों की अपनी एक राय हो। हो सकता है कि वे आपराधिक न्याय व्यवस्था के बारे में काफ़ी नकारात्मक या निराशापूर्ण राय रखते हों। शिक्षक के नाते आपकी ज़िम्मेदारी यह है कि इस अध्याय में दिए गए आदर्शों की चर्चा के ज़रिए उनकी इस निराशा को दूर करें। इसके लिए दो तरीके अपनाए जा सकते हैं : एक तो आप इस बात पर ज़ोर दे सकते हैं कि आदर्श कार्यपद्धति क्या है और भारतीय संविधान में दिए गए सिद्धातों के साथ उनका क्या संबंध है। दूसरा तरीका यह है कि इन संस्थानों के कामकाज में सचेत और जागरूक जनता के योगदान को दोहराया जाए।

अध्याय 5

न्यायपालिका

अखबार पर नज़र डालते ही आपको देश भर की अदालतों द्वारा किए जा रहे कामों की झलक मिलने लगती है। लेकिन क्या आप बता सकते हैं कि हमें इन अदालतों की ज़रूरत क्यों पड़ती है? जैसा कि आप इकाई 2 में पढ़ चुके हैं, हमारे देश में कानून का शासन चलता है। इसका मतलब यह है कि सभी कानून सभी लोगों पर समान रूप से लागू होते हैं और जब किसी कानून का उल्लंघन किया जाता है तो एक निश्चित प्रक्रिया अपनाई जाती है। कानून के शासन को लागू करने के लिए हमारे पास एक न्याय व्यवस्था है। इस व्यवस्था में बहुत सारी अदालतें हैं जहाँ नागरिक न्याय के लिए जा सकते हैं। राज्य का अंग होने के नाते न्यायपालिका भी भारतीय लोकतंत्र की व्यवस्था बनाए रखने में अहम भूमिका निभाती है। यह इस भूमिका को केवल इसलिए निभा पाती है क्योंकि यह स्वतंत्र है। 'स्वतंत्र न्यायपालिका' का क्या मतलब होता है? क्या आपके आसपास की अदालत और नई दिल्ली में स्थित सर्वोच्च न्यायालय के बीच कोई संबंध है? इस अध्याय में आपको इन सवालों के जवाब मिलेंगे।

न्यायपालिका की क्या भूमिका है?

अदालतें बहुत सारे मुद्दों पर फ़ैसले सुनाती हैं। वे यह तय कर सकती हैं कि शिक्षकों को विद्यार्थियों की पिटाई नहीं करनी चाहिए; वे राज्यों के बीच नदियों के पानी के बँटवारे पर फ़ैसला दे सकती हैं; वे किसी अपराध के लिए लोगों को सज़ा दे सकती हैं। न्यायपालिका के कामों को मोटे तौर पर निम्नलिखित भागों में बाँटा जा सकता है–

विवादों का निपटारा– न्यायिक व्यवस्था नागरिकों, नागरिक व सरकार, दो राज्य सरकारों और केंद्र व राज्य सरकारों के बीच पैदा होने वाले विवादों को हल करने की क्रियाविधि मुहैया कराती है।

न्यायिक समीक्षा– संविधान की व्याख्या का अधिकार मुख्य रूप से न्यायपालिका के पास ही होता है। इस नाते यदि न्यायपालिका को ऐसा लगता है कि संसद द्वारा पारित किया गया कोई कानून संविधान के आधारभूत ढाँचे का उल्लंघन करता है तो वह उस कानून को रद्द कर सकती है। इसे न्यायिक समीक्षा कहा जाता है।

कानून की रक्षा और मौलिक अधिकारों का क्रियान्वयन– अगर देश के किसी भी नागरिक को ऐसा लगता है कि उसके मौलिक अधिकारों का उल्लंघन हुआ है तो वह सर्वोच्च न्यायालय या उच्च न्यायालय में जा सकता है। उदाहरण के लिए, कक्षा 7 की किताब में आपने हाकिम शेख के बारे में पढ़ा था जो खेतिहर थे। वे चलती हुई ट्रेन से गिरकर घायल हो गए थे। जब कई अस्पतालों ने उनका इलाज करने से इनकार कर दिया तो उनकी हालत काफ़ी खराब हो गई थी। इसी मामले की सुनवाई के बाद सर्वोच्च न्यायालय ने यह फ़ैसला दिया था कि संविधान के अनुच्छेद 21 में प्रत्येक नागरिक को जीवन का मौलिक अधिकार दिया गया है और इसमें स्वास्थ्य का अधिकार भी शामिल है। फलस्वरूप न्यायालय ने पश्चिम बंगाल सरकार को आदेश दिया कि वह अस्पतालों की लापरवाही के कारण हाकिम शेख को जो नुकसान हुआ है उसका मुआवज़ा दे। सरकार को यह आदेश भी दिया गया कि वह प्राथमिक स्वास्थ्य व्यवस्था की रूपरेखा तैयार करे और उसमें आपात स्थितियों में रोगियों के इलाज पर विशेष ध्यान दिया जाए *(पश्चिम बंग खेत मज़दूर समिति बनाम पश्चिम बंगाल राज्य (1996)।*

यह भारत का सर्वोच्च न्यायालय है। इसकी स्थापना 26 जनवरी 1950 को की गई थी। उसी दिन हमारा देश गणतंत्र बना था। अपने पूर्ववर्ती फेडरल कोर्ट ऑफ़ इंडिया (1937-49) की भाँति यह न्यायालय भी पहले संसद भवन के भीतर चेंबर ऑफ़ प्रिंसेज में हुआ करता था। इसे 1958 में इस इमारत में स्थानांतरित किया गया।

अपनी शिक्षिका की सहायता से इस तालिका में दिए गए खाली स्थानों को भरिए–	
विवाद की किस्म	**उदाहरण**
केंद्र और राज्य के बीच विवाद	
दो राज्यों के बीच विवाद	
दो नागरिकों के बीच विवाद	
ऐसे कानून जो संविधान का उल्लंघन करते हैं	

स्वतंत्र न्यायपालिका क्या होती है?

कल्पना कीजिए कि एक ताकतवर नेता ने आपके परिवार की ज़मीन पर कब्ज़ा कर लिया है। आप एक ऐसी व्यवस्था में रहते हैं जहाँ नेता किसी न्यायाधीश को उसके पद से हटा सकते हैं या उसका तबादला कर सकते हैं। जब आप इस मामले को अदालत में ले जाते हैं तो न्यायाधीश भी नेता की हिमायत करता दिखाई देता है।

नेताओं का न्यायाधीश पर जो नियंत्रण रहता है उसकी वज़ह से न्यायाधीश स्वतंत्र रूप से फ़ैसले नहीं ले पाते। स्वतंत्रता का यह अभाव न्यायाधीश को इस बात के लिए मजबूर कर देगा कि वह हमेशा नेता के ही पक्ष में फ़ैसला सुनाए। हम ऐसे बहुत सारे किस्से जानते हैं जहाँ अमीर और ताकतवर लोगों ने न्यायिक प्रक्रिया को प्रभावित करने का प्रयास किया है। लेकिन भारतीय संविधान इस तरह की दखलअंदाज़ी को स्वीकार नहीं करता। इसीलिए हमारे संविधान में न्यायपालिका को पूरी तरह स्वतंत्र रखा गया है।

क्या आपको ऐसा लगता है कि इस तरह की न्यायिक व्यवस्था में एक आम नागरिक भी किसी नेता के खिलाफ़ मुकदमा जीत सकता है? अगर नहीं तो क्यों?

इस स्वतंत्रता का एक पहलू है 'शक्तियों का बँटवारा'। जैसा कि आपने पहले अध्याय में पढ़ा था, यह हमारे संविधान का एक बुनियादी पहलू है। इसका मतलब यह है कि विधायिका और कार्यपालिका जैसी राज्य की अन्य शाखाएँ न्यायपालिका के काम में दखल नहीं दे सकतीं। अदालतें सरकार के अधीन नहीं हैं। न ही वे सरकार की ओर से काम करती हैं।

शक्तियों के इस बँटवारे को दुरुस्त रखने के लिए यह भी महत्त्वपूर्ण है कि उच्च न्यायालय और सर्वोच्च न्यायालय के सभी न्यायाधीशों की नियुक्ति में सरकार की अन्य शाखाओं का कोई दखल न हो। इसीलिए एक बार नियुक्त हो जाने के बाद किसी न्यायाधीश को हटाना बहुत मुश्किल होता है।

न्यायपालिका की यह स्वतंत्रता अदालतों को भारी ताकत देती है। इसके आधार पर वे विधायिका और कार्यपालिका द्वारा शक्तियों के दुरुपयोग को रोक सकती हैं। न्यायपालिका देश के नागरिकों के मौलिक अधिकारों की रक्षा में भी अहम भूमिका निभाती है क्योंकि अगर किसी को लगता है कि उसके अधिकारों का उल्लंघन हो रहा है तो वह अदालत में जा सकता है।

दो वज़ह बताइए कि लोकतंत्र के लिए स्वतंत्र न्यायपालिका अनिवार्य क्यों होती है?

भारत में अदालतों की संरचना कैसी है?

हमारे देश में तीन अलग-अलग स्तर पर अदालतें होती हैं। निचले स्तर पर बहुत सारी अदालतें होती हैं। सबसे ऊपरी स्तर पर केवल एक अदालत है। जिन अदालतों से लोगों का सबसे ज़्यादा ताल्लुक होता है, उन्हें अधीनस्थ न्यायालय या जिला अदालत कहा जाता है। ये अदालतें आमतौर पर ज़िले या तहसील के स्तर पर या किसी शहर में होती हैं। ये बहुत तरह के मामलों की सुनवाई करती हैं। प्रत्येक राज्य ज़िलों में बँटा होता है और हर ज़िले में एक ज़िला न्यायधीश होता है। प्रत्येक राज्य का एक उच्च न्यायालय होता है। यह अपने राज्य की सबसे ऊँची अदालत होती है। उच्च न्यायालयों से ऊपर सर्वोच्च न्यायालय होता है। यह देश की सबसे बड़ी अदालत है जो नयी दिल्ली में स्थित है। देश के मुख्य न्यायाधीश सर्वोच्च न्यायालय के मुखिया होते हैं। सर्वोच्च न्यायालय के फ़ैसले देश के बाकी सारी अदालतों को मानने होते हैं।

निचली अदालत से ऊपरी अदालत तक हमारी न्यायपालिका की संरचना एक पिरामिड जैसी लगती है। ऊपर दिए गए विवरण को पढ़ने के बाद नीचे दिए गए चित्र को भरें।

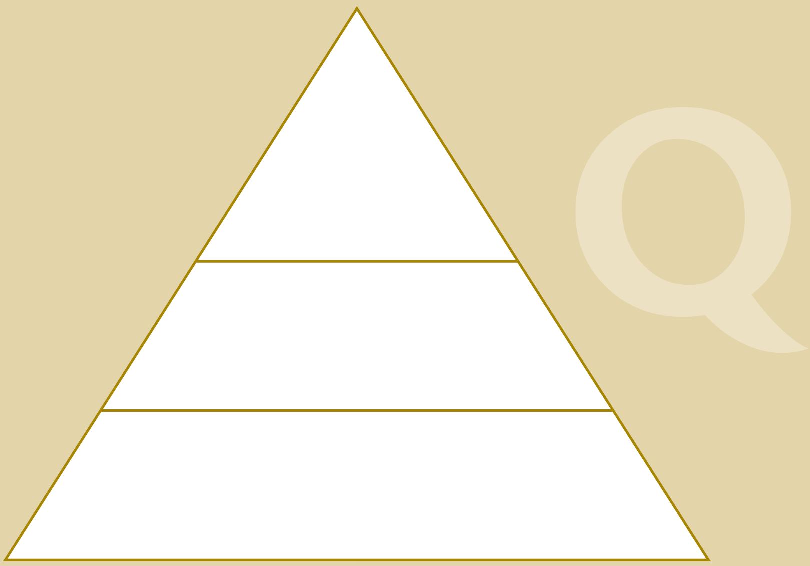

उच्च न्यायालयों की स्थापना सबसे पहले 1862 में कलकत्ता, बंबई और मद्रास में की गई ये तीनों प्रेसिडेंसी शहर थे। दिल्ली उच्च न्यायालय का गठन 1966 में हुआ। आज देश भर में 21 उच्च न्यायालय हैं। बहुत सारे राज्यों के अपने उच्च न्यायालय हैं जबकि पंजाब और हरियाणा का एक साझा उच्च न्यायालय है। यह चंडीगढ़ में स्थित है। दूसरी तरफ सातों उत्तर-पूर्वी राज्यों के लिए गुवाहाटी में एक ही उच्च न्यायालय रखा गया है। ज़्यादा से ज़्यादा लोगों के नज़दीक पहुँचने के लिए कुछ उच्च न्यायालयों की राज्य के अन्य हिस्सों में शाखाएँ भी हैं।

मद्रास उच्च न्यायालय

पटना उच्च न्यायालय

कर्नाटक उच्च न्यायालय

क्या विभिन्न स्तरों की ये अदालतें एक-दूसरे से जुड़ी हुई हैं? जी हाँ। भारत में हमारे पास एकीकृत न्यायिक व्यवस्था है। इसका मतलब यह है कि ऊपरी अदालतों के फ़ैसले नीचे की सारी अदालतों को मानने होते हैं। इस एकीकरण को समझने के लिए अपील की व्यवस्था को देखा जा सकता है। अगर किसी व्यक्ति को ऐसा लगता है कि निचली अदालत द्वारा दिया गया फ़ैसला सही नहीं है, तो वह उससे ऊपर की अदालत में अपील कर सकता है।

अपील की व्यवस्था को समझने के लिए आइए एक मुकदमे पर विचार करें। यह राज्य (दिल्ली प्रशासन) बनाम लक्ष्मण कुमार एवं अन्य का मुकदमा है जो निचली अदालत से सर्वोच्च न्यायालय तक लड़ा गया।

1980 के फ़रवरी महीने में लक्ष्मण कुमार ने 20 वर्षीया सुधा गोयल से विवाह किया था। वे दिल्ली में एक फ्लैट में रहते थे जहाँ लक्ष्मण के भाई और उनके परिवार भी रह रहे थे। 2 दिसंबर 1980 को सुधा की अस्पताल में मौत हो गई वह जली हुई थी। सुधा के घरवालों ने अदालत में मुकदमा दायर किया। जब निचली अदालत के सामने यह मुकदमा आया तो चार पड़ोसियों को भी गवाह के तौर पर बुलाया गया था। पड़ोसियों ने अपने बयान में कहा कि 1 दिसंबर की रात को उन्होंने सुधा की चीख सुनी थी और मामला जानने के लिए वे बलपूर्वक लक्ष्मण के घर में घुसे। वहाँ उन्होंने देखा कि सुधा की साड़ी से आग की लपटें उठ रही थीं। उन्होंने सुधा को एक बोरे और कम्बल में लपेटकर आग बुझाई सुधा ने उन्हें बताया कि उसकी सास शंकुतला ने उसके ऊपर मिट्टी का तेल डाला था और लक्ष्मण कुमार ने आग लगाई थी। मुकदमे के दौरान सुधा के परिवार वालों और एक पड़ोसी ने कहा

कि सुधा के ससुराल वाले उसके साथ बहुत ज़्यादा मारपीट करते थे। उनकी माँग थी कि पहले बच्चे के पैदा होने पर उन्हें एक बड़ी रकम, एक स्कूटर और एक फ्रिज दिया जाए। अपने बचाव में लक्ष्मण और उसकी माँ ने कहा कि सुधा दूध गरम कर रही थी कि तभी उसकी साड़ी में आग लग गई इन सभी बयानों और साक्ष्यों के आधार पर निचली अदालत ने लक्ष्मण, उसकी माँ शकुंतला और सुधा के जेठ सुभाष चन्द्र को दोषी करार दिया और तीनों को मौत की सज़ा सुनाई।

1983 के नवंबर महीने में तीनों आरोपियों ने इस फ़ैसले के खिलाफ़ उच्च न्यायालय में अपील दायर कर दी। दोनों तरफ़ के वकीलों के तर्क सुनने के बाद उच्च न्यायालय ने फ़ैसला लिया कि सुधा की मौत एक दुर्घटना थी। वह मिट्टी के तेल से जलने वाले स्टोव से जली थी। अदालत ने लक्ष्मण, शकुंतला और सुभाष चन्द्र, तीनों को बरी कर दिया।

शायद आपको कक्षा 7 की किताब में महिला आंदोलन पर केंद्रित चित्र-निबंध याद होगा। उसमें आपने पढ़ा था कि 1980 के दशक में देश भर के महिला संगठन 'दहेज हत्याओं' के खिलाफ़ आवाज़ उठा रहे थे। उन्हें इस बात पर दुख था कि अदालतें इस तरह की घटनाओं में दोषियों को दंडित नहीं कर पा रही हैं। उच्च न्यायालय के उपरोक्त फ़ैसले ने ऐसी जागरूक महिलाओं को काफ़ी परेशान कर दिया। उन्होंने कई जगह धरने-प्रदर्शन किए और उच्च न्यायालय के फ़ैसले के खिलाफ़ सर्वोच्च न्यायालय में एक और अपील दायर कर दी। यह अपील 'इंडियन फेडरेशन ऑफ़ वीमेन लॉयर्स' नामक संगठन की तरफ़ से दायर की गई थी।

उपरोक्त मामले को पढ़ने के बाद दो वाक्यों में लिखिए कि अपील की व्यवस्था के बारे में आप क्या जानते हैं।

1985 में सर्वोच्च न्यायालय ने लक्ष्मण और उसकी माँ व भाई को बरी करने के फ़ैसले के खिलाफ़ अपील पर सुनवाई शुरू कर दी। वकीलों के तर्क सुनने के बाद सर्वोच्च न्यायालय ने जो फ़ैसला दिया वह उच्च न्यायालय के फ़ैसले से अलग था। सर्वोच्च न्यायालय ने लक्ष्मण और उसकी माँ को तो दोषी पाया, लेकिन सुभाष चन्द्र को आरोपों से बरी कर दिया क्योंकि उसके खिलाफ़ पर्याप्त सबूत नहीं थे। सर्वोच्च न्यायालय ने दोनों आरोपियों को उम्रकैद की सज़ा सुनाई।

अधीनस्थ अदालतों को कई अलग-अलग नामों से संबोधित किया जाता है। उन्हें ट्रायल कोर्ट या ज़िला न्यायालय, अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, प्रधान न्यायिक मजिस्ट्रेट, मेट्रोपॉलिटन मजिस्ट्रेट, सिविल जज न्यायालय आदि नामों से बुलाया जाता है। यह रायपुर, छत्तीसगढ़ में स्थित ज़िला अदालत का चित्र है।

विधि व्यवस्था की विभिन्न शाखाएँ कौन सी हैं?

दहेज हत्या का यह मामला 'समाज के विरुद्ध अपराध' की श्रेणी में आता है। यह आपराधिक/फ़ौजदारी कानून का उल्लंघन है। फ़ौजदारी कानून के अलावा हमारी विधि व्यवस्था दीवानी कानून या सिविल लॉ से संबंधित मामलों को भी देखती है। फ़ौजदारी और दीवानी कानून के बीच फ़र्क को समझने के लिए नीचे दी गई तालिका को देखें।

क्र.	फौजदारी कानून	दीवानी कानून
1.	ये ऐसे व्यवहार या क्रियाओं से संबंधित हैं जिन्हें कानून में अपराध माना गया है। उदाहरण के लिए चोरी, दहेज के लिए औरत को तंग करना, हत्या आदि।	इसका संबंध व्यक्ति विशेष के अधिकारों के उल्लंघन या अवहेलना से होता है। उदाहरण के लिए ज़मीन की बिक्री, चीज़ों की खरीदारी, किराया, तलाक आदि से संबंधित विवाद।
2.	इसमें सबसे पहले आमतौर पर प्रथम सूचना रिपोर्ट/प्राथमिकी (एफ.आई.आर.) दर्ज कराई जाती है। इसके बाद पुलिस अपराध की जाँच करती है और अदालत में केस फाइल करती है।	प्रभावित पक्ष की ओर से न्यायालय में एक याचिका दायर की जाती है। अगर मामला किराये से संबंधित है तो मकान मालिक या किरायेदार मुकदमा दायर कर सकता है।
3.	अगर व्यक्ति दोषी पाया जाता है तो उसे जेल भेजा जा सकता है और उस पर जुर्माना भी किया जा सकता है।	अदालत राहत की व्यवस्था करती है। उदाहरण के लिए अगर मकान मालिक और किरायेदार के बीच विवाद है तो अदालत यह आदेश दे सकती है कि किरायेदार मकान को खाली करे और बकाया किराया चुकाए।

फ़ौजदारी और दीवानी कानून के बारे में आप जो समझते हैं उसके आधार पर इस तालिका को भरें–

उल्लंघन का विवरण	कानून की शाखा	अपनाई जाने वाली प्रक्रिया
कुछ लड़के स्कूल जाते वक्त लड़कियों को हर रोज़ परेशान करते हैं।		
एक किरायेदार को मकान खाली करने के लिए मजबूर किया जा रहा है और वह मकान मालिक के खिलाफ़ अदालत में मुकदमा दायर कर देता है।		

क्या हर व्यक्ति अदालत की शरण में जा सकता है?

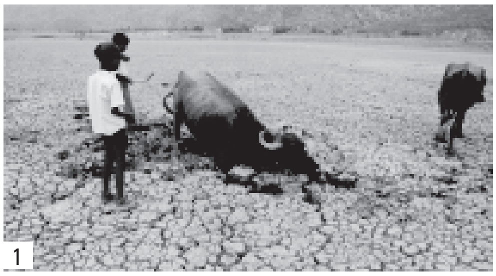
1

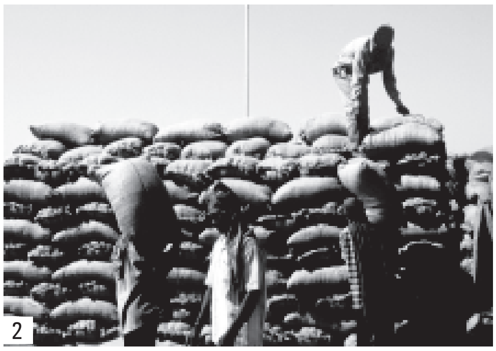
2

3

4

सिद्धांतत: भारत के सभी नागरिक देश के न्यायालयों की शरण में जा सकते हैं। इसका अर्थ यह है कि प्रत्येक नागरिक को अदालत के माध्यम से न्याय माँगने का अधिकार है। जैसा कि आपने पीछे पढ़ा है, न्यायालय हमारे मौलिक अधिकारों की रक्षा में बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। अगर किसी नागरिक को ऐसा लगता है कि उसके मौलिक अधिकारों का उल्लंघन हो रहा है तो वह न्याय के लिए अदालत में जा सकता है। अदालत की सेवाएँ सभी के लिए उपलब्ध हैं, लेकिन वास्तव में गरीबों के लिए अदालत में जाना काफी मुश्किल साबित होता है। कानूनी प्रक्रिया में न केवल काफ़ी पैसा और कागज़ी कार्यवाही की ज़रूरत पड़ती है, बल्कि उसमें समय भी बहुत लगता है। अगर कोई गरीब आदमी पढ़ना-लिखना नहीं जानता और उसका पूरा परिवार दिहाड़ी मज़दूरी से चलता है तो अदालत में जाने और इंसाफ़ पाने की उम्मीद उसके लिए बहुत मुश्किल होती है।

इसी बात को ध्यान में रखते हुए 1980 के दशक में सर्वोच्च न्यायालय ने जनहित याचिका (पी.आई.एल.) की व्यवस्था विकसित की थी। इस तरह सर्वोच्च न्यायालय ने न्याय तक ज़्यादा से ज़्यादा लोगों की पहुँच स्थापित करने के लिए प्रयास किया है। न्यायालय ने किसी भी व्यक्ति या संस्था को ऐसे लोगों की ओर से जनहित याचिका दायर करने का अधिकार दिया है जिनके अधिकारों का उल्लंघन हो रहा है। यह याचिका उच्च न्यायालय या सर्वोच्च न्यायालय में दायर की जा सकती है। न्यायालय ने कानूनी प्रक्रिया को बेहद सरल बना दिया है। अब सर्वोच्च न्यायालय या उच्च न्यायालय के नाम भेजे गए पत्र या तार (टेलीग्राम) को भी जनहित याचिका माना जा सकता है। शुरुआती सालों में जनहित याचिका के माध्यम से बहुत सारे मुद्दों पर लोगों को न्याय दिलाया गया था। बंधुआ मज़दूरों को अमानवीय श्रम से मुक्ति दिलाने और बिहार में सज़ा काटने के बाद भी रिहा नहीं किए गए कैदियों को रिहा करवाने के लिए जनहित याचिका का ही इस्तेमाल किया गया था।

क्या आप जानते हैं कि सरकारी और सरकारी सहायता प्राप्त स्कूलों में बच्चों को दोपहर का जो भोजन (मिड-डे मील) दिया जाता है उसकी व्यवस्था भी एक जनहित याचिका के फलस्वरूप ही हुई थी। दाईं ओर दिए गए चित्रों को देखें और नीचे दिए गए विवरण को पढ़ें।

चित्र 1 : वर्ष 2001 में राजस्थान और उड़ीसा में पड़े सूखे की वजह से लाखों लोगों के सामने भोजन का भारी अभाव पैदा हो गया था।

चित्र 2 : सरकारी गोदाम अनाज से भरे पड़े थे। बहुत सारा गेहूँ चूहों की भेंट चढ़ गया था।

चित्र 3 : इस स्थिति को देखते हुए पीपुल्स यूनियन फॉर सिविल लिबर्टीज (पी.यू.सी.एल.) नामक एक संगठन ने सर्वोच्च न्यायालय में जनहित याचिका दायर की। याचिका में कहा गया था कि संविधान के अनुच्छेद 21 में दिए गए जीवन के मौलिक अधिकारों में भोजन का अधिकार भी शामिल है। राज्य की इस दलील को भी गलत साबित कर दिया गया कि उसके पास संसाधन नहीं हैं। इसका आधार यह था कि सरकारी गोदाम अनाज से भरे हुए थे। तब सर्वोच्च न्यायालय ने आदेश दिया कि सबको भोजन उपलब्ध कराना राज्य का दायित्व है।

चित्र 4 : लिहाज़ा सर्वोच्च न्यायालय ने सरकार को आदेश दिया कि वह नए रोज़गार पैदा करे, राशन की सरकारी दुकानों के ज़रिए सस्ती दर पर भोजन उपलब्ध कराए और बच्चों को स्कूल में दोपहर का भोजन दिया जाए। न्यायालय ने सरकारी योजनाओं के क्रियान्वयन के बारे में रिपोर्ट करने के लिए दो खाद्य आयुक्तों को भी नियुक्त किया।

आम आदमी के लिए अदालत तक पहुँचना ही न्याय तक पहुँचना होता है। अदालतें नागरिकों के मौलिक अधिकारों की व्याख्या में एक अहम भूमिका निभाती हैं। जैसा कि आपने उपरोक्त उदाहरण में देखा है, अदालत ने ही संविधान के अनुच्छेद 21 की व्याख्या करने के बाद यह कहा था कि जीवन के अधिकार में भोजन का अधिकार भी शामिल होता है। इसीलिए अदालत ने राज्य को आदेश दिया कि वह दोपहर के भोजन की योजना (मिड-डे मील) सहित सभी लोगों को भोजन मुहैया कराने के लिए आवश्यक कदम उठाए।

लेकिन अदालत के कुछ फ़ैसले ऐसे भी रहे हैं जिन्हें लोग आम आदमी के लिए नुकसानदेह मानते हैं। उदाहरण के लिए, गरीबों के आवास अधिकार जैसे मुद्दों पर काम करने वाले कार्यकर्ताओं का मानना है कि बस्तियों/झुग्गी-झोंपड़ियों को बेदखल करने के बारे में अदालत द्वारा दिए गए हाल के फ़ैसले पुराने फ़ैसलों के विरुद्ध हैं। हाल के फ़ैसलों में झुग्गी वासियों को शहर में घुसपैठियों की तरह देखा जा रहा है

ओल्गा टेलिस बनाम बम्बई नगर निगम के मुकदमे में न्यायालय ने एक महत्त्वपूर्ण फ़ैसला दिया। इस फ़ैसले में अदालत ने आजीविका के अधिकार को जीवन के अधिकार का हिस्सा बताया। नीचे इस फ़ैसले के कुछ अंश दिए गए हैं। इन्हें पढ़ने पर पता चलता है कि न्यायाधीशों ने जीवन के अधिकार को आजीविका के अधिकार से किस तरह जोड़कर देखा।

अनुच्छेद 21 द्वारा दिए गए जीवन के अधिकार का दायरा बहुत व्यापक है। 'जीवन' का मतलब केवल जैविक अस्तित्व बनाए रखने से कहीं ज़्यादा होता है। इसका मतलब केवल यह नहीं है कि कानून के द्वारा तय की गई प्रक्रिया जैसे मृत्युदंड देने और उसे लागू करने के अलावा और किसी तरीके से किसी की जान नहीं ली जा सकती। जीवन के अधिकार का यह एक आयाम है। इस अधिकार का इतना ही महत्त्वपूर्ण पहलू आजीविका का अधिकार भी है क्योंकि कोई भी व्यक्ति जीने के साधनों यानी आजीविका के बिना जीवित नहीं रह सकता।

किसी व्यक्ति को पटरी या झुग्गी-बस्ती से उजाड़ देने पर उसके आजीविका के साधन फौरन नष्ट हो जाते हैं। यह एक ऐसी बात है जिसे हर मामले में साबित करने की ज़रूरत नहीं है। प्रस्तुत मामले में आनुभविक साक्ष्यों से यह सिद्ध हो जाता है कि याचिकाकर्ता झुग्गियों और पटरियों पर रहते हैं क्योंकि वे शहर में छोटे-मोटे काम-धंधों में लगे होते हैं और उनके पास रहने की कोई और जगह नहीं होती। वे अपने काम करने की जगह के आसपास किसी पटरी पर या झुग्गियों में रहने लगते हैं। इसलिए अगर उन्हें पटरी या झुग्गियों से हटा दिया जाए तो उनका रोज़गार ही खत्म हो जाएगा। इसका निष्कर्ष यह निकलता है कि याचिकाकर्ता को उजाड़ने से वे अपनी आजीविका से हाथ धो बैठेंगे और इस प्रकार जीवन से भी वंचित हो जाएँगे।

जबकि पहले वाले फ़ैसलों (जैसे 1985 में ओल्गा टेलिस बनाम बम्बई नगर निगम के मुकदमे में दिया गया फ़ैसला) में झुग्गी वासियों की आजीविका बचाने का प्रयास किया जा रहा था।

न्याय तक आम लोगों की पहुँच को प्रभावित करने वाला एक मुद्दा यह है कि मुकदमे की सुनवाई में अदालतें कई साल लगा देती हैं। इसी देरी को ध्यान में रखते हुए अकसर यह कहा जाता है कि 'इंसाफ में देरी यानी इंसाफ़ का क़त्ल।'

26 नवंबर 2007 को भारत के मुख्य न्यायाधीश के.जी. बालकृष्णन ने एक भाषण में कहा था कि "भारतीय न्यायपालिका में 26 न्यायीधीशों से लैस एक सर्वोच्च न्यायालय, 725 स्वीकार्य पदों वाले 21 उच्च न्यायालय (जिनमें 1 मार्च 2007 को केवल 597 न्यायाधीश थे) और 14,477 अधीनस्थ न्यायालय/न्यायाधीश (31 दिसंबर 2006 को उनकी वास्तविक संख्या 11,767 थी) हैं।"

इसके बावजूद इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि लोकतांत्रिक भारत में न्यायपालिका ने एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। न्यायपालिका ने कार्यपालिका और विधायिका की शक्तियों पर अंकुश लगाया है और नागरिकों के अधिकारों की सुरक्षा की है। संविधान सभा के सदस्यों ने एक ऐसी न्यायपालिका का बिलकुल सही सपना देखा था जो पूरी तरह स्वतंत्र हो। यह हमारे लोकतंत्र का एक बुनियादी पहलू है।

इस चित्र में 22 मई 1987 को मारे गए हाशिमपुरा के 43 मुसलमानों के कुछ परिजन दिखाई दे रहे हैं। ये परिवार पिछले 20 साल से न्याय के लिए संघर्ष कर रहे हैं। मुकदमा शुरू होने में जो इतना विलंब हुआ, उसके कारण सितंबर 2002 में सर्वोच्च न्यायालय ने यह मामला उत्तर प्रदेश से दिल्ली स्थानांतरित कर दिया था। यह मुकदमा अभी भी जारी है। इसमें प्रोविंशियल आर्म्ड कॉँस्टेब्युलरी (पी.ए.सी.) के 19 लोगों पर हत्या और अन्य आपराधिक मामलों के आरोप में मुकदमे चलाए जा रहे हैं। इस मुकदमे में 2007 तक केवल तीन गवाहों के बयान दर्ज किए गए थे। (24 मई 2007 को प्रेस क्लब, लखनऊ में लिया गया फोटो।)

अभ्यास

1. आप पढ़ चुके हैं कि 'कानून को कायम रखना और मौलिक अधिकारों को लागू करना' न्यायपालिका का एक मुख्य काम होता है। आपकी राय में इस महत्त्वपूर्ण काम को करने के लिए न्यायपालिका का स्वतंत्र होना क्यों ज़रूरी है?

2. अध्याय 1 में मौलिक अधिकारों की सूची दी गई है। उसे फिर पढ़ें। आपको ऐसा क्यों लगता है कि संवैधानिक उपचार का अधिकार न्यायिक समीक्षा के विचार से जुड़ा हुआ है?

3. नीचे तीनों स्तर के न्यायालय को दर्शाया गया है। प्रत्येक के सामने लिखिए कि उस न्यायालय ने सुधा गोयल के मामले में क्या फ़ैसला दिया था? अपने जवाब को कक्षा के अन्य विद्यार्थियों द्वारा दिए गए जवाबों के साथ मिलाकर देखें।

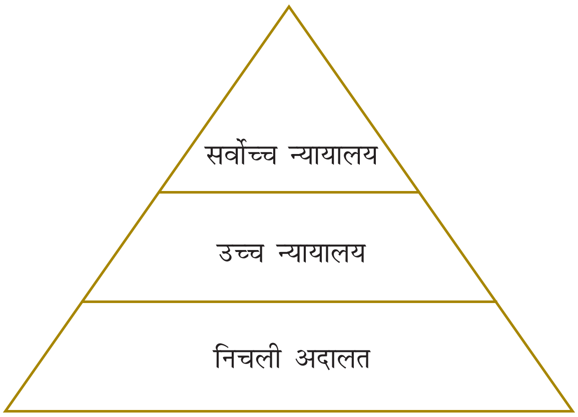

4. सुधा गोयल मामले को ध्यान में रखते हुए नीचे दिए गए बयानों को पढ़िए। जो वक्तव्य सही हैं उन पर सही का निशान लगाइए और जो गलत हैं उनको ठीक कीजिए।

   (क) आरोपी इस मामले को उच्च न्यायालय लेकर गए क्योंकि वे निचली अदालत के फ़ैसले से सहमत नहीं थे।

   (ख) वे सर्वोच्च न्यायालय के फ़ैसले के खिलाफ़ उच्च न्यायालय में चले गए।

   (ग) अगर आरोपी सर्वोच्च न्यायालय के फ़ैसले से संतुष्ट नहीं हैं तो दोबारा निचली अदालत में जा सकते हैं।

5. आपको ऐसा क्यों लगता है कि 1980 के दशक में शुरू की गई जनहित याचिका की व्यवस्था सबको इंसाफ दिलाने के लिहाज़ से एक महत्त्वपूर्ण कदम थी?

6. ओल्गा टेलिस बनाम बम्बई नगर निगम मुकदमे में दिए गए फ़ैसले के अंशों को दोबारा पढ़िए। इस फ़ैसले में कहा गया है कि आजीविका का अधिकार जीवन के अधिकार का हिस्सा है। अपने शब्दों में लिखिए कि इस बयान से जजों का क्या मतलब था?

7. 'इंसाफ़ में देरी यानी इंसाफ़ का क़त्ल' इस विषय पर एक कहानी बनाइए।

8. अगले पन्ने पर शब्द संकलन में दिए गए प्रत्येक शब्द से वाक्य बनाइए।

9. यह पोस्टर भोजन अधिकार अभियान द्वारा बनाया गया है।

इस पोस्टर को पढ़ कर भोजन के अधिकार के बारे में सरकार के दायित्वों की सूची बनाइए।

इस पोस्टर में कहा गया है कि "भूखे पेट भरे गोदाम! नहीं चलेगा, नहीं चलेगा!!" इस वक्तव्य को पृष्ठ 61 पर भोजन के अधिकार के बारे में दिए गए चित्र निबंध से मिला कर देखिए।

शब्द संकलन

बरी करना– जब अदालत किसी व्यक्ति को उन आरोपों से मुक्त कर देती है जिनके आधार पर उसके खिलाफ़ मुकदमा चलाया गया था तो उसे बरी करना कहा जाता है।

अपील करना– निचली अदालत के फ़ैसले के विरुद्ध जब कोई पक्ष उस पर पुनर्विचार के लिए ऊपरी न्यायालय में जाता है तो इसे अपील करना कहा जाता है।

मुआवज़ा– किसी नुकसान या क्षति की भरपाई के लिए दिए जाने वाले पैसे को मुआवज़ा कहा जाता है।

बेदखली– अभी लोग जिस ज़मीन/मकानों में रह रहे हैं, यदि उन्हें वहाँ से हटा दिया जाता है तो इसे बेदखली कहा जाएगा।

उल्लंघन– किसी कानून को तोड़ने या मौलिक अधिकारों के हनन की क्रिया को उल्लंघन कहा गया है।

अध्याय 6

हमारी आपराधिक न्याय प्रणाली

जब हम किसी को अपराध करते हुए देखते हैं तो सबसे पहले पुलिस को खबर करते हैं। वास्तविक जीवन या फ़िल्मों में आपने देखा होगा कि पुलिस अफ़सर रिपोर्ट दर्ज करते हैं और अपराधियों को गिरफ़्तार करते हैं। अपराधियों को गिरफ़्तार करने में पुलिस की जो भूमिका होती है उसके आधार पर कई बार ऐसा लगता है मानो पुलिस ही तय करती है कि कोई अपराधी है या नहीं। लेकिन ऐसा नहीं है। जब किसी व्यक्ति को गिरफ़्तार किया जाता है तो अदालत ही तय करती है कि आरोपी वाकई दोषी है या नहीं। संविधान के अनुसार, अगर किसी भी व्यक्ति पर कोई आरोप लगाया जाता है तो उसे निष्पक्ष सुनवाई का अधिकार होता है।

क्या आप जानते हैं कि निष्पक्ष सुनवाई का मौका हासिल करने का क्या मतलब होता है? क्या आपने एफ.आई.आर. के बारे में सुना है? या क्या आप जानते हैं सरकारी वकील कौन होता है? इस अध्याय में हम चोरी की एक काल्पनिक घटना के ज़रिए यह समझने की चेष्टा करेंगे कि न्याय पाने की प्रक्रिया किस तरह चलती है और आपराधिक न्याय व्यवस्था में अलग-अलग लोगों की क्या भूमिका होती है। ध्यान रखें कि ज़्यादातर मामले उसी प्रक्रिया से गुजरते हैं जिसका हमने अपने काल्पनिक उदाहरण में ज़िक्र किया है। फलस्वरूप इन प्रक्रियाओं को समझना और आपराधिक न्याय व्यवस्था में अलग-अलग लोगों की भूमिकाओं को समझना महत्त्वपूर्ण होता है। अगर कभी ऐसा मौका आता है तो यह जानकारी आपके लिए उपयोगी साबित हो सकती है।

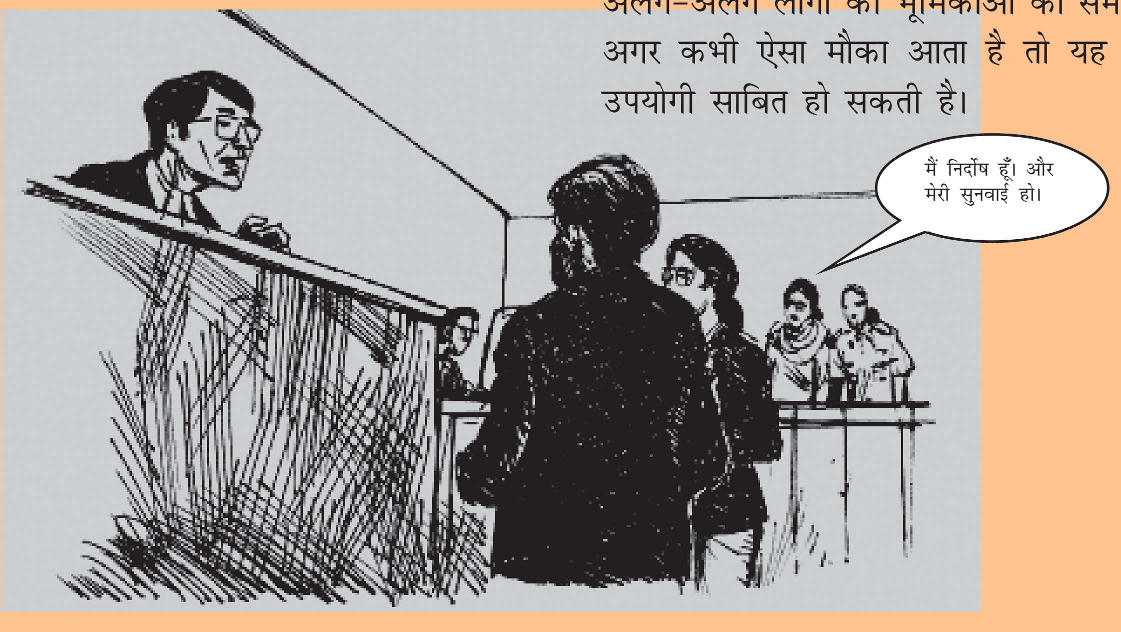

18.07.06

मुंबई के एक मकान में श्रीमती शिंदे तैयार हो रही हैं। पिछले एक घंटे से वे गले का हार ढूँढ़ रही हैं।

शांति हेमब्राम पिछले तीन साल से इस मकान में काम कर रही है।

शिंदे साहब शांति के बक्से की तलाशी लेते हैं जिसमें एक लिफ़ाफ़े में 10,000 रुपए मिलते हैं। वह शांति पर चिल्लाने लगते हैं। उन्हें यकीन हो जाता है कि शांति ने हार बेच दिया है और यह उसी का पैसा है।

मि. शिंदे थाने में पहुँच जाते हैं।

शिंदे साहब के कहने पर सब-इंस्पेक्टर राव एफ.आई.आर. दर्ज कर लेते हैं।

शिंदे साहब सब-इंस्पेक्टर राव के साथ घर आते हैं।

19.07.06

शांति का भाई सुशील आता है और सब-इंस्पेक्टर राव से विनती करता है कि वह शांति को छोड़ दें।

सब-इंस्पेक्टर राव सुशील को भी दो दिन तक हवालात में रखता है। उसे सब-इंस्पेक्टर राव एवं कई कांस्टेबल पीटते हैं और गालियाँ देते हैं। वे उस पर दबाव डालते हैं कि वह इल्ज़ाम कबूल कर ले। वे उसे यह मानने के लिए कहते हैं कि वह और उसकी बहन शांति घरेलू नौकरों का एक गिरोह चलाते हैं और वह गिरोह घरों से गहने चोरी करता है। शिंदे के पड़ोस से गहनों के गायब होने की कुछ और शिकायतें भी आ चुकी थीं। जब सुशील बार-बार यही कहता रहता है कि वह निर्दोष है और फ़ैक्टरी में मज़दूरी करता है तो दो दिन बाद पुलिस उसे छोड़ देती है।

23.08.06

अदालत ने एक महीने बाद शांति की जमानत की अर्जी मंजूर तो कर ली, लेकिन कोई भी 20,000 रुपए के लिए उसका ज़मानती बनने को तैयार नहीं था। नतीज़तन ज़मानत के बावजूद वह जेल में ही पड़ी रही। वह गहरे सदमे की हालत में है। वह डरी हुई है कि मुकदमे का क्या नतीज़ा निकलेगा।

14.09.06

पुलिस ने मजिस्ट्रेट की अदालत में आरोपपत्र दायर कर दिया है। अदालत की ओर से आरोपपत्र और गवाहों के बयानों की एक नकल शांति को दे दी जाती है। शांति अदालत को बताती है कि चोरी के इस झूठे इल्ज़ाम से बचने के लिए उसके पास कोई वकील नहीं है।

मजिस्ट्रेट महोदय शांति की दलील सुनकर अधिवक्ता कमला रॉय को सरकारी खर्चे पर बचाव पक्ष का वकील बना देते हैं।

संविधान के अनुच्छेद 22 के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को एक वकील के ज़रिए अपना बचाव करने का मौलिक अधिकार प्राप्त है। संविधान के अनुच्छेद 39-ए में ऐसे नागरिकों को वकील मुहैया कराने की ज़िम्मेदारी राज्य के ऊपर सौंपी गई है जो गरीबी या किसी और वज़ह से वकील नहीं रख सकते।

अधिवक्ता कमला रॉय शांति से अदालत में मिलती हैं।

11.12.06

अदालत शांति पर आरोप लगाती है कि उसने श्रीमती शिंदे का सोने का हार चुराया है। और चोरी के हार को बेचकर शांति को जो 10,000 रुपए मिले वे उसके पास पाए गए।

मजिस्ट्रेट के सामने मुकदमा शुरू हो जाता है।

08.03.07

सरकारी वकील राज्य की ओर से मुकदमे में हाजिर होता है। वह श्रीमती एवं श्री शिंदे को मुख्य गवाह के रूप में पेश करता है।

इसके बाद अधिवक्ता रॉय श्रीमती शिंदे से ज़िरह करती हैं।

20.04.07

अधिवक्ता रॉय बचाव पक्ष के गवाह के तौर पर सुशील और उसके मालिक से कुछ सवाल पूछती हैं। इन दोनों के बयानों के आधार पर सुश्री रॉय यह साबित कर देती हैं कि शांति के संदूक में मिले 10,000 रुपए सुशील और शांति की कमाई की रकम भी हो सकती है।

14.05.07

जब मुकदमा खत्म होने के नज़दीक पहुँच जाता है तभी सुशील को पता चलता है कि इंस्पेक्टर शर्मा ने युवाओं के एक गिरोह का भंडाफोड़ किया है। इस गिरोह के लोग शिंदे के मोहल्ले में गहनों की चोरी करते हैं। श्रीमती शिंदे के बेटे के कुछ दोस्त भी इस गिरोह के सदस्य हैं। उनके पास से श्रीमती शिंदे का हार बरामद हो जाता है। सुशील यह बात अधिवक्ता रॉय को बताता है। अब अधिवक्ता रॉय बचाव पक्ष के गवाह के तौर पर इंस्पेक्टर शर्मा को अदालत में पेश करती हैं।

15.07.07

न्यायाधीश महोदय सारे गवाहों के बयान सुनते हैं। इंस्पेक्टर शर्मा का बयान सुनने के बाद अधिवक्ता रॉय न्यायाधीश के सामने यह दलील देती हैं कि अब शांति निर्दोष साबित हो चुकी है इसलिए उसे बरी कर दिया जाए।

इस घटना के आधार पर आप देख सकते हैं कि पुलिस, सरकारी वकील, बचाव पक्ष का वकील और न्यायाधीश, ये चार अधिकारी आपराधिक न्याय व्यवस्था में मुख्य लोग होते हैं। इस मामले में आपने इन चारों की भूमिका को भी देख लिया है। आइए अब उनकी भूमिकाओं को और व्यापक स्तर पर देखें।

अपराध की जाँच करने में पुलिस की क्या भूमिका होती है?

पुलिस का एक महत्त्वपूर्ण काम होता है किसी अपराध के बारे में मिली शिकायत की जाँच करना। जाँच के लिए गवाहों के बयान दर्ज किए जाते हैं और सबूत इकट्ठा किए जाते हैं। इस जाँच के आधार पर पुलिस अपनी राय बनाती है। अगर पुलिस को ऐसा लगता है कि सबूतों से आरोपी का दोष साबित होता दिखाई दे रहा है तो पुलिस अदालत में आरोपपत्र/चार्जशीट दाखिल कर देती है। जैसा कि अध्याय की शुरुआत में ही कहा गया था कि यह तय कर देना पुलिस का काम नहीं है कि कोई व्यक्ति दोषी है या नहीं। यह न्यायाधीश को तय करना होता है।

दूसरी इकाई में आपने कानून के शासन के बारे में पढ़ा था। इसका सीधा मतलब यह होता है कि हर व्यक्ति देश के कानून के अधीन है। पुलिस भी इसी कानून के तहत आती है। लिहाज़ा पुलिस को हमेशा कानून के मुताबिक और मानवाधिकारों का सम्मान करते हुए जाँच करनी चाहिए। सर्वोच्च न्यायालय ने गिरफ़्तारी, हिरासत और पूछताछ के बारे में पुलिस के लिए कुछ दिशानिर्देश तय किए हुए हैं। इन दिशानिर्देशों के अनुसार पुलिस को जाँच के दौरान किसी को भी सताने, पीटने या गोली मारने का अधिकार नहीं है। किसी छोटे से छोटे अपराध के लिए भी पुलिस किसी को कोई सज़ा नहीं दे सकती।

संविधान के अनुच्छेद 22 और फ़ौजदारी कानून में प्रत्येक गिरफ़्तार व्यक्ति को निम्नलिखित मौलिक अधिकार दिए गए हैं–

- गिरफ़्तारी के समय उसे यह जानने का अधिकार है कि गिरफ़्तारी किस कारण से की जा रही है।
- गिरफ़्तारी के 24 घंटों के भीतर मजिस्ट्रेट के सामने पेश होने का अधिकार।
- गिरफ़्तारी के दौरान या हिरासत में किसी भी तरह के दुर्व्यवहार या यातना से बचने का अधिकार।
- पुलिस हिरासत में दिए गए इकबालिया बयान को आरोपी के खिलाफ़ सबूत के तौर पर इस्तेमाल नहीं किया जा सकता।
- 15 साल से कम उम्र के बालक और किसी भी महिला को केवल सवाल पूछने के लिए थाने में नहीं बुलाया जा सकता।

आपको ऐसा क्यों लगता है कि पुलिस हिरासत के दौरान अपनी गलती मानते हुए आरोपी द्वारा दिए गए बयानों को उसके खिलाफ़ सबूत के तौर पर इस्तेमाल नहीं किया जा सकता?

सर्वोच्च न्यायालय ने किसी भी व्यक्ति की गिरफ़्तारी, हिरासत और पूछताछ के बारे में पुलिस एवं अन्य संस्थाओं के लिए कुछ खास शर्त और प्रक्रियाएँ तय की हुई हैं। इन नियमों को डी.के. बसु दिशानिर्देश कहा जाता है। इनमें से कुछ दिशानिर्देश इस प्रकार हैं–

- गिरफ़्तारी या जाँच करने वाले पुलिस अधिकारी की पोशाक पर उसकी पहचान, नामपट्टी तथा पद स्पष्ट व सटीक रूप से अंकित होना चाहिए।
- गिरफ़्तारी के समय अरेस्ट मेमो के रूप में गिरफ़्तारी संबंधी पूरी जानकारी का कागज़ तैयार किया जाए। उसमें गिरफ़्तारी के समय व तारीख का उल्लेख होना चाहिए। उसके सत्यापन के लिए कम से कम एक गवाह होना चाहिए। वह गिरफ़्तार सदस्य के परिवार का व्यक्ति भी हो सकता है। अरेस्ट मेमो पर गिरफ़्तार होने वाले व्यक्ति के दस्तखत होने चाहिए।
- गिरफ़्तार किए गए, हिरासत में रखे गए या जिससे पूछताछ की जा रही है, ऐसे व्यक्ति को अपने किसी संबंधी या दोस्त या शुभचिंतक को जानकारी देने का अधिकार होता है।
- जब गिरफ़्तार व्यक्ति का दोस्त या संबंधी उस ज़िले से बाहर रहता हो तो गिरफ़्तारी के 8-12 घंटे के भीतर उसे गिरफ़्तारी के समय, स्थान और हिरासत की जगह के बारे में जानकारी भेज दी जानी चाहिए।

1. आइए अब शांति की कहानी पर वापस लौटते हैं और इन सवालों के जवाब खोजते हैं–

(क) जब चोरी के इल्ज़ाम में शांति को गिरफ़्तार किया गया, उसी दौरान सब-इंस्पेक्टर राव ने उसके भाई सुशील को भी दो दिन तक पुलिस हिरासत में रखा। क्या उसको हिरासत में रखने की कार्रवाई कानूनन सही थी? क्या इससे डी.के. बसु दिशानिर्देशों का उल्लंघन हुआ है?

(ख) क्या सब-इंस्पेक्टर राव ने शांति को गिरफ़्तार करने और उसके खिलाफ़ मुकदमा दायर करने से पहले गवाहों से पर्याप्त सवाल पूछे और ज़रूरी सबूत इकट्ठा किए थे? पुलिस की ज़िम्मेदारियों के हिसाब से आपकी राय में सब-इंस्पेक्टर राव को जाँच के लिहाज़ से और क्या-क्या करना चाहिए था?

2. आइए अब थोड़ी अलग स्थिति में मामले को देखते हैं। मान लीजिए कि शांति और उसका भाई सुशील थाने में जाकर यह शिकायत करते हैं कि शिंदे के 20 वर्षीय बेटे ने उनकी बचत के 15,000 हज़ार रुपए चुरा लिए हैं। क्या आपको लगता है कि थाने का प्रभारी अधिकारी फ़ौरन उनकी एफ.आई.आर. दर्ज कर लेगा? ऐसे कारक लिखिए जो आपकी राय में एफ.आई.आर. लिखने या न लिखने के पुलिस के फ़ैसले को प्रभावित करते हैं।

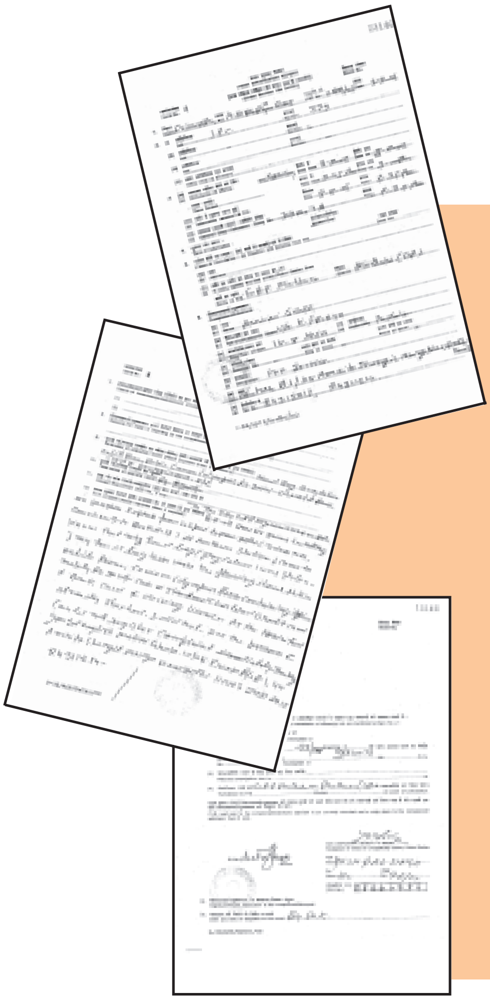

प्रथम सूचना रिपोर्ट/प्राथमिकी (एफ.आई.आर.)

पुलिस एफ.आई.आर. दर्ज होने के बाद ही किसी अपराध की पड़ताल शुरू कर सकती है। कानून में कहा गया है कि किसी संज्ञेय अपराध की सूचना मिलने पर थाने के प्रभारी अधिकारी को फौरन एफ.आई.आर. दर्ज करनी चाहिए। पुलिस को यह सूचना मौखिक या लिखित, किसी भी रूप में मिल सकती है। एफ.आई.आर. में आमतौर पर वारदात की तारीख, समय और स्थान का उल्लेख किया जाता है। उसमें वारदात के मूल तथ्यों और घटनाओं का विवरण भी लिखा जाता है। अगर अपराधियों का पता हो तो उनके नाम तथा गवाहों का भी उल्लेख किया जाता है। एफ.आई.आर. में शिकायत दर्ज कराने वाले का नाम और पता लिखा होता है। एफ.आई.आर. के लिए पुलिस के पास एक खास फॉर्म होता है। इस पर शिकायत करने वाले के दस्तखत कराए जाते हैं। शिकायत करने वाले को पुलिस से एफ.आई.आर. की एक नकल मुफ़्त पाने का कानूनी अधिकार होता है।

सरकारी वकील की क्या भूमिका होती है?

किसी आपराधिक उल्लंघन को जनता के विरुद्ध माना जाता है। इसका मतलब यह है कि वह अपराध केवल पीड़ित व्यक्ति को ही नुकसान नहीं पहुँचाता, बल्कि पूरे समाज के प्रति अपराध होता है। आपको पिछले अध्याय में दहेज के लिए सुधा की हत्या की घटना याद है? आरोपी लक्ष्मण और उसके परिवार के खिलाफ़ यह मुकदमा राज्य की ओर से दायर किया गया था। इसीलिए इस मुकदमे को 'राज्य (दिल्ली प्रशासन) बनाम लक्ष्मण कुमार एवं अन्य' का नाम दिया गया था। इसी तरह शांति वाले मुकदमे को भी 'श्रीमती शिंदे बनाम शांति हेमब्राम' की बजाय 'राज्य बनाम शांति हेमब्राम' के नाम से जाना जा सकता है।

अदालत में सरकारी वकील राज्य का पक्ष प्रस्तुत करता है। सरकारी वकील की भूमिका तब शुरू होती है जब पुलिस जाँच पूरी करके अदालत में आरोपपत्र दाखिल कर देती है। सरकारी वकील की इस जाँच में कोई भूमिका नहीं होती। उसे राज्य की ओर से अभियोजन प्रस्तुत करना होता है। न्यायालय के पदाधिकारी के रूप में उसकी ज़िम्मेदारी है कि वह निष्पक्ष रूप से अपना काम करे और अदालत के सामने सारे ठोस तथ्य, गवाह और सबूत पेश करे। तभी अदालत सही फ़ैसला दे सकती है।

न्यायाधीश की क्या भूमिका होती है?

न्यायाधीश की वही हैसियत होती है जो खेलों में अंपायर की होती है। वे निष्पक्ष भाव से और खुली अदालत में मुकदमे का संचालन करते हैं। न्यायाधीश सारे गवाहों के बयान सुनते हैं और अभियोजन पक्ष तथा बचाव पक्ष की तरफ से पेश किए गए सबूतों की जाँच करते हैं। अपने सामने मौजूद बयानों व सबूतों के आधार पर कानून के अनुसार न्यायाधीश ही तय करते हैं कि आरोपी सचमुच दोषी है या नहीं। अगर आरोपी दोषी पाया जाता है तो न्यायाधीश उसे सज़ा सुनाते हैं। वह कानून में दिए गए प्रावधानों के हिसाब से दोषी व्यक्ति को जेल भेज सकते हैं या उस पर जुर्माना लगा सकते हैं या एक साथ दोनों तरह की सज़ा दे सकते हैं।

सारे गवाहों के बयान सुनने के बाद न्यायाधीश ने शांति के मुकदमे में क्या कहा?

निष्पक्ष सुनवाई (fair trial) क्या होती है?

आइए थोड़ी देर के लिए कल्पना करें कि अगर न्यायाधीश महोदय शांति का मुकदमा किसी और तरह संचालित करते तो क्या हो सकता था? अगर अदालत ने शांति को आरोपपत्र और गवाहों के बयानों की नकल न दी होती तो क्या होता? अगर न्यायाधीश किसी ऐसी जगह पर मुकदमा चलाते जहाँ

शांति और सुशील, दोनों ही नहीं जा सकते तो क्या होता? अगर न्यायाधीश ने शांति की अधिवक्ता रॉय को अभियोजन की ओर से प्रस्तुत किए गए श्रीमती शिंदे आदि गवाहों से जिरह करने का पर्याप्त समय न दिया होता और पहले ही मान लेते कि शांति दोषी है तो क्या होता? अगर इस तरह की कोई भी बात होती तो इसे निष्पक्ष सुनवाई नहीं कहा जा सकता था। इसकी वज़ह यह है कि निष्पक्ष सुनवाई के लिए कई बातों का पालन करना ज़रूरी होता है। संविधान के अनुच्छेद 21 में जीवन के अधिकार का आश्वासन दिया गया है। इसका अर्थ यह है कि किसी भी व्यक्ति के जीवन या स्वतंत्रता को केवल एक तर्कसंगत और न्यायपूर्ण कानूनी प्रक्रिया के ज़रिए ही छीना जा सकता है। निष्पक्ष सुनवाई में यह सुनिश्चित किया जाता है कि संविधान के अनुच्छेद 21 का पूरी तरह पालन किया जाएगा। आइए अब चित्रकथा-पट्ट में दिए गए शांति के मुकदमे पर वापस लौटें और एक निष्पक्ष सुनवाई के मूलभूत तत्त्वों पर ध्यान दें-

पहली बात, शांति को आरोप पत्र और उन सभी साक्ष्यों की एक-एक प्रति दी गई थी जो अभियोजन पक्ष ने उसके खिलाफ़ अदालत में पेश किए थे। शांति पर चोरी का आरोप लगाया था जो कानूनन एक अपराध है। यह मुकदमा जनता के सामने **खुली अदालत** में चलाया गया। शांति का भाई सुशील अदालत की कार्रवाइयों में मौजूद था। **मुकदमा आरोपी की उपस्थिति** में चलाया गया। शांति का **एक वकील ने बचाव** किया। शांति की अधिवक्ता रॉय को **अभियोजन पक्ष की ओर से पेश किए गए सारे गवाहों से ज़िरह करने का मौका दिया गया। अधिवक्ता रॉय को शांति की ओर से गवाह पेश करने का अधिकार दिया गया।**

हालाँकि पुलिस ने शांति के खिलाफ़ चोरी का मामला दर्ज किया था लेकिन न्यायाधीश ने **उसे निर्दोष मानते** हुए मुकदमा चलाया। अब अभियोजन पक्ष को **निर्णायक रूप से** सिद्ध करना था कि शांति ही दोषी है। इस मुकदमे में अभियोजन पक्ष ऐसा नहीं कर पाया।

महत्त्वपूर्ण बात यह है कि न्यायाधीश ने अदालत के सामने पेश किए गए **साक्ष्यों के आधार पर** ही मुकदमे का फ़ैसला सुनाया। न्यायाधीश ने शांति की कमज़ोर स्थिति के आधार पर बिना सोचे-समझे यह फ़ैसला नहीं ले लिया कि वह सचमुच चोर है। इसकी बजाय न्यायाधीश का आचरण लगातार **निष्पक्ष** रहा और चूँकि साक्ष्यों से यह सिद्ध हो गया कि शांति की बजाय कुछ युवकों ने चोरी की थी, इसलिए उन्होंने शांति को आज़ाद कर दिया। शांति को इसलिए न्याय मिला क्योंकि उसे **निष्पक्ष सुनवाई** का मौका दिया गया था।

इस अध्याय में हमने जिन लोगों का ज़िक्र किया है संविधान और कानून, दोनों में यह कहा गया है कि उन लोगों को अपनी ज़िम्मेदारी सही ढंग से निभानी चाहिए। इसका मतलब है कि प्रत्येक नागरिक चाहे वह विभिन्न वर्ग, जाति, धर्म और वैचारिक मान्यताओं के हों, उन्हें निष्पक्ष सुनवाई का अधिकार दिया जाए। कानून का शासन कहता है कि कानून के सामने हर कोई बराबर है। अगर प्रत्येक नागरिक को संविधान के माध्यम से निष्पक्ष सुनवाई का अधिकार न दिया जाए तो इस सिद्धांत का कोई खास मतलब नहीं रह जाएगा।

पृष्ठ 74 पर मोटे अक्षरों में जो प्रक्रियाएँ लिखी गई हैं वे सभी निष्पक्ष सुनाई के लिए बहुत ज़रूरी हैं। शांति के मुकदमे के इस विवरण के आधार पर अपने शब्दों में लिखें कि निम्नलिखित प्रक्रियाओं का आप क्या मतलब समझते हैं–

1. खुली अदालत–
2. सबूतों के आधार पर–
3. अभियोजन पक्ष के गवाहों से जिरह–

अपनी कक्षा में चर्चा करें कि अगर शांति के मुकदमे में निम्नलिखित प्रक्रियाओं का पालन न किया जाता तो क्या हो सकता था?

1. अगर उसे अपने बचाव के लिए वकील न मिलता।
2. अगर अदालत उसे निर्दोष नहीं मानते हुए मुकदमा चलाती।

अभ्यास

पीसलैंड नामक शहर में फिएस्ता फुटबॉल टीम के समर्थकों को पता चलता है कि पास के एक शहर में जो वहाँ से लगभग 40 कि.मी. है, जुबली फुटबॉल टीम के समर्थकों ने खेल के मैदान को खोद दिया है। वहीं अगले दिन दोनों टीमों के बीच अंतिम मुकाबला होने वाला है। फिएस्ता के समर्थकों का एक झुंड घातक हथियारों से लैस होकर अपने शहर के जुबली समर्थकों पर धावा बोल देता है। इस हमले में दस लोग मारे जाते हैं, पाँच औरतें बुरी तरह जख्मी होती हैं, बहुत सारे घर नष्ट हो जाते हैं और पचास से ज़्यादा लोग घायल होते हैं।

कल्पना कीजिए कि आप और आपके सहपाठी आपराधिक न्याय व्यवस्था के अंग हैं। अब अपनी कक्षा को इन चार समूहों में बाँट दीजिए–

1. पुलिस 2. सरकारी वकील 3. बचाव पक्ष का वकील 4. न्यायाधीश

नीचे दी गई तालिका के दाएँ कॉलम में कुछ ज़िम्मेदारियाँ दी गई हैं। इन ज़िम्मेदारियों को बाईं ओर दिए गए अधिकारियों की भूमिका के साथ मिलाएँ। प्रत्येक टोली को अपने लिए उन कामों का चुनाव करने दीजिए जो फिएस्ता समर्थकों की हिंसा से पीड़ित लोगों को न्याय दिलाने के लिए आवश्यक हैं। ये काम किस क्रम में किए जाएँगे?

भूमिकाएँ	कार्य
पुलिस	गवाहों को सुनना
सरकारी वकील	गवाहों के बयान दर्ज करना
बचाव पक्ष का वकील	गवाहों से बहस करना
न्यायाधीश	जले हुए घरों की तस्वीरें लेना
	सबूत दर्ज करना
	फिएस्ता समर्थकों को गिरफ़्तार करना
	फ़ैसला लिखना
	पीड़ितों का पक्ष प्रस्तुत करना
	यह तय करना कि आरोपी कितने साल जेल में रहेंगे
	अदालत में गवाहों की जाँच करना
	फ़ैसला सुनाना
	हमले की शिकार महिलाओं की डॉक्टरी जाँच कराना
	निष्पक्ष सुनवाई करना
	आरोपी व्यक्तियों से मिलना

अब यही स्थिति लें और किसी ऐसे विद्यार्थी को उपरोक्त सारे काम करने के लिए कहें जो फिएस्ता क्लब का समर्थक है। यदि आपराधिक न्याय व्यवस्था के सारे कामों को केवल एक ही व्यक्ति करने लगे तो क्या आपको लगता है कि पीड़ितों को न्याय मिल पाएगा? क्यों नहीं?

आप ऐसा क्यों मानते हैं कि आपराधिक न्याय व्यवस्था में विभिन्न लोगों को अपनी अलग-अलग भूमिका निभानी चाहिए? दो कारण बताएँ।

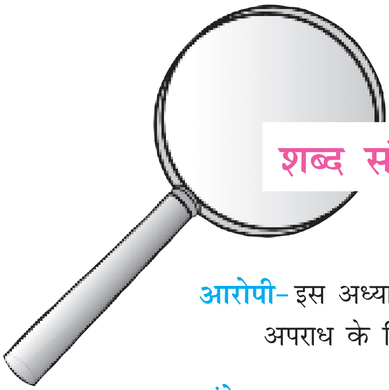

शब्द संकलन

आरोपी– इस अध्याय के संदर्भ में ऐसे व्यक्ति को आरोपी कहा गया है जिस पर अदालत में किसी अपराध के लिए मुकदमा चल रहा है।

संज्ञेय– इस अध्याय में उन अपराधों को संज्ञेय अपराध कहा गया है जिनके लिए पुलिस किसी व्यक्ति को अदालत की अनुमति के बिना भी गिरफ़्तार कर सकती है।

ज़िरह– जब कोई गवाह अदालत में अपना बयान देता है तो दूसरे पक्ष का वकील भी उससे कुछ सवाल पूछता है जिससे उसके पिछले बयान को सही या गलत साबित किया जा सकें इसे ज़िरह कहते हैं।

हिरासत (detention)– पुलिस द्वारा किसी को गैर कानूनी ढंग से अपने कब्ज़े में रखना।

निष्पक्ष– इसका मतलब है स्पष्ट या न्यायसंगत व्यवहार करना और किसी एक पक्ष का समर्थन न करना।

किसी अपराध का आरोप लगाना– जब न्यायाधीश आरोपी को लिखित रूप से सूचित करता है कि उस पर किस अपराध के लिए मुकदमा चलाया जाएगा तो इसे अपराध का आरोप लगाना कहा जाता है।

गवाह– जब किसी व्यक्ति को अदालत में यह बयान देने के लिए बुलाया जाता है कि उसने मामले के संबंध में क्या देखा, सुना या जाना है तो उसे गवाह कहा जाता है।

इकाई चार

शिक्षकों के लिए

समानता एक मूल्य भी है और अधिकार भी। इसे हमने *सामाजिक एवं राजनीतिक जीवन* किताब की शृंखला में समझने का प्रयास किया है। इन सालों के दौरान हमने समानता की अवधारणात्मक समझदारी को और पुख़्ता बनाया है। हमने औपचारिक समानता और वस्तुगत समानता के बीच फ़र्क स्पष्ट करते हुए वस्तुगत समानता की दिशा में बढ़ने की ज़रूरत को समझा है। कक्षा 7 की पुस्तक में दी गई कांता की कहानी इस बात का उदाहरण है। हमने इस बात को भी रेखांकित किया कि समानता को समझने के लिए असमानता के अनुभव और उसकी अभिव्यक्ति पर ध्यान देना भी ज़रूरी होता है। इस प्रकार हमने डॉ. अम्बेडकर और ओमप्रकाश वाल्मिकी के बचपन के अनुभवों के माध्यम से भेदभाव और असमानता के आपसी संबंधों की पड़ताल की है। संसाधनों तक पहुँच असमानता के कारण किस तरह प्रभावित होती है, इस बात को हमने शिक्षा तक महिलाओं की पहुँच के उदाहरण से समझने का प्रयास किया है। रससुंदरी देवी और रुकैया बेगम के लेखन से हमें अंदाज़ा मिलता है कि इस अवरोध को दूर करने के लिए औरतें किस तरह संघर्ष करती हैं। हमने संविधान में दिए गए मूल अधिकारों का बार–बार ज़िक्र किया है। इनके माध्यम से हम इस बात पर ज़ोर देना चाहते हैं कि समानता तथा प्रतिष्ठा का विचार भारत में लोकतंत्र के संचालन के लिए महत्त्वपूर्ण है।

इस इकाई में हाशियाकरण या मुख्यधारा से अलग–थलग पड़ जाने की अवधारणा के ज़रिए इस बात पर और बारीकी से ध्यान दिया गया है कि असमानता से विभिन्न समूहों और समुदायों पर किस तरह के असर पड़ते हैं। इस इकाई में आदिवासी, मुसलमान और दलित, इन तीन समूहों पर खास ध्यान दिया गया है। इन तीन समूहों को इसलिए चुना गया क्योंकि इन तीनों समूहों के हाशियाकरण के कारण अलग–अलग हैं और कई बार उन्हें यह हाशियाकरण अलग–अलग रूपों में अनुभव होता है। इस इकाई को पढ़ाते हुए यह चेष्टा होनी चाहिए कि विद्यार्थियों को उन कारकों को पहचानने में मदद मिले जो हाशियाकरण को बढ़ाने में योगदान देते हैं। साथ ही विद्यार्थियों को हाशिये पर डाल दिए गए तबकों को पहचानने और उनके दर्द को समझने के भी योग्य बनाया जाना चाहिए। आपको चाहिए कि आप बच्चों को अपने इलाके में इन हाशियाई समुदायों को पहचानने में मदद दें। अध्याय 7 में हम आदिवासी और मुसलिम समुदायों के अनुभवों पर ध्यान देंगे। अध्याय 8 में इस बात पर चर्चा की गई है कि सरकार और स्वयं इन समुदायों ने विभिन्न संघर्षों के ज़रिए अपने हाशियाकरण को दूर करने के लिए किस तरह कोशिशें की हैं। सरकार इस स्थिति से निपटने के लिए कानून बनाती है और इन समुदायों को लाभ पहुँचाने के लिए कई नीतियाँ और योजनाएँ लागू करती है।

इस इकाई में हमने आँकड़ों, कविताओं, चित्रकथा–पट्ट, केस स्टडी इत्यादि कई तरह के शैक्षणिक साधनों का इस्तेमाल किया है। आदिवासी अपने जीवन में हाशियाकरण की प्रक्रियाओं को किस तरह महसूस करते हैं, इस पर चर्चा करने के लिए चित्रकथा–पट्ट का इस्तेमाल करें। दलितों से संबंधित केस स्टडी के सहारे आप इस कानून की अहमियत पर चर्चा कर सकते हैं और यह देख सकते हैं कि इस कानून से मौलिक अधिकारों के प्रति संविधान की प्रतिबद्धता किस तरह प्रतिबिंबित होती है। मुसलिम समुदाय की स्थिति को समझने के लिए हमने आँकड़ों, एक चिट्ठी और एक केस स्टडी का इस्तेमाल किया है जिनका कक्षा में विश्लेषण किया जा सकता है। इस इकाई में समाजविज्ञान और भाषा की पाठ्यपुस्तकों के बीच खिंची विभाजन रेखाओं को तोड़ने के लिए गीतों और कविताओं का इस्तेमाल किया गया है। इस बहाने हम यह भी कहना चाहते हैं कि विभिन्न समुदायों की रोज़ाना की ज़िंदगी में इस तरह का फ़र्क नहीं होता। वैसे भी न्याय के संघर्षों ने ऐसे अनेक अविस्मरणीय गीतों और कविताओं को जन्म दिया है जिन्हें पाठ्यपुस्तकों में प्राय: जगह नहीं मिल पाती।

इस अध्याय में कई ऐसे मुद्दे हैं जो कक्षा के भीतर तीखी बहस खड़ी कर सकते हैं। बच्चे इन मुद्दों से अवगत भी हैं। लिहाज़ा हमें इन बातों पर चर्चा करने के परिपक्व और संतुलित रास्ते ढूँढ़ने होंगे। आपको यह सुनिश्चित करने के लिए इन चर्चाओं में अहम भूमिका निभानी है कि कोई भी बच्चा या बच्चों का समूह भेदभाव का शिकार महसूस न करे, किसी को मजाक का पात्र बनने या चर्चाओं में अप्रासंगिक हो जाने का बोध न हो।

अध्याय 7

हाशियाकरण की समझ

सामाजिक रूप से हाशिये पर होने का क्या मतलब होता है?

आप कॉपियों के जिन पन्नों पर लिखते हैं उनकी बाईं ओर खाली जगह होती है जहाँ आमतौर पर लिखा नहीं जाता है। उसे पन्ने का हाशिया कहा जाता है। कुछ ऐसा ही समाज में भी होता है। हाशियाई का मतलब होता है कि जिसे किनारे या हाशिये पर ढकेल दिया गया हो। ऐसे में वह व्यक्ति चीज़ों के केंद्र में नहीं रहता। यह एक ऐसी चीज़ है जिसको आपने अपनी कक्षा या खेल के मैदान में भी कभी न कभी महसूस किया होगा। अगर आप अपनी कक्षा के ज़्यादातर बच्चों जैसे नहीं हैं यानी अगर संगीत या फ़िल्मों में आपकी रुचि अलग तरह की है, अगर आपका बोलने का ढंग औरों से अलग है, अगर आप औरों की तरह गपशप में ज़्यादा मज़ा नहीं लेते, अगर आप वह खेल नहीं खेलते जो ज़्यादातर बच्चे खेलना चाहते हैं, अगर आपका पहनावा अलग तरह का है तो इस बात की गुंजाइश बढ़ जाएगी कि आपके संगी-साथी आपको 'अपने बीच का/की' नहीं मानेंगे। इस तरह आप अकसर यह महसूस करते हैं कि आप 'औरों से अलग' हैं, गोया आपकी कही बात, आपके अहसास, आपकी सोच और आपका व्यवहार सही नहीं है या औरों को पसंद नहीं है।

कक्षा की तरह समाज में भी ऐसे समूह या समुदाय हो सकते हैं जिन्हें इस तरह की बेदखली का अहसास रहता है। उनके हाशियाकरण की वज़ह यह हो सकती है कि वे एक अलग भाषा बोलते हैं, अलग रीति-रिवाज अपनाते हैं या बहुसंख्यक समुदाय के मुकाबले किसी दूसरे धर्म के हैं। वे अपनी गरीबी के कारण, सामाजिक हैसियत में 'कमतर' माने जाने की वज़ह से और शेष लोगों के मुकाबले कमतर मनुष्य के रूप में देखे जाने की वज़ह से खुद को हाशिये पर महसूस करते हैं। कई बार हाशियाई समूहों को लोग दुश्मनी और डर के भाव से भी देखते हैं। फ़ासले और अलग-थलग किए जाने का यह अहसास समुदायों को संसाधनों और मौकों का फ़ायदा उठाने से रोक देता है। फलस्वरूप हाशियाई समुदाय अपने अधिकारों के लिए आवाज़ उठाने में चूक जाते हैं। उन्हें समाज के ऐसे ताकतवर और वर्चस्वशाली तबकों के मुकाबले शक्तिहीनता और पराजय का अहसास रहता है जिनके पास ज़मीन है, धन-दौलत है, जो ज़्यादा पढ़े-लिखे और राजनीतिक रूप से ज़्यादा ताकतवर हैं। इसका मतलब यह है कि हाशियाकरण किसी एक ही दायरे में महसूस नहीं होता। आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक सभी दायरे समाज के कुछ तबकों को हाशियाई महसूस करने के लिए विवश करते हैं।

इस अध्याय में आप दो ऐसे समुदायों के बारे में पढ़ेंगे जिन्हें आज भारत में सामाजिक रूप से हाशिये पर माना जाता है।

आदिवासी और हाशियाकरण

दिल्ली में एक आदिवासी परिवार

सोमा और हेलेन दादाजी के साथ बैठकर टेलीविजन पर गणतंत्र दिवस की परेड देख रही हैं

तभी अचानक हमें बताया गया कि ये जंगल हमारे नहीं हैं। वन विभाग के अफ़सरों और ठेकेदारों ने बहुत सारा जंगल साफ़ कर डाला। अगर हम जंगलों को बचाते तो वे हमारी पिटाई करते थे। हमें अदालत में घसीटा जाता था। वहाँ न तो हमें वकील मिलता था और न हम अपना मुकदमा खुद लड़ सकते थे।

फिर अफ़सर आए। उन्होंने कहा कि हमारी ज़मीन के नीचे लोहे के भंडार हैं। वे उसे निकालना चाहते थे। उन्होंने बड़े-बड़े वादे किए। कहते थे कि अगर हम अपनी ज़मीन उन्हें बेच दें तो वे हमें नौकरी व पैसा देंगे। कुछ गाँव वाले बहुत खुश हुए। कुछ को लगता था कि इससे हमारी ज़िंदगी तबाह हो जाएगी। कुछ ने तो कागज़ों पर अँगूठे के निशान भी लगा दिए। उन्हें पता ही नहीं था कि अँगूठे का निशान लगाकर वे अपनी ज़मीन बेच रहे हैं। मुट्ठी भर लोगों को उन्होंने छोटी-मोटी नौकरी पर रख लिया। लेकिन ज़्यादातर लोगों ने अपनी ज़मीनें नहीं बेचीं।

हममें से बहुत सारे लोगों को अपने घर-बार छोड़ने पड़े। आस-पास के कस्बों में जो काम-धंधे समय-समय पर मिल जाते, हम उन्हें करने लगे।

तब उन्होंने हमारे साथ मार-पीट शुरू कर दी। वे हमें तरह-तरह से धमकाने लगे। आखिरकार उन्होंने सबको अपने पुरखों की ज़मीन बेचने और छोड़ने के लिए मजबूर कर दिया। हमारी पूरी जीवनशैली का रातोंरात नामोनिशान गायब हो गया।
ओह दादू। और हमारी ज़मीन। उसका...
तीस एकड़ ज़मीन के बदले ठेकेदार से हमें बस थोड़ा-सा पैसा मिला। मैं अपने ज़्यादातर दोस्तों से उसके बाद फिर कभी नहीं मिल पाया।
शहर में वे पैसे मुश्किल से थोड़े दिन चले। हमारे पास रोज़ी-रोटी का कोई साधन नहीं बचा था। हम सब किराये पर एक कमरे के मकान में रहने लगे। अपनी बेखौफ़ ज़िंदगी और उस खुले माहौल की हमें बहुत याद आती थी।
कुछ साल बाद तुम्हारे पिताजी को दिल्ली में नौकरी मिल गई और हम यहाँ चले आए। वे बड़े कठिनाई भरे दिन थे...। इसीलिए तुम दोनों को भी हम कई साल तक स्कूल नहीं भेज पाए।
मुझे स्कूल जाने से नफ़रत थी। हम पढ़ाई में इतने पीछे थे कि सारे बच्चे हमारा मज़ाक उड़ाते थे। हम घर में संथाली भाषा बोलते थे इसलिए हिंदी में बात ही नहीं कर पाते थे।
लेकिन अब हमारे कुछ दोस्त बन गए हैं। मैं थोड़ी-बहुत अंग्रेज़ी भी बोल लेती हूँ।
काश, मैं अपने दोस्तों को अपना गाँव बरबाद होने से पहले दिखा सकता।
तुम लोग अभी भी उन्हें अपने गाँव के बारे में बता सकती हो। इससे वे काफी कुछ सीख सकते हैं...।
एक दिन मैं अपनी यानी आदिवासियों की कहानी पर एक फ़िल्म बनाऊँगी।

अभी आपने पढ़ा कि किस तरह दादू को उड़ीसा का अपना गाँव छोड़ना पड़ा। दादू की कहानी हमारे देश के लाखों आदिवासियों की कहानी से मिलती-जुलती है। इस समुदाय के हाशियाकरण के बारे में आप इस अध्याय में और विस्तार से पढ़ेंगे।

कम से कम तीन कारण बताइए कि विभिन्न समूह हाशिये पर क्यों चले जाते हैं।

दादू को उड़ीसा का अपना गांव क्यों छोड़ना पड़ा?

आदिवासी कौन लोग हैं?

आदिवासी शब्द का मतलब होता है 'मूल निवासी'। ये ऐसे समुदाय हैं जो जंगलों के साथ जीते आए हैं और आज भी उसी तरह जी रहे हैं। भारत की लगभग 8 प्रतिशत आबादी आदिवासियों की है। देश के बहुत सारे महत्त्वपूर्ण खनन एवं औद्योगिक क्षेत्र आदिवासी इलाकों में हैं। जमशेदपुर, राउरकेला, बोकारो और भिलाई का नाम आपने सुना होगा। आदिवासियों की सारी आबादी एक जैसी नहीं है। भारत में 500 से ज़्यादा तरह के आदिवासी समूह हैं। छत्तीसगढ़, झारखंड, मध्य प्रदेश, उड़ीसा, गुजरात, महाराष्ट्र, राजस्थान, आंध्र प्रदेश, पश्चिम बंगाल तथा उत्तर-पूर्व के अरुणाचल प्रदेश, असम, मणिपुर, मेघालय, मिज़ोरम, नागालैंड एवं त्रिपुरा आदि राज्यों में आदिवासियों की संख्या काफ़ी ज़्यादा है। अकेले उड़ीसा में ही 60 से ज़्यादा अलग-अलग जनजातीय समूह रहते हैं। आदिवासी समाज औरों से बिल्कुल अलग दिखाई देते हैं क्योंकि उनके भीतर ऊँच-नीच का फ़र्क बहुत कम होता है। इसी वज़ह से ये समुदाय *जाति-वर्ण* पर आधारित समुदायों या राजाओं के शासन में रहने वाले समुदायों से बिल्कुल अलग होते हैं।

आदिवासियों को जनजाति भी कहा जाता है।

शायद आपने अनुसूचित जनजाति शब्द सुना होगा। सरकारी दस्तावेज़ों में आदिवासियों के लिए इसी शब्द का इस्तेमाल किया जाता है। आदिवासी समुदायों की एक सरकारी सूची भी बनाई गई है। अनुसूचित जनजातियों को कई बार अनुसूचित जातियों के साथ मिलाकर भी देखा जाता है।

आदिवासियों के बहुत सारे जनजातीय धर्म होते हैं। उनके धर्म इस्लाम, हिंदु, ईसाई आदि धर्मों से बिल्कुल अलग हैं। वे अकसर अपने पुरखों की, गाँव और प्रकृति की उपासना करते हैं। प्रकृति से जुड़ी आत्माओं में पर्वत, नदी, पशु आदि की आत्माएँ हैं। ये विभिन्न स्थानों से जुड़ी होती हैं और इनका वहीं निवास माना जाता है। ग्राम आत्माओं की अकसर गाँव की सीमा के भीतर निर्धारित पवित्र लता-कुंजों में पूजा की जाती है जबकि पुरखों की उपासना घर में ही की जाती है। आदिवासी अपने आस-पास के बौद्ध और ईसाई आदि धर्मों व शाक्त, वैष्णव, भक्ति आदि पंथों से भी प्रभावित होते रहे हैं। लेकिन यह भी सच है कि आदिवासियों के धर्मों का आस-पास के साम्राज्यों में प्रचलित प्रभुत्वशाली धर्मों पर भी असर पड़ता रहा है। उड़ीसा का जगन्नाथ पंथ

आपके शहर या गाँव में कौन से समूह हाशिये पर हैं? चर्चा करें।

क्या आप अपने राज्य के किसी जनजातीय समुदाय का नाम बता सकते हैं।

वह समुदाय कौन सी भाषा बोलता है? क्या वे जंगलों के आसपास रहते हैं? क्या वे काम की तलाश में दूसरे इलाकों में जाते हैं?

और बंगाल व असम की शक्ति एवं तांत्रिक परंपराएँ इसी के उदाहरण हैं। उन्नीसवीं सदी में बहुत सारे आदिवासियों ने ईसाई धर्म अपनाया जो आधुनिक आदिवासी इतिहास में एक महत्त्वपूर्ण धर्म बन गया है।

ये परंपरागत पोशाकों में सजे-धजे जनजातीय समुदायों की तस्वीरें हैं। आमतौर पर आदिवासियों को इन्हीं रूपों में पेश किया जाता है। इसके आधार पर हमें यह गलतफ़हमी हो जाती है कि आदिवासी 'रंग-बिरंगे' और 'पिछड़े' लोग होते हैं।

आदिवासियों की अपनी भाषाएँ रही हैं (उनमें से ज़्यादातर संस्कृत से बिल्कुल अलग और संभवत: उतनी ही पुरानी हैं)। इन भाषाओं ने बांग्ला जैसी 'मुख्यधारा' की भारतीय भाषाओं को गहरे तौर पर प्रभावित किया है। इनमें संथाली बोलने वालों की संख्या सबसे ज़्यादा है। उनकी अपनी पत्र-पत्रिकाएँ निकलती हैं। इंटरनेट पर भी उनकी पत्रिकाएँ मौजूद हैं।

आदिवासी और प्रचलित छवियाँ

हमारे देश में आदिवासियों को एक खास तरह से पेश किया जाता रहा है। स्कूल के उत्सवों, सरकारी कार्यक्रमों या किताबों व फ़िल्मों में उन्हें सदा एक रूप में ही पेश किया जाता है। वे रंग-बिरंगे कपड़े पहने, सिर पर मुकुट लगाए और हमेशा नाचते-गाते दिखाई देते हैं। इसके अलावा हम उनकी ज़िंदगी की सच्चाइयों के बारे में बहुत कम जानते हैं। इसीलिए बहुत सारे लोग इस गलतफ़हमी का शिकार हो जाते हैं कि उनका जीवन बहुत आकर्षक, पुराने किस्म का और पिछड़ा हुआ है। आदिवासियों पर यह आरोप भी लगाया जाता है कि वे आगे नहीं बढ़ना चाहते। बहुत सारे लोग पहले ही मान लेते हैं कि वे बदलाव या नए विचारों से दूर रहना चाहते हैं। कक्षा 6 की किताब में आपने पढ़ा था कि खास समुदायों को बनी-बनाई छवियों में देखते चले जाने की वज़ह से इस तरह के समुदायों के साथ अक्सर कितना भेदभाव होने लगता है।

आदिवासी और विकास

जैसा कि आपने इतिहास की अपनी पाठ्यपुस्तक में पढ़ा है, भारत में तमाम साम्राज्यों और सभ्यताओं के विकास में जंगलों का बहुत गहरा महत्त्व रहा है। लोहे, ताँबे, सोने व चाँदी के अयस्क, कोयले और हीरे, कीमती इमारती लकड़ी, ज़्यादातर जड़ी-बूटियाँ और पशु उत्पाद (मोम, लाख, शहद) और स्वयं जानवर (हाथी, जो कि शाही सेनाओं का मुख्य आधार रहा है), ये सभी जंगलों से ही मिलते हैं। इसके अलावा जीवन के आगे बढ़ते रहने में जंगल का बड़ा योगदान रहा है। इन्हीं जंगलों से बहुत सारी नदियों को लगातार पानी मिलता रहा है। अब समझ में आ रहा है कि ये जंगल हमारी हवा और पानी की उपलब्धता और गुणवत्ता को भी गहरे तौर पर प्रभावित करते हैं। उन्नीसवीं सदी

के आखिर तक हमारे देश का बड़ा हिस्सा जंगलों से ढँका हुआ था। और कम से कम उन्नीसवीं सदी के मध्य तक तो इन विशाल भूखंडों का आदिवासियों के पास ज़बरदस्त ज्ञान था। इन इलाकों में उनकी गहरी पैठ थी। उनका जंगलों पर पूरा नियंत्रण भी था। इसीलिए आदिवासी समुदाय बड़ी-बड़ी रियासतों और रजवाड़ों के अधीन नहीं रहे। बल्कि बहुत सारे राज्य वन संसाधनों के लिए आदिवासियों पर निर्भर रहते थे।

यह तस्वीर आदिवासियों की प्रचलित छवि से बिल्कुल अलग है। आज उन्हें हाशियाई और शक्तिहीन समुदाय के रूप में देखा जाता है। औपनिवेशिक शासन से पहले आदिवासी समुदाय शिकार और चीज़ें बीनकर आजीविका चलाते थे। वे एक जगह ठहर कर कम रहते थे। वे स्थानांतरित खेती के साथ-साथ लंबे समय तक एक स्थान पर भी खेती करते थे। हालाँकि ये परंपराएँ अभी भी कायम हैं, लेकिन पिछले 200 सालों में आए आर्थिक बदलावों, वन नीतियों और राज्य व निजी उद्योगों के राजनीतिक दवाब की वज़ह से इन लोगों को बागानों, निर्माण स्थलों, उद्योगों और घरों में नौकरी करने के लिए ढकेला जा रहा है। इतिहास में पहली बार ऐसा हो रहा है कि आज उनका वन क्षेत्रों पर कोई नियंत्रण नहीं है और न ही उन तक सीधी पहुँच है।

आज के भारत में कौन सी धातुएँ महत्त्वपूर्ण हैं? क्यों? वे धातुएँ कहाँ से हासिल होती हैं? क्या वहाँ आदिवासियों की आबादी है?

ऐसे पाँच उत्पाद बताइए जो जंगल से मिलते हैं और जिनका आप घर में इस्तेमाल करते हैं।

वन भूमि पर निम्नलिखित माँगें किन लोगों से की जा रही हैं?

- मकानों और रेलवे के निर्माण के लिए इमारती लकड़ी
- खनन के लिए वन भूमि
- गैर-जनजातीय लोगों द्वारा कृषि के लिए वनभूमि का उपयोग
- वन्यजीव अभयारण्यों के रूप में सरकार द्वारा आरक्षित ज़मीन

इन माँगों से जनजातीय समुदायों पर किस तरह असर पड़ता है?

झारखंड और आसपास के इलाकों के आदिवासी 1830 के दशक से ही बहुत बड़ी संख्या में भारत और दुनिया के अन्य इलाकों – मॉरिशस, कैरीबियन और यहाँ तक कि ऑस्ट्रेलिया में जाते रहे हैं। भारत का चाय उद्योग असम में उनके श्रम के बूते ही अपने पैरों पर खड़ा हो पाया है। आज अकेले असम में 70 लाख आदिवासी हैं। इस विस्थापन की कहानी भीषण कठिनाइयों, यातना, विरह और मौत की कहानी रही है। उन्नीसवीं सदी में ही इन पलायनों के कारण 5 लाख आदिवासी मौत के मुँह में जा चुके थे। नीचे दिया गया गीत आदिवासियों की आकांक्षाओं और असम में उनके वास्तविक हालात की बानगी पेश करता है।

आओ मिनी, असम चलें
हमारे देश में तो बहुत कष्ट हैं
असम की धरती पर मिनी
हरियाली से भरे चाय के बागान हैं...
सरदार कहता है काम, काम
बाबू कहता है उन्हें पकड़ो और इधर लाओ
साहब कहता है मैं तुम्हारी खाल उधेड़ दूँगा
हे जादूराम, तुमने हमें असम भेजकर बड़ा छल किया है।

स्रोत- बसु, एस. *झारखंड मूवमेंट : ऐथनीसिटी कल्चर एंड साइलेंस*

इस कविता में क्या बताने का प्रयास किया जा रहा है?

यह फ़ोटो उड़ीसा के कालाहाँडी जिले में स्थित न्यामगिरी पहाड़ी का है। यह डोंगरिया कोंड नामक आदिवासी समुदाय का इलाका है। न्यामगिरी इस समुदाय का पवित्र पर्वत है। एक बड़ी एल्यूमीनियम कंपनी यहाँ खान और शोधक संयंत्र (रिफ़ाइनरी) लगाना चाहती है। यह योजना इस आदिवासी समुदाय को विस्थापित कर देगी। इस समुदाय के लोगों ने इस प्रस्तावित योजना का जमकर विरोध किया है। पर्यावरणवादी भी उनका समर्थन कर रहे हैं। सर्वोच्च न्यायालय में कंपनी के खिलाफ़ मुकदमा भी चल रहा है।

इमारती लकड़ी और खेती व उद्योगों के लिए विशाल वनभूमियों को साफ़ किया जा चुका है। आदिवासियों के इलाकों में खनिज पदार्थों और अन्य प्राकृतिक संसाधनों की भी भरमार रही है। इसीलिए इन ज़मीनों को खनन और अन्य विशाल औद्योगिक परियोजनाओं के लिए बार-बार छीना गया है। जनजातीय भूमि पर कब्ज़ा करने के लिए ताकतवर गुटों ने हमेशा मिलकर काम किया है। काफ़ी बार उनकी ज़मीन ज़बरन छीनी गई है और निर्धारित प्रक्रियाओं का पालन बहुत कम किया गया है। सरकारी आँकड़ों से पता चलता है कि खनन और खनन परियोजनाओं के कारण विस्थापित होने वालों में 50 प्रतिशत से ज़्यादा केवल आदिवासी रहे हैं। आदिवासियों के बीच काम करने वाले संगठनों की एक ताज़ा सर्वेक्षण रिपोर्ट से पता चलता है कि आंध्र प्रदेश, छत्तीसगढ़, उड़ीसा और झारखंड में जो लोग विस्थापित हुए हैं उनमें से 79 प्रतिशत आदिवासी थे। उनकी बहुत सारी ज़मीन देश भर में बनाए गए सैकड़ों बाँधों के जलाशयों में डूब चुकी है। पूर्वोत्तर भारत में उनकी ज़मीन लंबे समय से सशस्त्र बलों और उनके बीच चलने वाले टकरावों से बिंधी है। इसके अलावा भारत में 54 राष्ट्रीय पार्क और 372 वन्य जीव अभयारण्य हैं। इनका कुल क्षेत्रफल 1,09,652 वर्ग किलोमीटर है। ये ऐसे इलाके हैं जहाँ मूल रूप से आदिवासी रहा करते थे। अब उन्हें वहाँ से उजाड़ दिया गया है। अगर वे इन जंगलों में रहने की कोशिश करते हैं तो उन्हें घुसपैठिया कहा जाता है।

आदिवासी लगभग 10,000 तरह के पौधों का इस्तेमाल करते हैं। उनमें से लगभग 8,000 प्रजातियाँ दवाइयों के तौर पर; 325 प्रजातियाँ कीटनाशकों के तौर पर; 425 प्रजातियाँ गोंद, रेज़िन और डाई के तौर पर और 550 प्रजातियाँ रेशों के लिए इस्तेमाल की जाती हैं। इनमें से 3500 प्रजातियाँ भोजन के रूप में इस्तेमाल होती हैं। जब आदिवासी समुदाय वन भूमि पर अपना अधिकार खो देते हैं तो यह सारी ज्ञान संपदा भी खत्म हो जाती है।

अपनी ज़मीन और जंगलों से बिछड़ने पर आदिवासी समुदाय आजीविका और भोजन के अपने मुख्य स्रोतों से वंचित हो जाते हैं। अपने परंपरागत निवास स्थानों के छिनते जाने की वज़ह से बहुत सारे आदिवासी काम की तलाश में शहरों का रुख कर रहे हैं। वहाँ उन्हें छोटे-मोटे उद्योगों, इमारतों

या निर्माण स्थलों पर बहुत मामूली वेतन वाली नौकरियाँ करनी पड़ती हैं। इस तरह वे गरीबी और लाचारी के जाल में फँसते चले जाते हैं। ग्रामीण इलाकों में 45 प्रतिशत और शहरी इलाकों में 35 प्रतिशत आदिवासी समूह गरीबी की रेखा से नीचे गुज़र बसर करते हैं। इसकी वज़ह से वे कई तरह के अभावों का शिकार हो जाते हैं। उनके बहुत सारे बच्चे कुपोषण के शिकार रहते हैं। आदिवासियों के बीच साक्षरता भी बहुत कम है।

जब आदिवासियों को उनकी ज़मीन से हटाया जाता है तो उनकी आमदनी के स्रोत के अलावा और भी बहुत कुछ है जो हमेशा के लिए नष्ट हो जाता है। वे अपनी परंपराएँ और रीति-रिवाज़ गँवा देते हैं जो कि उनके जीने और अस्तित्व का स्रोत हैं। उड़ीसा में एक रिफ़ाइनरी परियोजना के कारण विस्थापित हुए गोविंद मारन कहते हैं, "उन्होंने हमारी खेती की ज़मीन छीन ली। बस थोड़े से मकान छोड़ दिए हैं। उन्होंने श्मशान भूमि, मंदिर, कुएँ, तालाब, सब कुछ अपने कब्ज़े में ले लिया है। अब हम कैसे जिएँगे?"

जैसा कि आप पढ़ चुके हैं, आदिवासी जीवन के आर्थिक और सामाजिक आयाम एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं। एक दायरे में होने वाला विनाश दूसरे दायरे को भी प्रभावित करता है। उनके संसाधनों के लिए होने वाली छीनाझपटी और विस्थापन की यह प्रक्रिया अकसर दर्दनाक और हिंसक होती है।

आपकी राय में यह बात महत्त्वपूर्ण क्यों है कि आदिवासियों को भी उनके जंगलों और वनभूमि के इस्तेमाल से संबंधित फ़ैसलों में अपनी बात कहने का मौका मिलना चाहिए?

अल्पसंख्यक और हाशियाकरण

इकाई 1 में आपने पढ़ा था कि मौलिक अधिकारों के ज़रिए हमारा संविधान धार्मिक और भाषायी अल्पसंख्यकों को सुरक्षा प्रदान करता है। आपकी राय में इन अल्पसंख्यक समुदायों को ये सुरक्षाएँ क्यों मुहैया कराई जा रही हैं? अल्पसंख्यक शब्द आमतौर पर ऐसे समुदायों के लिए इस्तेमाल किया जाता है जो संख्या की दृष्टि से बाकी आबादी के मुकाबले बहुत कम हैं। लेकिन यह अवधारणा केवल संख्या के सवाल तक ही सीमित नहीं है। इसमें न केवल सत्ता और संसाधनों तक पहुँच जैसे मुद्दे जुड़े हुए हैं, बल्कि इसके सामाजिक व सांस्कृतिक आयाम भी होते हैं। जैसा कि आपने इकाई 1 में पढ़ा था, भारतीय संविधान इस बात को मानता है कि बहुसंख्यक समुदाय की संस्कृति समाज और सरकार की अभिव्यक्ति को प्रभावित कर सकती है। ऐसी सूरत में छोटा आकार घाटे की बात साबित हो सकती है और संभव है कि छोटे समुदाय हाशिये पर खिसकते चले जाएँ। ऐसे में अल्पसंख्यक समुदायों को बहुसंख्यक समुदाय के सांस्कृतिक

अल्पसंख्यकों के लिए हमें सुरक्षात्मक प्रावधानों की क्यों ज़रूरत है?

वर्चस्व की आशंका से बचाने के लिए सुरक्षात्मक प्रावधानों की ज़रूरत पड़ती है। ये प्रावधान उन्हें भेदभाव और नुकसान की आशंका से भी बचाते हैं। कुछ खास परिस्थितियों में छोटे समुदाय अपने जीवन, संपत्ति और कुशलक्षेम के बारे में असुरक्षित भी महसूस कर सकते हैं। असुरक्षा की यह भावना तब और बढ़ सकती है जब अल्पसंख्यक और बहुसंख्यक समुदायों के संबंध तनावपूर्ण होते हैं। संविधान में इन सुरक्षाओं की व्यवस्था इसलिए की गई है कि हमारा संविधान भारत की सांस्कृतिक विविधता की सुरक्षा तथा समानता व न्याय की स्थापना के प्रति संकल्पबद्ध है। जैसा कि आप अध्याय 5 में पढ़ चुके हैं, कानून को कायम रखने और मौलिक अधिकारों को साकार करने में न्यायपालिका एक अहम भूमिका निभाती है। अगर किसी भी नागरिक को ऐसा लगता है कि उसके मौलिक अधिकारों का हनन हो रहा है तो वह अदालत में जा सकता है। आइए अब इन प्रावधानों की रोशनी में मुसलमानों के संदर्भ में हाशियाकरण को समझें।

मुसलमान और हाशियाकरण

2001 की जनगणना के अनुसार भारत की आबादी में मुसलमानों की संख्या 13.4 प्रतिशत है। उन्हें हाशियाई समुदाय माना जाता है क्योंकि दूसरे समुदायों के मुकाबले उन्हें सामाजिक-आर्थिक विकास के उतने लाभ नहीं मिले हैं। विभिन्न स्रोतों से ली गई निम्नलिखित तीनों सारणियों से पता चलता है कि मूलभूत सुविधाओं, साक्षरता और सरकारी नौकरियों के हिसाब से मुसलिम समुदाय की स्थिति कैसी है। नीचे दी गई तीनों सारणियों को पढ़ कर बताइए कि वे मुसलिम समुदाय की सामाजिक-आर्थिक स्थिति के बारे में क्या बताती हैं?

1. मूलभूत सुविधाएँ, 1994	
कच्चे घर	63.6% मुसलमान कच्चे घरों में रहते हैं। 55.2% हिंदू कच्चे घरों में रहते हैं।
बिजली	30% मुसलमानों के घर में बिजली है। 43.2% हिंदू घरों में बिजली है।
पाइप का पानी	19.4% मुसलमान पाइप के पानी का प्रयोग करते हैं। 25.3% हिंदू पाइप के पानी का प्रयोग करते हैं।

स्रोत- अबुसालेह शरीफ (1999), *इंडिया ह्यूमन डिवेलपमेंट रिपोर्ट : अ प्रोफाइल ऑफ़ इंडियन स्टेट्स इन दि 1990ज़,* ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस फॉर नैशनल काउंसिल ऑफ़ एप्लाइड इकॉनॉमिक रिसर्च, नयी दिल्ली, पृ. 236, 238, 240.

क्या मुसलमानों को मूलभूत सुविधाएँ समान रूप से उपलब्ध हैं?

2. विभिन्न धर्मों में साक्षरता दर, 2001

कुल	हिंदू	मुसलिम	ईसाई	सिख	बौद्ध	जैन
65%	65%	59%	80%	70%	73%	94%

स्रोत: *भारत की जनगणना, 2001*

किस धार्मिक समुदाय की साक्षरता दर सबसे कम है?

3. सरकारी नौकरियों में मुसलमानों का प्रतिशत

आबादी	भारतीय प्रशासनिक सेवा (आईएएस)	भारतीय पुलिस सेवा (आईपीएस)	भारतीय विदेश सेवा (आईएफएस)	केंद्रीय सार्वजनिक क्षेत्रीय ईकाइयाँ (पीएसयू)	राज्य स्तरीय (पीएसयू)	बैंक एवं रिजर्व बैंक
13.5	3	4	1.8	3.3	10.8	2.2

स्रोत- *भारत में मुसलिम समुदाय की सामाजिक, आर्थिक एवं शैक्षणिक स्थिति,* प्रधानमंत्री की उच्च स्तरीय समिति की रिपोर्ट, 2006

ये आँकड़े क्या बताते हैं?

इस बात को ध्यान में रखते हुए कि मुसलमान विकास के विभिन्न संकेतकों पर पिछड़े हुए हैं, सरकार ने 2005 में एक उच्च स्तरीय समिति का गठन किया। न्यायमूर्ति राजिन्दर सच्चर की अध्यक्षता में बनाई गई इस समिति ने भारत में मुसलिम समुदाय की सामाजिक, आर्थिक और शैक्षणिक स्थिति का जायज़ा लिया। रिपोर्ट में इस समुदाय के हाशियाकरण का विस्तार से अध्ययन किया गया है। समिति की रिपोर्ट से पता चलता है कि विभिन्न सामाजिक, आर्थिक एवं शैक्षणिक संकेतकों के हिसाब से मुसलमानों की स्थिति अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति जैसे अन्य हाशियाई समुदायों से मिलती-जुलती है। उदाहरण के लिए, 7-16 साल की उम्र के मुसलिम बच्चे अन्य सामाजिक-धार्मिक समुदायों के बच्चों के मुकाबले औसतन काफ़ी कम साल तक ही स्कूली शिक्षा ले पाते हैं (पृष्ठ 56)।

मुसलमानों के आर्थिक व सामाजिक हाशियाकरण के कई पहलू हैं। दूसरे अल्पसंख्यकों की तरह मुसलमानों के भी कई रीति-रिवाज़ और व्यवहार मुख्यधारा के मुकाबले काफ़ी अलग हैं। सब नहीं, लेकिन कुछ मुसलमानों में बुर्क़ा, लंबी दाढ़ी और फ़ैज़ टोपी का चलन दिखाई

सच्चर समिति रिपोर्ट में दिए गए शिक्षा संबंधी आँकड़ों को पढ़िए-

- **6-14 साल के उम्र के 25 प्रतिशत बच्चे या तो कभी स्कूल नहीं गए या स्कूल छोड़ चुके हैं। किसी भी सामाजिक-धार्मिक समुदाय के मुकाबले यह संख्या बहुत बड़ी है (पृष्ठ 58)।**

क्या आपको लगता है कि इस स्थिति से निपटने के लिए विशेष प्रावधान करना ज़रूरी है?

मुसलिम महिलाएँ भारत में महिला आंदोलन का एक महत्त्वपूर्ण हिस्सा रही हैं।

देता है। बहुत सारे लोग सभी मुसलमानों को इन्हीं निशानियों से पहचानने की कोशिश करते हैं। इसी कारण अकसर उन्हें अलग नज़र से देखा जाता है। कुछ लोग मानते हैं कि वे 'हम बाकी लोगों' जैसे नहीं हैं। अकसर यही सोच उनके साथ गलत व्यवहार करने और भेदभाव का बहाना बन जाती है। कक्षा 7 में आपने पढ़ा था कि किस तरह अंसारी परिवार को किराये पर मकान ढूँढ़ने में मुश्किल आ रही थी। मुसलमानों के इसी सामाजिक हाशियाकरण के कारण कुछ स्थितियों में वे जिन इलाकों में पहले से रहते आए हैं, वहाँ से निकलने लगे हैं जिससे अकसर उनका 'घेटोआइज़ेशन' (ghettoisation) होने लगता है। कभी-कभी यही पूर्वाग्रह घृणा और हिंसा को जन्म देता है।

मैं एक मुसलिम बहुल क्षेत्र में रहती हूँ। कुछ दिन पहले रमज़ान के दौरान वहाँ कुछ गड़बड़ी हुई जिसने जल्दी ही सांप्रदायिक रूप ले लिया। मैं और मेरा भाई पड़ोस में ही इफ़्तार की एक दावत में गए थे। मैंने परंपरागत कपड़े यानी सलवार-कमीज़ पहनी थी। मेरा भाई शेरवानी पहने था। घर लौटने पर हमें कहा गया कि हम अपने कपड़े बदलकर जींस और टी-शर्ट पहन लें।

अब जबकि सब कुछ ठीक है तो मुझे हैरत होती है कि हमें कपड़े बदलने के लिए क्यों कहा गया और मुझे यह बात अजीब क्यों नहीं लगी। क्या हमारे पहनावे से हमारी पहचान पता चल जाती है और क्या यही पहचान सारे खतरों और भेदभाव की जड़ है?

ऐनी ए. फ़ारूक़ी

उपरोक्त निबंध आपकी ही उम्र की एक बच्ची ने लिखा है। आपकी राय में वह क्या कहने का प्रयास कर रही है?

इस अध्याय के उपरोक्त भाग में हमने देखा कि मुसलमानों के आर्थिक और सामाजिक हाशियाकरण के बीच गहरा संबंध है। इसी अध्याय में पीछे आपने आदिवासियों की स्थिति के बारे में भी पढ़ा। सातवीं कक्षा में आप भारत में औरतों की असमान स्थिति के बारे में पढ़ चुके हैं। इन सारे समूहों के अनुभवों से पता चलता है कि हाशियाकरण एक जटिल परिघटना है जिससे निपटने के लिए कई तरह की रणनीतियों, साधनों और सुरक्षाओं की ज़रूरत है। इसका मतलब है कि संविधान द्वारा परिभाषित अधिकारों और इन अधिकारों को साकार करने वाले कानूनों व नीतियों की रक्षा में हम सभी की बराबर ज़िम्मेदारी बनती है। इनके बिना न तो हम उस विविधता की रक्षा कर पाएँगे जो हमारे देश को एक अनूठी छटा देती है और न ही समानता के प्रति राज्य की प्रतिबद्धता को साकार कर पाएँगे।

निष्कर्ष

इस अध्याय में हमने यह समझने का प्रयास किया है कि हाशियाई समुदाय होने का क्या मतलब होता है। हमने विभिन्न हाशियाई समुदायों के अनुभवों के ज़रिए इस बात को समझने का प्रयास किया है। इन समुदायों के हाशिये पर रह जाने के अलग-अलग कारण हैं। प्रत्येक समुदाय इसको अलग-अलग तरह से महसूस भी करता हैं। हमने यह भी देखा है कि हाशियाकरण का संबंध अभाव, पूर्वाग्रह और शक्तिहीनता के अहसास से जुड़ा हुआ है। हमारे देश में कई और भी हाशियाई समुदाय हैं। दलित भी इसी तरह का एक समुदाय है। इस समुदाय के बारे में हम अगले अध्याय में विस्तार से पढ़ेंगे। हाशियाकरण से कमज़ोर सामाजिक हैसियत ही नहीं पैदा होती, बल्कि शिक्षा व अन्य संसाधनों तक पहुँच भी बराबर नहीं मिल पाती है।

इसके बावजूद हाशियाई समुदायों का जीवन भी बदला जा सकता है और बदलता है। कोई भी हमेशा एक ही तरह से हाशिये पर नहीं रहता। अगर हम हाशियाकरण के इन उदाहरणों पर ध्यान दें तो पाएँगे कि इन दोनों समुदायों के पास भी संघर्ष और प्रतिरोध का एक लंबा इतिहास रहा है। हाशियाई समुदाय अपनी सांस्कृतिक विशिष्टता बनाए रखना चाहते हैं और साथ ही अधिकारों, विकास और अन्य अवसरों में बराबर का हिस्सा चाहते हैं। अगले अध्याय में आप जानेंगे कि विभिन्न समूहों ने इस हाशियाकरण का सामना किस तरह किया है।

सच्चर समिति रिपोर्ट ने मुसलमानों के बारे में प्रचलित दूसरी गलतफ़हमियों को भी उजागर कर दिया है। आमतौर पर माना जाता है कि मुसलमान अपने बच्चों को सिर्फ़ मदरसों में भेजना चाहते हैं। आँकड़ों से पता चलता है कि केवल 4 प्रतिशत मुसलमान बच्चे मदरसों में जाते हैं। मुसलमानों के 66 प्रतिशत बच्चे सरकारी और 30 प्रतिशत बच्चे निजी स्कूलों में पढ़ रहे हैं (पृष्ठ 75)।

अभ्यास

1. 'हाशियाकरण' शब्द से आप क्या समझते हैं? अपने शब्दों में दो-तीन वाक्य लिखिए।

2. आदिवासी लगातार हाशिये पर क्यों खिसकते जा रहे हैं? दो कारण बताइए।

3. आप अल्पसंख्यक समुदायों की सुरक्षा के लिए संवैधानिक सुरक्षाओं को क्यों महत्त्वपूर्ण मानते हैं? इसका एक कारण बताइए।

4. अल्पसंख्यक और हाशियाकरण वाले हिस्से को दोबारा पढ़िए। अल्पसंख्यक शब्द से आप क्या समझते हैं?

5. आप एक बहस में हिस्सा ले रहे हैं जहाँ आपको इस बयान के समर्थन में तर्क देने हैं कि 'मुसलमान एक हाशियाई समुदाय है।' इस अध्याय में दी गई जानकारियों के आधार पर दो तर्क पेश कीजिए।

6. कल्पना कीजिए कि आप टेलीविजन पर 26 जनवरी की परेड देख रहे हैं। आपकी एक दोस्त आपके नज़दीक बैठी है। वह अचानक कहती है, "इन आदिवासियों को तो देखो, कितने रंग-बिरंगे हैं। लगता है सदा नाचते ही रहते हैं।" उसकी बात सुन कर आप भारत में आदिवासियों के जीवन से संबंधित क्या बातें उसको बताएँगे? उनमें से तीन बातें लिखें।

7. चित्रकथा-पट्ट में आपने देखा कि हेलेन होप आदिवासियों की कहानी पर एक फिल्म बनाना चाहती है। क्या आप आदिवासियों के बारे में एक कहानी बना कर उसकी मदद कर सकते हैं?

8. क्या आप इस बात से सहमत हैं कि आर्थिक हाशियाकरण और सामाजिक हाशियाकरण आपस में जुड़े हुए हैं? क्यों?

शब्द संकलन

ऊँच-नीच– व्यक्तियों या चीज़ों की एक क्रमिक व्यवस्था। आमतौर पर ऊँच-नीच की सीढ़ी के सबसे निचले पायदान पर वे लोग होते हैं जिनके पास सबसे कम ताकत है। जाति व्यवस्था ऊँच-नीच की व्यवस्था है जिसमें दलितों को सबसे नीचे माना जाता है।

घेटोआइज़ेशन– यह शब्द आमतौर पर ऐसे इलाके या बस्ती के लिए इस्तेमाल होता है जिसमें मुख्य रूप से एक ही समुदाय के लोग रहते हैं। घेटोआइज़ेशन इस स्थिति तक पहुँचने वाली प्रक्रिया को कहा जाता है। यह प्रक्रिया विभिन्न सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक कारणों पर आधारित हो सकती है। भय या दुश्मनी भी किसी समुदाय को एकजुट होने के लिए मजबूर कर सकती है क्योंकि अपने समुदाय के लोगों के बीच रहने पर उन्हें ज़्यादा राहत मिलती है। इस समुदाय के पास आमतौर पर वहाँ से निकल पाने के ज़्यादा विकल्प नहीं होते हैं जिसके कारण वह शेष समाज से कटता चला जाता है।

मुख्यधारा– कायदे से किसी नदी या जलधारा के मुख्य बहाव को मुख्यधारा कहा जाता है। इस अध्याय में यह शब्द एक ऐसे सांस्कृतिक संदर्भ के लिए इस्तेमाल हुआ है जिसमें वर्चस्वशाली समुदाय के रीति-रिवाज़ों और प्रचलनों को ही सही माना जाता है। इसी क्रम में उन लोगों या समुदायों को भी मुख्यधारा कहा जाता है जिन्हें समाज का केंद्र माना जा रहा है, जैसे बहुधा शक्तिशाली या वर्चस्वशाली समूह।

विस्थापित– ऐसे लोग जिन्हें बाँध, खनन आदि विशाल विकास परियोजनाओं की ज़रूरतों को पूरा करने के लिए ज़बरन उनके घर-बार से उजाड़ दिया जाता है।

कुपोषित– ऐसा व्यक्ति जिसे पर्याप्त भोजन या पोषण नहीं मिलता।

अध्याय 8

हाशियाकरण से निपटना

पिछले अध्याय में हमने दो अलग-अलग समूहों और असमानता व भेदभाव के उनके अनुभवों के बारे में पढ़ा था। ये समूह भले ही कम ताकतवर हों लेकिन उन्होंने अलग-थलग कर दिए जाने या औरों के वर्चस्व का विरोध किया है, अपनी आवाज़ उठाई है और संघर्ष करते रहे हैं। उन्होंने अपने लंबे इतिहास में विविध रणनीतियों के सहारे हालात को बदलने का प्रयास किया है। धार्मिक सांत्वना, सशस्त्र संघर्ष, आत्मपरिष्कार व शिक्षा और आर्थिक बेहतरी – अपनी स्थिति में सुधार के लिए उन्होंने तरह-तरह के रास्ते अपनाए हैं। संघर्ष का कौन सा रास्ता चुना जाएगा- यह हरेक मामले में उन हालात पर निर्भर करता है जिसमें हाशियाई समुदाय रहते हैं।

इस अध्याय में हम यह समझने की कोशिश करेंगे कि विभिन्न समूहों और व्यक्तियों ने असमानता से निपटने के लिए क्या-क्या तरीके अपनाए हैं। आज़ादी के बाद भी इस तरह के संघर्ष और दलीलें जारी हैं हालाँकि उनका स्वरूप बदल गया है। आज हमारे देश के आदिवासी, दलित, मुसलमान, औरतें एवं अन्य हाशियाई समूह यह दलील दे रहे हैं कि एक लोकतांत्रिक देश का नागरिक होने के नाते उन्हें भी बराबर के अधिकार मिलने चाहिए और उनके अधिकारों की रक्षा होनी चाहिए। उनमें से बहुत सारे लोगों ने अपनी चिंताओं को दूर करने के लिए संविधान का भी सहारा लिया है। इस अध्याय में हम देखेंगे कि हाशियाई समूह अपने संघर्षों के दौरान संविधान का सहारा किस तरह लेते हैं। हम यह भी देखेंगे कि विभिन्न समूहों को निरंतर शोषण से बचाने के लिए अधिकारों को कानूनों की शक्ल कैसे दी जाती है। यहाँ इस बात पर भी विचार करेंगे कि इन समूहों को विकास का लाभ प्रदान करने के लिए सरकार की ओर से किस तरह के नीतिगत प्रयास किए गए हैं।

मौलिक अधिकारों का उपयोग

जैसा कि आप इस पुस्तक के पहले अध्याय में पढ़ चुके हैं, संविधान में ऐसे कई सिद्धांत सूत्रबद्ध किए गए हैं जो हमारे समाज और राज्य व्यवस्था को लोकतांत्रिक बनाते हैं। इन सिद्धांतों को मौलिक अधिकारों के ज़रिए परिभाषित किया गया है। यह हमारे संविधान का एक महत्त्वपूर्ण हिस्सा है। ये अधिकार सभी भारतीयों को समान रूप से उपलब्ध होते हैं। जहाँ तक हाशियाई तबकों की बात है, उन्होंने इन अधिकारों को दो तरह इस्तेमाल किया है। पहला, अपने मौलिक अधिकारों पर ज़ोर देकर उन्होंने सरकार को अपने साथ हुए अन्याय पर ध्यान देने के लिए मजबूर किया है। दूसरा, उन्होंने इस बात के लिए दवाब डाला है कि सरकार इन कानूनों को लागू करे। कई बार हाशियाई तबकों के संघर्ष की वज़ह से ही सरकार को मौलिक अधिकारों की भावना के अनुरूप नए कानून बनाने पड़े हैं।

संविधान के अनुच्छेद 17 के अनुसार अस्पृश्यता या छुआछूत का उन्मूलन किया जा चुका है। इसका मतलब यह है कि अब कोई भी व्यक्ति दलितों को पढ़ने, मंदिरों में जाने और सार्वजनिक सुविधाओं का इस्तेमाल करने से नहीं रोक सकता। इसका मतलब यह भी है कि छुआछूत गलत है और लोकतांत्रिक सरकार इस तरह के आचरण को बर्दाश्त नहीं करेगी। लिहाज़ा अब अस्पृश्यता एक दंडनीय अपराध है।

दलित शब्द का मतलब होता है 'दबा-कुचला'। दलित समूहों ने यह शब्द जाति व्यवस्था के तहत अपने साथ सदियों से होते आ रहे भेदभाव को रेखांकित करने के लिए खुद चुना है।

संविधान में ऐसे दूसरे भी अनुच्छेद हैं जो अस्पृश्यता के खिलाफ़ हैं। उदाहरण के लिए, संविधान के अनुच्छेद 15 में कहा गया है कि भारत के किसी भी नागरिक के साथ धर्म, नस्ल, जाति, लिंग या जन्मस्थान के आधार पर भेदभाव नहीं किया जाएगा (इसके बारे में आप कक्षा 7 में समानता पर केंद्रित अध्याय में काफ़ी कुछ पढ़ चुके हैं)। समानता के अधिकार का हनन होने पर दलित इस प्रावधान का सहारा लेते हैं।

इस तरह यदि दलितों को लगता है कि कोई व्यक्ति या समुदाय या

यह कविता महाराष्ट्र की विख्यात भक्त कवयित्री सोयराबाई द्वारा लिखी गई है। वह चौदहवीं शताब्दी के जाने-माने भक्त कवि चोखामेला की पत्नी थीं। सोयराबाई महार जाति की थीं। उस समय यह जाति अछूत मानी जाती थी।

काया है दूषित
कहना है उनका
और केवल आत्मा है बेदाग

लेकिन दूषित काया
पैदा होती है काया के भीतर ही

है अनुष्ठान वह कौन-सा
होती है जिससे शुद्ध काया?

ऐसा कोई जीव नहीं
पैदा हुआ जो न
खून-सनी कोख से
यही है उस ईश्वर की महिमा

इसलिए दूषण है भीतर
दूषित है काया भीतर से
इसमें कोई भ्रम न रखना
महारी चोखा का है यह कहना।

स्रोत- उमा चक्रवर्ती, *जेंडरिंग कास्ट : थ्रू ए फेमिनिस्ट लेंस*, स्त्री, 2003, पृष्ठ 99.

इस कविता में सोयराबाई शुद्धता की सोच पर उँगली उठाते हुए दलील दे रही हैं कि प्रत्येक मनुष्य एक ही ढंग से पैदा होता है। इसलिए ऐसी कोई चीज़ नहीं होती जो एक की देह को ज़्यादा और दूसरे की देह को कम शुद्ध बना सकती हो। संभवत: वे यह भी कहना चाहती है कि जाति व्यवस्था में लोगों को विभिन्न स्थानों, कार्यों, ज्ञान और प्रतिष्ठा से वंचित रखने या लोगों को एक-दूसरे से अलग रखने वाला छुआछूत का भाव काम के स्वरूप से पैदा नहीं होता। बल्कि यह हमारे 'भीतर से' – हमारे अपने विचारों, हमारी अपनी मूल्य-मान्यताओं से पैदा होता है।

सरकार उनके साथ सही बर्ताव नहीं कर रही है, तो वे मौलिक अधिकारों का सहारा ले सकते हैं। उन्होंने बार-बार भारत सरकार का ध्यान संविधान की ओर आकर्षित कराया भी है और इस बात पर ज़ोर दिया है कि सरकार संविधान का पालन करे और उन्हें न्याय प्रदान करे।

इसी तरह मुसलमानों तथा अन्य अल्पसंख्यक समुदायों ने भी संविधान में दिए गए मौलिक अधिकारों का सहारा लिया है। उन्होंने धर्म और सांस्कृतिक व शैक्षणिक अधिकारों की स्वतंत्रता के अधिकार पर ज़ोर दिया है। जहाँ तक सांस्कृतिक और शैक्षणिक अधिकारों का प्रश्न है, मुसलमान और पारसी आदि सांस्कृतिक-धार्मिक समूहों को अपनी संस्कृति की सुरक्षा का अधिकार मिला हुआ है। इस तरह विभिन्न प्रकार के सांस्कृतिक अधिकारों की व्यवस्था करके संविधान ने ऐसे समूहों को सांस्कृतिक न्याय देने का प्रयास किया है। इसका उद्देश्य यह है कि इन समूहों की संस्कृति पर न तो बहुसंख्यक समुदाय की संस्कृति का वर्चस्व हो और न ही वह नष्ट हो।

हाशियाई तबकों के लिए कानून

जैसा कि आपने पहले पढ़ा था, सरकार अपने नागरिकों की रक्षा के लिए कानून बनाती है। लेकिन सरकार केवल इसी तरह कार्रवाई नहीं करती। हमारे देश में हाशियाई तबकों के लिए खास कानून और नीतियाँ बनाई गई हैं। बहुत सी नीतियाँ या योजनाएँ किसी समिति की सिफ़ारिशों या सर्वेक्षण आदि के नतीजों पर आधारित होती हैं। सरकार इस तरह की नीतियों को प्रोत्साहन देती है ताकि खास तबकों को सही अवसर उपलब्ध कराए जा सकें।

सामाजिक न्याय को प्रोत्साहन

संविधान को लागू करने के लिए राज्य और केंद्र सरकारें जनजातीय आबादी वाले या भारी दलित आबादी वाले इलाकों में विशेष प्रकार की योजनाएँ लागू करती हैं। उदाहरण के लिए, कई स्थानों पर दलितों और आदिवासियों को सरकार की ओर से मुफ्त या रियायती दरों पर छात्रावास की सुविधा उपलब्ध कराई गई है ताकि वे शिक्षा संबंधी सुविधाएँ हासिल कर सकें जो मुमकिन है कि उनके अपने इलाकों में उपलब्ध नहीं हों।

कुछ ज़रूरी सुविधाएँ मुहैया कराने के अलावा सरकार कानूनों का भी इस्तेमाल करती है ताकि व्यवस्था में निहित असमानता को खत्म करने के

लिए ठोस कदम उठाए जा सकें। आरक्षण की व्यवस्था इसी तरह का एक महत्त्वपूर्ण कानून/नीति है। यह महत्त्वपूर्ण होने के साथ बेहद विवादास्पद भी है। शिक्षा संस्थानों और सरकारी नौकरियों में दलितों व आदिवासियों के लिए सीटों के आरक्षण का कानून एक महत्त्वपूर्ण तर्क पर आधारित है। इसके पीछे समझ यह है कि हमारे जैसे समाज में जहाँ कुछ तबकों को सदियों तक पढ़ने-लिखने और नयी निपुणताएँ हासिल करने के अवसरों से वंचित रखा गया है, वहाँ लोकतांत्रिक सरकार को इन तबकों की सहायता के लिए ठोस कदम उठाने चाहिए।

आरक्षण की नीति किस तरह काम करती है? देश भर की सभी राज्य सरकारों के पास अनुसूचित जातियों (या दलितों), अनुसूचित जनजातियों और पिछड़ी व अतिपिछड़ी जातियों की अपनी-अपनी सूचियाँ हैं। इसी तरह की एक सूची केंद्र सरकार के पास भी होती है। जो विद्यार्थी शैक्षणिक संस्थानों में दाखिले के लिए या जो उम्मीदवार सरकारी नौकरियों के लिए आवेदन देते हैं, उन्हें जाति और जनजाति प्रमाणपत्र के रूप में अपनी जाति या जनजाति का सबूत देना होता है। अगर कोई खास दलित जाति या जनजाति सरकारी सूची में है तो उस जाति या जनजाति का उम्मीदवार आरक्षण का लाभ उठा सकता है।

कॉलेजों, खासतौर से मेडिकल कॉलेज जैसे पेशेवर संस्थानों में दाखिले के लिए सरकार ने 'कट-ऑफ़' या न्यूनतम अंक सीमा तय की हुई है। इसका मतलब यह है कि इन संस्थानों में सभी दलित और आदिवासी उम्मीदवार दाखिला नहीं पा सकते। इनमें उन्हीं दलित और आदिवासी विद्यार्थियों को दाखिला मिल सकता है जिन्होंने परीक्षाओं में अच्छा प्रदर्शन किया है और न्यूनतम अंक सीमा से ज़्यादा अंक प्राप्त किए हैं। सरकार इन विद्यार्थियों को विशेष छात्रवृत्ति भी देती है। नवीं कक्षा की राजनीति विज्ञान की पुस्तक में आप अन्य पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण की व्यवस्था के बारे में और विस्तार से जानेंगे।

आपकी राय में दलितों और आदिवासियों को सामाजिक न्याय प्रदान करने के लिए आरक्षण इतना महत्त्वपूर्ण क्यों है। इसका एक कारण बताइए।

योजनाओं की सूची	यह योजना किस बारे में है?	आपकी राय में इससे सामाजिक न्याय को कैसे बढ़ावा मिलेगा?
विद्यार्थियों के लिए वजीफ़े की व्यवस्था		
विशेष थानों का गठन		
सरकारी स्कूलों में लड़कियों के लिए विशेष योजनाएँ		

भाषा की अपनी पुस्तक में आपने कबीर के दोहे पढ़े होंगे। कबीर पंद्रहवीं सदी के कवि थे। पेशे से बुनकर कबीर भक्ति परंपरा से जुड़े थे। कबीर की कविता परमसत्ता के प्रति उनके प्रेम पर केंद्रित थी। उनका यह प्रेम रस्मों और पंडे-पुजारियों के चंगुल से आज़ाद था। उनकी कविताओं में ताकतवर लोगों की तीखी आलोचना दिखाई देती है। कबीर ने ऐसे लोगों पर बार-बार प्रहार किया जो अपनी धार्मिक और जातीय पहचानों के लिए लोगों को साँचे में कैद कर देते हैं। उनकी राय में हर व्यक्ति के पास आध्यात्मिक मुक्ति प्राप्त करने की क्षमता होती है और वे अपने अनुभवों के ज़रिए भीतर के गहरे ज्ञान को हासिल कर सकते हैं। उनके पद सभी मनुष्यों की समानता और श्रम की महत्ता के शक्तिशाली विचारों को सामने लाते हैं। वे एक साधारण कुम्हार, बुनकर और घड़े में पानी लाती औरत, सबके श्रम का सम्मान करते हैं। उनके पदों में श्रम ही समूचे ब्रह्मांड को समझने का आधार है। उनकी प्रत्यक्ष, साहस भरी चुनौती आज भी लोगों को प्रेरित करती है। उत्तर प्रदेश, राजस्थान, पंजाब, मध्य प्रदेश, बंगाल, बिहार और गुजरात में दलित, हाशियाई समूह और सामाजिक ऊँच-नीच से घृणा करने वाले लोग आज भी कबीर के पदों को गाते हैं।

दलितों और आदिवासियों के अधिकारों की रक्षा

हाशियाई समुदायों को भेदभाव और शोषण से बचाने के लिए नीतियों के अलावा हमारे देश में कई कानून भी बनाए गए हैं। आइए यहाँ एक सच्ची घटना पर आधारित इस केस स्टडी को पढ़कर जानें कि अपनी रक्षा के लिए दलित इन कानूनों का किस तरह इस्तेमाल करते हैं।

जकमालगुर गाँव के लोग एक बड़े त्योहार की तैयारी में जुटे हैं। यहाँ हर पाँच साल में एक बार स्थानीय देवता की पूजा की जाती है। पाँच दिन चलने वाले इस उत्सव में आस-पास के 20 गाँवों के पुजारी इकट्ठा होते हैं। इस कार्यक्रम की शुरुआत में दलित समुदाय का एक व्यक्ति सारे पुजारियों के पैर धोता है और धोवन के इस पानी से नहाता है। जकमालगुर में यह काम रत्नम के परिवार के लोग करते हैं। रत्नम से पहले उसके पिता और दादा यह काम करते रहे हैं। उन्हें कभी मंदिर में दाखिल नहीं होने दिया गया, लेकिन इस रस्म को उनके लिए एक भारी सम्मान के रूप में देखा जाता था। इस बार रत्नम की बारी थी। रत्नम 20 साल का था और पास के ही एक कॉलेज में इंजीनिरिंग की पढ़ाई कर रहा था। उसने यह रस्म निभाने से इनकार कर दिया।

उसने कहा कि वह इस संस्कार में विश्वास नहीं करता और उसके पुरखों को दलित होने के कारण ऐसा करने के लिए मजबूर किया जाता था। रत्नम के इनकार से न केवल गाँव की ताकतवर जातियाँ, बल्कि उसके अपने समुदाय के कई परिवार भी खफ़ा थे। ऊँची जातियों के लोगों को यह देखकर हैरानी थी कि कच्ची उम्र का एक नौजवान उनका हुक्म मानने से इनकार कर रहा है। उनको लगता था कि रत्नम की पढ़ाई-लिखाई ने उसे बिगाड़ दिया है और अब वह खुद को उनके बराबर मानने लगा है।

रत्नम की जाति के लोग भी ऊँची जाति वालों के गुस्से की आशंका से डरे हुए थे। उनमें से बहुत सारे सवर्णों के खेत-खलिहानों में दिहाड़ी मज़दूर थे। अगर प्रभुत्वशाली जातियाँ उन्हें काम देना बंद कर दें तो वे क्या खाएँगे? ज़िंदगी कैसे चलेगी? ऊँची जातियों ने यह भी ऐलान कर दिया था कि अगर दलित नहीं झुकेंगे तो उन्हें स्थानीय देवता का अभिशाप लगेगा। रत्नम की दलील यह थी कि चूँकि आज तक एक भी दलित मंदिर के भीतर नहीं गया है, इसलिए देवता के उन पर गुस्सा होने का सवाल ही नहीं उठता।

ताकतवर जातियों ने रत्नम को सबक सिखाने की ठानी। उन्होंने उसके समुदाय को हुक्म दिया कि वे रत्नम और उसके परिवार का बहिष्कार कर दें। सभी को यह आदेश दिया गया कि कोई भी उसके परिवार से किसी तरह का संपर्क नहीं रखे। एक रात को अचानक कुछ लोगों ने आकर रत्नम की झोंपड़ी में आग लगा दी। रत्नम किसी तरह अपनी माँ के साथ ज़िंदा भाग निकला। उसने अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 के तहत स्थानीय थाने में मामला दर्ज कराया। बाकी दलित परिवार तब भी उसके समर्थन में आगे नहीं आए। वे डरे हुए थे। उन्हें लगा कि अगर वे अपना मुँह खोलेंगे तो उनकी हालत भी रत्नम जैसी ही बना दी जाएगी। स्थानीय मीडिया ने इस घटना पर काफ़ी ध्यान दिया। बहुत सारे पत्रकारों ने गाँव का दौरा किया। रत्नम को उन्होंने दलित प्रतिरोध के प्रतीक के रूप में पेश किया। अंतत: विवादास्पद रस्म तो खत्म कर दी गई, लेकिन उसके परिवार को गाँव छोड़कर जाना पड़ा क्योंकि गाँव की ऊँची जातियों ने उसका बहिष्कार कर दिया।

क्या आपको ऐसा लगता है कि रत्नम को परंपरागत रस्म निभाने के लिए जिस तरह मजबूर किया जा रहा था, वह उसके मौलिक अधिकारों का हनन था?

आपको ऐसा क्यों लगता है कि दलित परिवार शक्तिशाली जातियों के गुस्से की आशंका से डरे हुए थे?

अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989

रत्नम ने अपने गाँव में ऊँची जातियों द्वारा किए जा रहे भेदभाव और हिंसा का विरोध करने के लिए अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम के तहत शिकायत दर्ज कराई और कानून का सहारा लिया।

यह कानून 1989 में दलितों तथा अन्य समुदायों की माँगों के जवाब में बनाया गया था। उस समय सरकार पर इस बात के लिए भारी दबाव पड़ रहा था कि वह दलितों और आदिवासियों के साथ रोज़मर्रा होने वाले दुर्व्यवहार और अपमान पर रोक लगाने के लिए ठोस कार्रवाई करे। यों तो इस तरह का व्यवहार लंबे समय से चला आ रहा था, लेकिन सत्तर के दशक के आखिर और अस्सी के दशक में यह समस्या हिंसक रूप लेने लगी थी। इस दौरान दक्षिण भारत के कई हिस्सों में अपने हकों का दावा करने वाले बहुत सारे आग्रही दलित संगठन सामने आए और उन्होंने अपने हकों के लिए पुरज़ोर आवाज़ उठाई वे तथाकथित जातीय दायित्वों का निर्वाह करने को तैयार नहीं थे और समानता का अधिकार चाहते थे। रत्नम की तरह उन्होंने भी दलितों का अपमान व शोषण करने वाली परंपराओं को मानने से इनकार कर दिया था। इसकी वज़ह से ऊँची जातियों के लोग उनके साथ खुले आम हिंसा पर उतारू हो गए थे। सरकार को इस बात का अहसास कराने के लिए दलित संगठनों ने व्यापक अभियान चलाए कि छुआछूत अभी भी जारी है। उन्होंने इस बात के लिए दबाव बनाया कि नए कानूनों में दलितों के साथ होने वाली विभिन्न प्रकार की हिंसा की सूची बनाई जाए और इस तरह के अपराध करने वालों के लिए सख्त सज़ा का प्रावधान किया जाए।

पंडित देखहु मन में जानी।
कहु धौं छूति कहाँ से उपजी, तबहिं छूति तुम मानी।।
...
एकहि पाट सकल बैठाए, छूति लेत धौं काकी।
छूतिहि जेवन छूतिहि अँचवन, छूतिहि जग उपजाया।
कहैं कबीर ते छूति विवरजित, जाके संग न माया।

संदर्भ- इस पद में कबीर ने बताया है कि प्राणी की तीन स्थितियाँ होती हैं- जन्म, जीवन और मरण। तीनों स्थितियों में सभी प्राणी एक समान रहते हैं और तीनों के मूल में गंदगी है। फिर छुआछूत का भेद-भाव कैसा?

व्याख्या- कबीर कहते हैं कि हे पंडित! मन में भली प्रकार से विचार करके देखो। भला बताओ कि छूत क्या है और कहाँ से उत्पन्न हो गई? तुमने बिना सोचे-समझे छूत नामक एक भावना बना ली है। ...

प्रभु ने एक ही पृथ्वी रूपी पीढ़े पर सभी को समान रूप से बिठा दिया है। फिर तुम किसको छूत कहोगे और किसे अछूत? अन्न और जल जिसका भोजन और पान किया जाता है, गंदगी से संयुक्त है... इसी छूत से सभी उत्पन्न हैं, फिर उनसे कौन बचा है? अत: छुआछूत का भेदभाव निरर्थक है। कबीर कहते हैं कि वास्तव में छूत से वही लोग परे हैं, जिन पर माया का प्रभाव नहीं है।

स्रोत- (सं.)जयदेव सिंह एवं वासुदेव सिंह, *सबद* (कबीर वाङ्मय : खंड 2), विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, 1998, पृष्ठ 207-208.

कबीर अछूत शब्द को यहाँ एक नया अर्थ देते हैं। उनका दावा है कि अस्पृश्यता ही ज्ञान का सर्वोच्च स्तर है- इसका मतलब है कि वह व्यक्ति संकुचित और विभाजक विचारों से पूरी तरह मुक्त है। लिहाज़ा कबीर अस्पृश्यता की सोच को सिर के बल खड़ा करके 'अछूतों' को सबसे निचली अवस्था की बजाय सबसे ऊँची अवस्था में स्थापित कर देते हैं।

इसी प्रकार 1970 और 1980 के दशकों में आदिवासियों ने भी खुद को बड़े पैमाने पर संगठित किया। उन्होंने न केवल बराबरी के लिए आवाज़ उठाई, बल्कि अपनी ज़मीन व संसाधनों को हासिल करने के लिए भी आंदोलन चलाए। इन आदिवासियों को भी ताकतवर सामाजिक गुटों का गुस्सा झेलना पड़ा और उनके साथ भी जमकर हिंसा हुई।

यही वज़ह है कि इस कानून में अपराधों की एक बहुत लंबी सूची दी गई है। इनमें से कई अपराध तो इतने भयानक हैं कि उनके बारे में सोच कर ही दिल दहल जाता है। इस कानून में न केवल भयानक अपराधों का उल्लेख किया गया है, बल्कि यह कानून इस बात की ओर इशारा भी करता है कि साधारण इंसान भी कितने जघन्य कृत्य कर सकते हैं। इस प्रकार इस तरह के कानून हमारे सोचने और काम करने के तरीके को प्रभावित करते हैं और दोषियों को सज़ा भी देते हैं।

इस कानून में कई स्तर के अपराधों के बीच फ़र्क किया गया है। पहला, इसमें शारीरिक रूप से खौफ़नाक और नैतिक रूप से निंदनीय अपमान के स्वरूपों की सूची दी गई है। इसका मकसद ऐसे लोगों को सज़ा दिलाना है जो (i) अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति के किसी व्यक्ति को कोई अखाद्य अथवा गंदा पदार्थ पीने या खाने के लिए विवश करते हैं; (iii) अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति के किसी व्यक्ति को नंगा करते हैं या उसे नंगा घुमाते हैं या उसके चेहरे अथवा देह पर रंग लगाते हैं या कोई और ऐसा कृत्य करते हैं जो मानवीय प्रतिष्ठा के अनुरूप नहीं है....।

दूसरा, इसमें ऐसे कृत्यों की सूची भी है जिनके ज़रिए दलितों और आदिवासियों को उनके साधारण संसाधनों से वंचित किया जाता है या उनसे गुलामों की तरह काम करवाया जाता है। फलस्वरूप इस कानून में प्रावधान किया गया है कि अगर कोई भी व्यक्ति (iv) अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति के किसी व्यक्ति के नाम पर आबंटित की गई या उसके स्वामित्व वाली ज़मीन पर कब्ज़ा करता है या खेती करता है या उसे अपने नाम पर स्थानांतरित करवा लेता है तो उसे सज़ा दी जाएगी।

एक और स्तर पर यह कानून इस बात को मान्यता देता है कि दलित एवं आदिवासी महिलाओं के खिलाफ़ होने वाले अपराध एक खास तरह के अपराध हैं, इसलिए ऐसे लोगों को दंडित करने की व्यवस्था की गई है जो (xi) अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति की किसी महिला को अपमानित करने के लिए उस पर हमला करते हैं या उसके साथ ज़ोर-ज़बरदस्ती करते हैं....।

क्या आप 1989 के कानून के दो प्रावधानों का उल्लेख कर सकते हैं?

शब्द संकलन को देखें और अपने शब्दों में लिखें कि 'नैतिक रूप से निंदनीय' पद का आप क्या मतलब समझते हैं?

हाथ से मैला उठाने का कलंक

बहुत सारे लोग झाड़ू, टिन और टोकरियों के सहारे पशुओं/इंसानों के मल-मूत्र को ठिकाने लगाते हैं। वे बिना पानी वाले (सूखे) शौचालयों से गंदगी उठाकर दूर के स्थानों पर फेंककर आते हैं। हाथ से मैला उठाने वाले पीढ़ी दर पीढ़ी यही काम करते हैं। यह काम आमतौर दलित औरतों और लड़कियों के हिस्से में आता है। आंध्र प्रदेश में सक्रिय सफ़ाई कर्मचारी आंदोलन के अनुसार पूरे देश में दलित समुदाय के लगभग 13 लाख लोग यह काम कर रहे हैं। सिर पर मैला ढोने वालों के बीच काम करने वाले इस संगठन का कहना है कि ये लोग 96 लाख निजी और सामुदायिक सूखे शौचालयों की सफ़ाई करते हैं।

सिर पर मैला ढोने वाले बेहद अमानवीय स्थितियों में काम करते हैं। इस काम के कारण उनके स्वास्थ्य को गंभीर खतरा बना रहता है। वे लगातार ऐसे संक्रमण के खतरे में रहते हैं जिससे उनकी आँखों, त्वचा, श्वसन तंत्र और पाचन तंत्र पर असर पड़ सकता है। इस काम के लिए उन्हें बहुत मामूली वेतन मिलता है। नगरपालिकाओं में काम करने वालों को रोज़ाना 30-40 रुपए मिलते हैं जबकि निजी घरों में काम करने वालों को इससे भी कम पैसा मिलता है।

जैसा कि आपने इस पुस्तक में पढ़ा है, भारतीय संविधान में अस्पृश्यता की प्रथा को खत्म किया जा चुका है। फिर भी हाथ से मैला उठाने वालों को कई जगह अछूत माना जाता है। गुजरात के भंगी, आंध्र प्रदेश के पाखी और तमिलनाडु के सिक्कलयार इसी श्रेणी में आते हैं। आमतौर पर उन्हें गाँव के किनारे अलग टोलों में रहना पड़ता है। उन्हें मंदिर, सार्वजनिक जल सुविधाओं आदि के पास फटकने भी नहीं दिया जाता है।

1993 में सरकार ने एम्प्लॉयमेंट ऑफ़ मैन्युअल स्केवेंजर्स एंड कंस्ट्रक्शन ऑफ़ ड्राई लैट्रीन्स (प्रॉहिबिशन) एक्ट, 1993 पारित किया था। यह कानून सिर पर मैला उठाने वालों को काम पर रखने और सूखे शौचालयों के निर्माण पर पाबंदी लगाता है। 2003 में सफ़ाई कर्मचारी आंदोलन तथा 13 अन्य संगठनों व व्यक्तियों (जिनमें 7 मैला ढोने वाले थे) ने सर्वोच्च न्यायालय में एक जनहित याचिका दायर की थी। याचिका दायर करने वालों का कहना था कि सिर पर मैला ढोने की प्रथा न केवल आज भी चल रही है, बल्कि रेलवे जैसे सरकारी उपक्रमों में भी बड़े पैमाने पर प्रचलित है। याचिकाकर्ताओं ने अपने मौलिक अधिकारों को लागू करवाने का आग्रह किया। इसके जवाब में न्यायालय ने निष्कर्ष दिया कि 1993 में पारित किए गए कानून के बाद देश भर में सिर पर मैला ढोने वालों की संख्या में इजाफा हुआ है। न्यायालय ने केंद्र व राज्य सरकार के प्रत्येक विभाग/मंत्रालय को आदेश दिया कि वे 6 माह के भीतर इस बात की सच्चाई का पता लगाएँ। अगर सिर पर मैला ढोने की प्रथा अभी भी प्रचलन में पाई जाती है तो संबंधित सरकारी विभागों को ऐसे लोगों की मुक्ति और पुनर्वास के लिए एक समयबद्ध कार्यक्रम तैयार करना चाहिए।

हाथ से मैला उठाती एक सफ़ाई मज़दूर

सफ़ाई कर्मचारी आंदोलन के कार्यकर्ता एक सूखे शौचालय को गिरा रहे हैं।

सिर पर मैला उठाने का आप क्या अर्थ समझते हैं?

पृष्ठ 14 पर दिए गए मौलिक अधिकारों की सूची को दोबारा पढ़ें और ऐसे दो अधिकारों का उल्लेख करें जिनका इस प्रथा के ज़रिए उल्लंघन हो रहा है।

सफ़ाई कर्मचारी आंदोलन ने 2003 में जनहित याचिका क्यों दायर की? अपनी याचिका में उन्होंने किस बात पर आपत्ति व्यक्त की थी?

2005 में इस याचिका पर विचार करने के बाद सर्वोच्च न्यायालय ने क्या किया?

केंद्र सरकार ने हाल ही में अनुसूचित जनजाति एवं अन्य परंपरागत वनवासी (वन अधिकार मान्यता) अधिनियम, 2006 पारित किया है। इस कानून की प्रस्तावना में कहा गया है कि यह कानून ज़मीन और संसाधनों पर वन्य समुदायों के अधिकारों को मान्यता न देने के कारण उनके साथ हुए ऐतिहासिक अन्याय को दूर करने के लिए पारित किया गया है। इस कानून में वन्य समुदायों को घर के आस-पास ज़मीन, खेती और चराई योग्य ज़मीन और गैर-लकड़ी वन उत्पादों पर उनके अधिकार को मान्यता दी गई है। इस कानून में यह भी कहा गया है कि वन एवं जैवविविधता संरक्षण भी वनवासियों के अधिकारों में आता है।

आदिवासियों की माँगें और 1989 का अधिनियम

1989 का अधिनियम एक और वज़ह से महत्त्वपूर्ण है। आदिवासी कार्यकर्ता अपनी परंपरागत ज़मीन पर अपने कब्ज़े की बहाली के लिए इस कानून का सहारा लेते हैं। जैसा कि आपने पिछले अध्याय में पढ़ा था, अपनी ज़मीन छोड़ने और ज़बरन विस्थापन से आदिवासियों को भारी परेशानी होती है। कार्यकर्ताओं का कहना है कि जिन लोगों ने आदिवासियों की ज़मीन पर ज़बरदस्ती कब्ज़ा कर लिया है, उन्हें इस कानून के तहत सज़ा दी जानी चाहिए। उन्होंने कहा कि यह कानून भी जनजातीय समुदायों को केवल वही लाभ देता है जिनका संविधान में आश्वासन दिया गया था। उनका कहना है कि संवैधानिक रूप से आदिवासियों की ज़मीन को किसी गैर-आदिवासी व्यक्ति को नहीं बेचा जा सकता। जहाँ ऐसा हुआ है वहाँ संविधान की गरिमा बनाए रखने के लिए उन्हें उनकी ज़मीन वापस मिलनी चाहिए।

आदिवासी कार्यकर्ता सी.के. जानू का आरोप है कि आदिवासियों के संवैधानिक कानूनों का उल्लंघन करने वालों में विभिन्न प्रदेशों की सरकारें भी पीछे नहीं हैं। यही सरकारें हैं जो लकड़ी व्यापारी, पेपर मिल आदि के नाम पर गैर-आदिवासी घुसपैठियों को जनजातीय ज़मीनों का दोहन करने और आदिवासियों को उनके परंपरागत जंगलों से उजाड़ने की छूट देती हैं। इसके अलावा जंगलों को आरक्षित या अभयारण्य घोषित करके भी लोगों को वहाँ से बेदखल किया जा रहा है। सुश्री जानू का यह भी कहना है कि जो आदिवासी पहले ही बेदखल हो चुके हैं और जो अब वापस नहीं लौट सकते, उन्हें भी मुआवज़ा दिया जाना चाहिए। इसका मतलब यह है कि सरकार ऐसी योजनाएँ बनाए जिनके सहारे वे नए स्थानों पर रह सकें और काम कर सकें। जब सरकार आदिवासियों से छीनी गई ज़मीन पर औद्योगिक या अन्य परियोजनाओं के निर्माण के लिए बेहिसाब पैसा खर्च कर सकती है तो इन विस्थापितों को पुनर्वास देने के लिए मामूली सा खर्चा करने में क्यों हिचकिचाती है।

निष्कर्ष

किसी अधिकार या कानून या नीति को कागज़ पर लिख देने का यह मतलब नहीं होता कि वह अधिकार या कानून या नीति वास्तव में लागू हो चुका है। इन प्रावधानों को अमली जामा पहनाने के लिए लोगों को लगातार कोशिशें करनी पड़ती हैं। बराबरी, इज़्ज़त और सम्मान की चाह कोई नयी बात नहीं है। यह बात हमारे पूरे इतिहास में विभिन्न रूपों में दिखाई देती है। इसी प्रकार, लोकतांत्रिक समाज में भी संघर्ष, लेखन, सौदेबाज़ी और सांगठनिकता की प्रक्रियाएँ जारी रहनी चाहिए।

अभ्यास

1. दो ऐसे मौलिक अधिकार बताइए जिनका दलित समुदाय प्रतिष्ठापूर्ण और समतापरक व्यवहार पर ज़ोर देने के लिए इस्तेमाल कर सकते हैं। इस सवाल का जवाब देने के लिए पृष्ठ 14 पर दिए गए मौलिक अधिकारों को दोबारा पढ़िए।

2. रत्नम की कहानी और 1989 के अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम के प्रावधानों को दोबारा पढ़िए। अब एक कारण बताइए कि रत्नम ने इसी कानून के तहत शिकायत क्यों दर्ज कराई।

3. सी.के. जानू और अन्य आदिवासी कार्यकर्ताओं को ऐसा क्यों लगता है कि आदिवासी भी अपने परंपरागत संसाधनों के छीने जाने के खिलाफ़ 1989 के इस कानून का इस्तेमाल कर सकते हैं? इस कानून के प्रावधानों में ऐसा क्या खास है जो उनकी मान्यता को पुष्ट करता है?

4. इस इकाई में दी गई कविताएँ और गीत इस बात का उदाहरण हैं कि विभिन्न व्यक्ति और समुदाय अपनी सोच, अपने गुस्से और अपने दुखों को किस-किस तरह से अभिव्यक्त करते हैं। अपनी कक्षा में ये दो कार्य कीजिए-

   (क) एक ऐसी कविता खोजिए जिसमें किसी सामाजिक मुद्दे की चर्चा की गई है। उसे अपने सहपाठियों के सामने पेश कीजिए। दो या अधिक कविताएँ लेकर छोटे-छोटे समूहों में बँट जाइए और उन कविताओं पर चर्चा कीजिए। देखें कि कवि ने क्या कहने का प्रयास किया है।

   (ख) अपने इलाके में किसी एक हाशियाई समुदाय का पता लगाइए। मान लीजिए कि आप उस समुदाय के सदस्य हैं। अब इस समुदाय के सदस्य की हैसियत से अपनी भावनाओं को व्यक्त करने के लिए कोई कविता या गीत लिखिए या पोस्टर आदि बनाइए।

शब्द संकलन

आग्रही- जो व्यक्ति या समूह पुरज़ोर तरीके से अपनी बात रखता है उसे आग्रही कहा जाता है।

बहिष्कार- इसका मतलब किसी व्यक्ति या समूह को बाहर निकाल देने या प्रतिबंधित कर देने से होता है। इस अध्याय में यह शब्द व्यक्ति और उसके परिवार के सामाजिक बहिष्कार के विषय में आया है।

नैतिक रूप से निंदनीय- ये ऐसे कृत्य होते हैं जो सभ्यता और प्रतिष्ठा के सारे कायदे-कानूनों के खिलाफ़ होते हैं। इस शब्द का इस्तेमाल आमतौर पर ऐसे घृणित और अपमानजनक कृत्यों के लिए किया जाता है जो समाज द्वारा स्वीकृत मूल्यों के खिलाफ़ होते हैं।

नीति- एक घोषित कार्यदिशा जो भविष्य का रास्ता बताती है, लक्ष्य तय करती है या अपनाए जाने वाले सिद्धांतों व दिशानिर्देशों की व्याख्या करती है। इस अध्याय में हमने सरकारी नीतियों का उल्लेख किया है, लेकिन स्कूल, कंपनी आदि अन्य संस्थाओं की भी अपनी नीतियाँ होती हैं।

इकाई पाँच

शिक्षकों के लिए

इस ईकाई में सार्वजनिक सुविधाएँ मुहैया कराने और बाज़ार, फ़ैक्टरी तथा लोगों की कार्यस्थितियों पर लागू होने वाले कानूनों को क्रियान्वित करने में सरकार की भूमिका पर चर्चा की गई है। इसका मकसद विद्यार्थियों को इस बात की समझ प्रदान करना है कि सरकार की यह भूमिका मौलिक अधिकारों के मुद्दे से किस तरह जुड़ी हुई है। मौलिक अधिकारों के साथ यह जुड़ाव ही पिछले अध्यायों में उठाए गए मुद्दों के साथ इस मुद्दे को भी जोड़ देता है। कक्षा 6 और 7 की पाठ्यपुस्तकों में आजीविका और बाज़ारों पर हुई चर्चा को अध्याय 10 के संदर्भ में इस्तेमाल किया जा सकता है।

अध्याय 9 में जनसुविधाओं पर चर्चा की गई है। यहाँ पानी को एक अहम उदाहरण के रूप में इस्तेमाल किया गया है। यह महत्त्वपूर्ण बात है कि विद्यार्थी इस बात को अच्छी तरह समझ लें कि जनसुविधाओं का क्या मतलब होता है और ये सुविधाएँ मुहैया कराने और उनकी ज़िम्मेदारी उठाने में सरकार को अहम भूमिका निभाने की ज़रूरत क्यों होती है। पानी की समान उपलब्धता, उसकी सस्ती लागत और गुणवत्ता का सवाल जनसुविधाओं से जुड़े मुद्दों में काफ़ी महत्त्वपूर्ण है। कक्षा के भीतर होने वाली चर्चा में जनसुविधाओं के विषय में सरकार की भूमिका तथा मौजूदा असमान वितरण, दोनों को एक-दूसरे से अलग कर लें तो बेहतर होगा। इसका मतलब यह है कि लोगों को अगर अलग-अलग मात्रा में पानी मिल रहा है तो इसके आधार पर यह मान लेना ठीक नहीं होगा कि सरकार जनसुविधाएँ मुहैया कराने में सक्षम नहीं है।

अध्याय 10 में आर्थिक गतिविधियों के नियमन में सरकार की केंद्रीय भूमिका पर चर्चा की गई है। ऐसा मोटे तौर पर कानूनों के ज़रिए किया गया है। इस अध्याय में मौजूदा कानूनों को लागू करने और बाज़ार में मज़दूरों, उपभोक्ताओं व उत्पादकों के अधिकारों की रक्षा के लिए नए कानून बनाने के महत्त्व पर खास ज़ोर दिया गया है। भोपाल गैस त्रासदी को कानूनों में लापरवाही की मिसाल के तौर पर पेश किया गया है। संभव है बहुत सारे विद्यार्थियों ने इस दुर्घटना के बारे में न पढ़ा हो। बेहतर होगा कि उन्हें इस घटना के बारे में अनुसंधान करने और स्कूल के लिए एक दीवार पत्रिका (वॉल-पेपर) या लघु-नाटिका तैयार करने में मदद दी जाए। पुस्तक के आखिर में जिन वेबसाइट्स का उल्लेख किया गया है, वहाँ से आप अतिरिक्त संदर्भ सामग्री जुटा सकते हैं। भोपाल गैस त्रासदी एक ऐतिहासिक मोड़ थी जिसने 'पर्यावरण' के मुद्दों को आर्थिक कानूनों से गहरे तौर पर जोड़ दिया। मज़दूरों व आम नागरिकों के प्रति उद्योग जगत तथा सरकार की जवाबदेही का विचार इस अध्याय का केंद्रीय तत्त्व है।

अध्याय 9

जनसुविधाएँ

अमू और कुमार चेन्नई में एक बस से सफ़र कर रहे हैं। शहर के अलग-अलग इलाकों से गुजरते हुए वे जल सुविधाओं को देखते जा रहे हैं...

अन्नानगर

सैदापेट

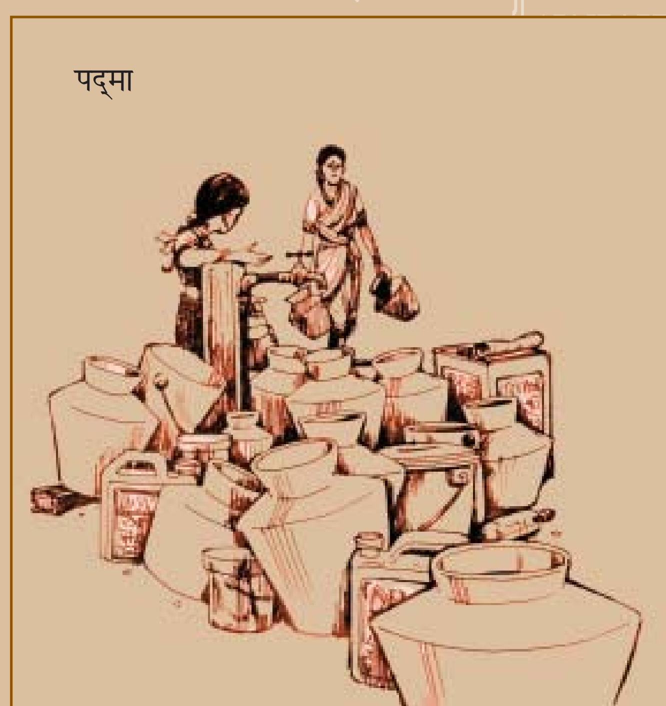

TONDIARPET
Korukkupet
VYASARPADI
ROYAPURAM
Royapuram
Perambur
VEPERY
Madras Central
Periamet Mosque
PURASAWALKAM
Egmore
Govt Museum
National Art gallery
Big Mosque
TRIPLICANE
Thousand Light Mosque
St.George Cathedral
Bay of Bengal
Light house
Marina
MYLAPORE
CLRI
Buckingham Canal
Temple
CIT
Bank Rd
LATTICE BRIDGE RD

मडीपाक्कम

शिवा

मैलापुर

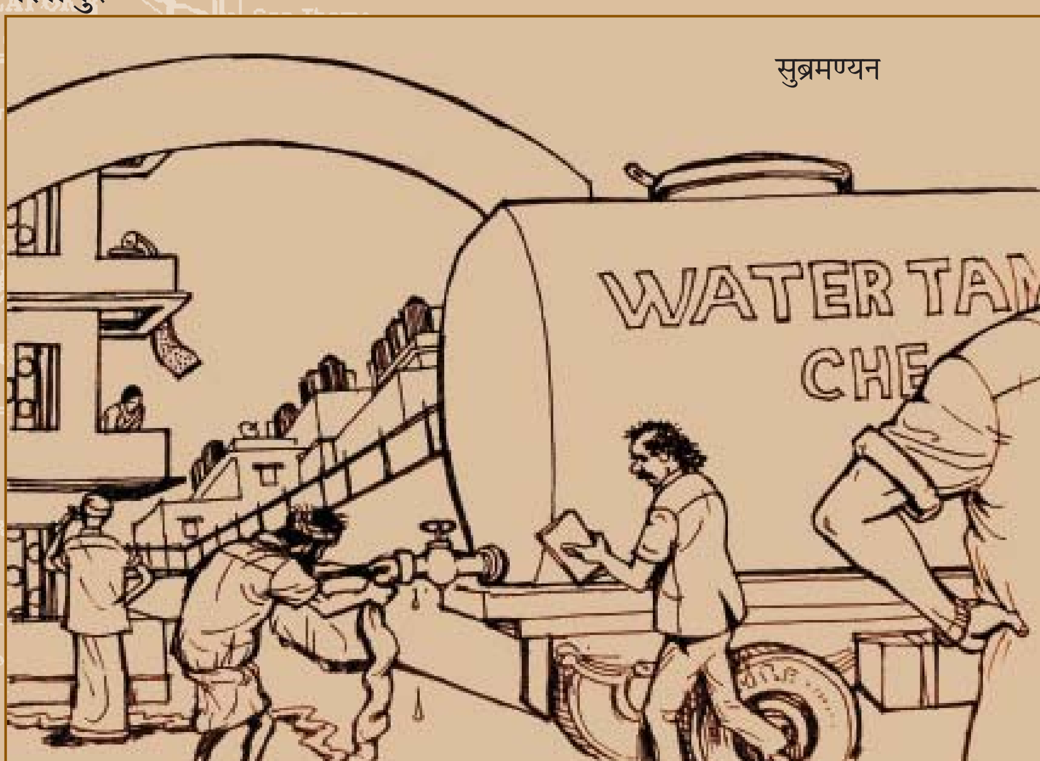
सुब्रमण्यन
WATER TA
CHE

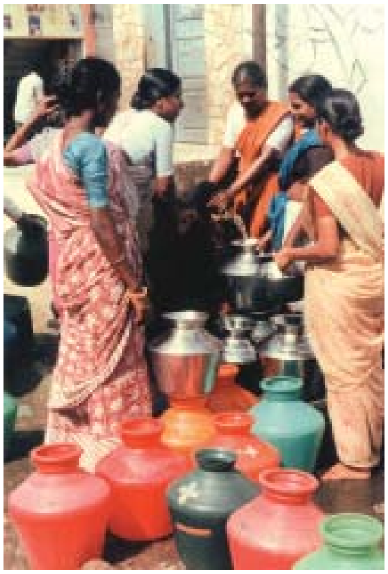

1. आपने ऊपर उल्लिखित चार स्थितियों को देखा है। अब बताइए कि चेन्नई में पानी की स्थिति कैसी है।

2. उपरोक्त वर्णन में से घरेलू इस्तेमाल के विभिन्न जल स्रोतों को चुनें।

3. आपकी राय में सुब्रमण्यन और पद्मा के अनुभवों में क्या समानता है और क्या अलग है।

4. अपने इलाके में जलापूर्ति की स्थिति का वर्णन करते हुए एक अनुच्छेद लिखें।

5. देश के ज़्यादातर स्थानों पर गर्मियों में पानी बूँद-बूँद क्यों आने लगता है? पता लगाइए।

कक्षा में चर्चा के लिए-

क्या चेन्नई में सभी के लिए पानी का संकट है? क्या आप बता सकते हैं कि अलग-अलग लोगों को अलग-अलग मात्रा में पानी क्यों मिलता है? दो कारण बताएँ।

चेन्नई के लोग और पानी

श्री रामगोपाल जैसे आला सरकारी अफ़सर चेन्नई के अन्ना नगर में रहते हैं। भरपूर पानी के छिड़काव के कारण हरे-भरे बाग-बगीचों वाला यह इलाका खासा आकर्षक है। यहाँ के नलों में 24 घंटे पानी रहता है। जब पानी की आपूर्ति कम होती है तो श्री रामगोपाल नगर जल निगम में परिचित एक बड़े अफ़सर से बात करते हैं और फ़ौरन उनके लिए पानी के टैंकर का इंतज़ाम हो जाता है।

शहर के ज़्यादातर इलाकों की तरह मैलापुर में सुब्रमण्यन के अपार्टमेंट में भी पानी की कमी है। यहाँ नगरपालिका दो दिन में एक बार पानी उपलब्ध कराती है। कुछ लोगों की ज़रूरतें निजी बोरवेल से पूरी हो जाती हैं। लेकिन बोरवेल का पानी खारा है। लोग उसे शौचालय और साफ़-सफ़ाई के लिए ही इस्तेमाल करते हैं। दूसरे कामों के लिए टैंकरों का पानी खरीदना पड़ता है। सुब्रमण्यन टैंकरों से पानी खरीदने के लिए हर महीने 500-600 रुपए खर्च करते हैं। पीने के पानी को साफ़ करने के लिए लोगों ने घरों में ही जलशोधन उपकरण लगवाए हुए हैं।

मडीपाक्कम के एक मकान में शिवा पहली मंजिल में किराए पर रहता है। उसे चार दिन में एक बार पानी मिलता है। पानी की कमी के कारण वह अपने परिवार को चेन्नई नहीं ला पा रहा है। पीने के लिए शिवा बाज़ार से पानी की बोतलें खरीदता है।

पद्मा घरेलू नौकरानी है। वह सैदापेट में काम करती है और पास ही एक झुग्गी बस्ती में रहती है। उसकी झुग्गी का किराया 650 रुपए माहवार है। उसकी झुग्गी में न तो शौचालय है और न ही पानी का अन्य स्रोत है। इस तरह की 30 झुग्गियों के लिए कोने में एक ही नल है। इस नल में रोज़ 20 मिनट के लिए एक बोरवेल से पानी आता है। इस दौरान एक परिवार को ज़्यादा से ज़्यादा 3 बाल्टियाँ भरने का मौका मिलता है। इसी पानी को लोग नहाने, धोने और पीने के लिए इस्तेमाल करते हैं। गर्मियों में पानी इतना कम हो जाता है कि कई परिवारों को पानी ही नहीं मिल पाता। उन्हें टैंकरों का घंटों इंतज़ार करना पड़ता है।

जीवन के अधिकार के रूप में पानी

जीवन और स्वास्थ्य के लिए पानी आवश्यक है। न केवल यह हमारी दैनिक ज़रूरतों को पूरा करने के लिए आवश्यक है, बल्कि पीने का साफ़ पानी बहुत सारी पानी से होने वाली बीमारियों को भी रोक सकता है। भारत की स्थिति यह है कि जिन देशों में दस्त, पेचिश, हैजा जैसी बीमारियों के सबसे ज़्यादा मामले सामने आते हैं, उनमें उसका स्थान काफ़ी ऊपर आता है। पानी से संबंधित बीमारियों के कारण हर रोज़ 1600 से ज़्यादा भारतीय मौत के मुँह में चले जाते हैं। उनमें से ज़्यादातर पाँच साल से भी कम उम्र के बच्चे होते हैं। अगर लोगों के पास पीने का पानी सहज रूप से उपलब्ध हो तो इन मौतों को रोका जा सकता है।

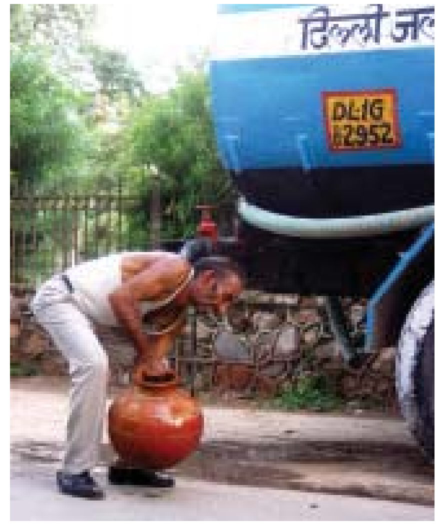

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 21 के अंतर्गत पानी के अधिकार को जीवन के अधिकार का हिस्सा माना गया है। इसका मतलब यह है कि अमीर–गरीब, हर व्यक्ति का यह अधिकार है कि उसे सस्ती कीमत पर दैनिक ज़रूरतों को पूरा करने के लिए पर्याप्त मात्रा में पानी मिले। कहने का मतलब यह है कि पानी तक सार्वभौमिक पहुँच होनी चाहिए। दूसरे शब्दों में सबको पानी मिलना चाहिए।

"...जल अधिकार का मतलब है कि प्रत्येक व्यक्ति को व्यक्तिगत और घरेलू इस्तेमाल के लिए पर्याप्त, सुरक्षित, स्वीकार्य, भौतिक रूप से पहुँच के भीतर और सस्ती दर पर पानी मिलना चाहिए।"

संयुक्त राष्ट्र 2002

उच्च न्यायालयों और सर्वोच्च न्यायालय ने कई मुकदमों में यह कहा है कि सुरक्षित पेयजल का अधिकार भी मौलिक अधिकारों में से एक है। कुछ दिन पहले 2007 में आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय ने पानी में गंदगी के सवाल पर महबूब नगर जिले के एक किसान द्वारा लिखे गए पत्र के आधार पर चली सुनवाई में इस बात को फिर दोहराया है। पत्र भेजने वाले किसान की शिकायत थी कि एक कपड़ा बनाने वाली कंपनी गाँव के पास स्थित जलधारा में विषैले रसायन छोड़ रही है। उससे भूमिगत पानी दूषित हो गया है जो कि सिंचाई और पीने के पानी का स्रोत है। इस मुकदमे के आधार पर न्यायाधीशों ने महबूब नगर के ज़िला कलेक्टर को आदेश दिया कि वह गाँव के प्रत्येक व्यक्ति को हर रोज़ 25 लीटर पानी उपलब्ध कराएँ।

जनसुविधाएँ

पानी की तरह कुछ अन्य सुविधाएँ भी हैं जिनका हर व्यक्ति के लिए इंतज़ाम किया जाना चाहिए। पिछले साल आपने स्वास्थ्य और स्वच्छता, इन दो सुविधाओं के बारे में पढ़ा था। इसी तरह बिजली, सार्वजनिक परिवहन, विद्यालय और कॉलेज भी अनिवार्य चीज़ें हैं। इन्हें **जनसुविधाएँ** के नाम से जाना जाता है।

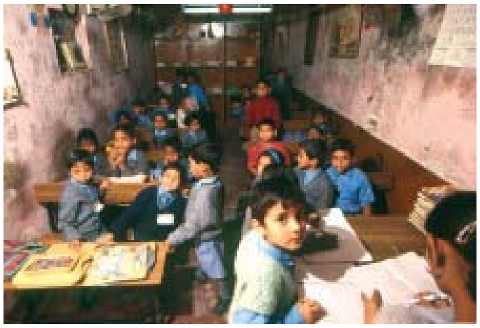

भारतीय संविधान 6 से 14 वर्ष की आयु के सभी बच्चों को शिक्षा के अधिकार की गारंटी देता है। इस अधिकार का महत्त्वपूर्ण पहलू यह है कि सभी बच्चों को समान रूप से स्कूली शिक्षा उपलब्ध हो। लेकिन शिक्षा पर अध्ययन करने वाले कार्यकर्त्ताओं एवं शोधार्थियों के निष्कर्षों से यह तथ्य सामने आया है कि भारत में स्कूली शिक्षा में हमेशा से काफ़ी असमानता रही है।

किसी जनसुविधा की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता यह होती है कि एक बार निर्माण हो जाने के बाद उसका बहुत सारे लोग इस्तेमाल कर सकते हैं। मसलन अगर गाँव में एक स्कूल बना दिया जाए तो उससे बहुत सारे बच्चों को शिक्षा मिलती है। इसी तरह किसी इलाके में बिजली की आपूर्ति बहुत सारे लोगों के लिए फ़ायदेमंद हो सकती है : किसान अपने खेतों की सिंचाई के लिए पंपसेट चला सकते हैं, लोग बिजली से चलने वाली छोटी-मोटी वर्कशॉप खोल सकते हैं, विद्यार्थियों को पढ़ने-लिखने में आसानी हो जाती है और किसी न किसी तरीके से गाँव के अधिकांश लोगों को फ़ायदा होता है।

सरकार की भूमिका

चूँकि जनसुविधाएँ इतनी महत्त्वपूर्ण हैं, इसलिए उन्हें मुहैया कराने की ज़िम्मेदारी भी किसी न किसी के ऊपर ज़रूर आनी चाहिए। जी हाँ, यह ज़िम्मेदारी सरकार के ऊपर आती है। सरकार की बहुत सारी महत्त्वपूर्ण ज़िम्मेदारियों में से एक यह है कि वह सभी लोगों को इस तरह की जनसुविधाएँ मुहैया कराए। आइए, इस बात को समझें कि यह ज़िम्मेदारी सरकार (और केवल सरकार) को ही क्यों उठानी चाहिए।

हम देख चुके हैं कि निजी कंपनियाँ मुनाफ़े के लिए चलती हैं। कक्षा 7 की पुस्तक में 'बाज़ार में एक कमीज़' अध्याय को पढ़ कर आप यह समझ चुके होंगे। ज़्यादातर जनसुविधाओं में मुनाफ़े की गुंजाइश नहीं होती। उदाहरण के लिए नालियों को साफ़ रखने या मलेरिया-रोधी अभियान चलाने से किसी कंपनी को क्या मुनाफ़ा हो सकता है? फलस्वरूप कोई निजी कंपनी इस तरह के कामों में दिलचस्पी नहीं लेगी।

लेकिन स्कूल और अस्पताल जैसी कुछ जनसुविधाओं में निजी कंपनियों को दिलचस्पी हो सकती है। हमारे पास इस आशय के बहुत सारे उदाहरण हैं। अगर आप शहर में रहते हैं तो आपने कई जगह निजी कंपनियों को टैंकरों या सीलबंद बोतलों के ज़रिए पानी की आपूर्ति करते हुए भी देखा होगा। ऐसी स्थितियों में निजी कंपनियाँ जनसुविधाएँ तो मुहैया कराती हैं, लेकिन उनकी कीमत इतनी ज़्यादा होती है कि चंद लोग ही उसका खर्च उठा पाते हैं। यह सुविधा सस्ती दर पर सभी लोगों के लिए उपलब्ध नहीं होती। जितना खर्च करेंगे लोग उसके मुताबिक ही सुविधाएँ पाएँगे, यदि यह सामान्य नियम बन जाए तो बड़ी मुश्किल होगी। इसका नतीज़ा यह होगा कि जो इन सुविधाओं के एवज में खर्च नहीं कर पाएँगे वे सम्मानजनक जीवन जीने से वंचित रह जाएँगे।

यह कोई अच्छा विकल्प नहीं है। जनसुविधाओं का संबंध लोगों की मूलभूत सुविधाओं से होता है। किसी भी आधुनिक समाज के लिए ज़रूरी है कि वहाँ इन सुविधाओं का इंतज़ाम हो ताकि लोगों की मूलभूत ज़रूरतें पूरी की जा सकें। संविधान में जीवन के अधिकार का जो आश्वासन दिया गया है वह देश के सभी लोगों को प्राप्त है। इसलिए जनसुविधाएँ मुहैया कराने की ज़िम्मेदारी लाजिमी तौर पर सरकार के ऊपर ही आनी चाहिए।

सरकार को जनसुविधाओं के लिए पैसा कहाँ से मिलता है?

आप हर साल सुनते होंगे कि सरकार ने संसद में बजट पेश किया है। बजट के ज़रिए सरकार अपने नफ़े–नुकसान का ब्यौरा पेश करती है। इसमें सरकार पिछले साल के खर्चों का खाता पेश करती है और अगले साल के खर्चों की योजना सामने रखती है।

बजट में सरकार को इस बात का भी ऐलान करना पड़ता है कि अगले साल की योजनाओं के लिए पैसे की व्यवस्था कहाँ से की जाएगी। जनता से मिलने वाला कर सरकार की आमदनी का मुख्य जरिया होता है। जनता से कर वसूल करने और उन्हें सार्वजनिक कार्यक्रमों पर खर्च करने का सरकार को पूरा अधिकार होता है। उदाहरण के लिए पानी की आपूर्ति के लिए सरकार को पानी निकालने, पानी को दूर तक पहुँचाने, पाइपों का जाल बिछाने, पानी को साफ करने और आखिर में गंदे पानी को ठिकाने लगाने पर खर्च करना पड़ता है। सरकार इन खर्चों को कुछ हद तक करों के ज़रिए और कुछ हद तक पानी की कीमत वसूल करके पूरा करती है। पानी की कीमत इस तरह तय की जाती है कि ज़्यादातर लोग रोज़ाना एक निश्चित मात्रा में पानी का खर्च उठा सकें।

सरकार पूरी आबादी के लिए समुचित स्वास्थ्य सुविधाओं की व्यवस्था करने में अहम भूमिका निभाती है। पोलियो जैसी बीमारियों का उन्मूलन भी इसी तरह की योजनाओं के तहत आता है। इस चित्र में एक छोटे बच्चे को पोलियो की खुराक दी जा रही है।

अमू– देखा तुमने, सैदापेट की सड़कें कितनी ऊबड़-खाबड़ थीं? सड़कों पर बत्ती भी नहीं थी। पता नहीं रात में वहाँ क्या हालत होती होगी!

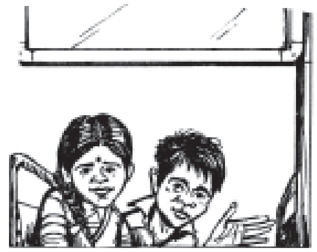

कुमार– किसी झुग्गी बस्ती में तुम और क्या उम्मीद करोगी!

अमू– झुग्गी बस्तियाँ ऐसी क्यों होती हैं? क्या वहाँ जनसुविधाएँ नहीं होनी चाहिए?

कुमार– मेरे खयाल में जनसुविधाएँ उन लोगों के लिए होती हैं जो बस्तियों में ठीक-ठाक घरों में रहते हैं। वही लोग हैं जो कर चुकाते हैं।

अमू– सरकार की ज़िम्मेदारी है कि वह केवल 'ठीक-ठाक' बस्तियों को ही नहीं, बल्कि सभी को जनसुविधाएँ मुहैया कराए। तुम ऐसे क्यों कह रहे हो? क्या बस्ती के लोग देश के नागरिक नहीं हैं? उनके भी तो कुछ अधिकार हैं।

कुमार (गुस्से में)– पर ऐसे तो सरकार दिवालिया हो जाएगी!

अमू– चाहे जो हो, उसे रास्ता तो निकालना पड़ेगा। क्या तुम कल्पना कर सकते हो कि सड़क, पानी, बिजली के बिना झुग्गियों में जिंदगी कैसी होगी?

कुमार– अरे...!

अमू– हमारे संविधान में बहुत सारी जनसुविधाओं को जीवन के अधिकार का हिस्सा माना गया है। सरकार को इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि इन अधिकारों की अवहेलना न हो ताकि हर व्यक्ति एक सम्मानजनक जीवन जी सके।

आप किसकी राय से सहमत हैं?

1. जनसुविधाएँ क्या होती हैं? जनसुविधाएँ मुहैया कराने की ज़िम्मेदारी सरकार पर क्यों होनी चाहिए?

2. सरकार कुछ जनसुविधाओं के लिए निजी कंपनियों का भी सहारा ले सकती है। उदाहरण के लिए सड़कें बनाने के ठेके निजी कंपनियों या ठेकेदारों को भी दिए जाते हैं। दिल्ली में बिजली के वितरण का काम दो निजी कंपनियों के हाथ में है। लेकिन सरकार को इन कंपनियों पर कड़ी नज़र रखनी चाहिए और यह सुनिश्चित करना चाहिए कि वे इन सुविधाओं को सस्ती कीमत पर सभी लोगों तक पहुँचाने के लक्ष्य को पूरा करने में कोई कसर न छोड़ें।

आपको ऐसा क्यों लगता है कि जनसुविधाओं की ज़िम्मेदारी सरकार के ऊपर ही होनी चाहिए जबकि वह इन कामों को निजी कंपनियों के ज़रिए भी करवा सकती है?

3. अपने घर के पानी के बिल को देखें और पता लगाएँ कि आपके इलाके में नगरपालिका जल की न्यूनतम कीमत क्या है। अगर आप ज़्यादा पानी का इस्तेमाल करते हैं तो क्या उसकी दर भी बढ़ जाती है? पानी के ज़्यादा इस्तेमाल पर बढ़ी हुई दर से बिल वसूल करने के पीछे सरकार का क्या उद्देश्य है?

4. किसी वेतनभोगी कर्मचारी, अपना व्यवसाय/फैक्टरी चलाने वाले व्यक्ति और एक दुकानदार से बात करके पता लगाएँ कि लोग किस-किस तरह के कर सरकार को चुकाते हैं। अपने नतीजों को कक्षा में शिक्षक को दिखाएँ और चर्चा करें।

कम दूरी के लिए बसें ही सार्वजनिक परिवहन का सबसे महत्त्वपूर्ण साधन हैं। ज़्यादातर कामकाजी लोग बसों से ही अपनी मंजिल तक पहुँचते हैं। तेज़ शहरीकरण के कारण बड़े शहरों में भी सार्वजनिक बस प्रणाली ज़रूरत के हिसाब से कम साबित होती जा रही है। इस कमी को पूरा करने के लिए दिल्ली तथा अन्य महानगरों में सरकार ने मैट्रो रेल परियोजना के रूप में एक महत्त्वाकांक्षी योजना शुरू की है। दिल्ली में मैट्रो रेल के पहले खंड का निर्माण करने के लिए सरकारी बजट से 11,000 करोड़ रुपए का खर्चा किया गया है। कुछ लोगों का कहना है कि अगर सरकार सार्वजनिक बस प्रणाली में सुधार पर ध्यान देती तो इतने भारी खर्चे की ज़रूरत न पड़ती और लोगों की ज़रूरत भी पूरी हो जाती। आपको क्या लगता है? आपकी राय में देश के दूसरे भागों के लिए क्या हल ढूँढ़ा जा सकता है?

चेन्नई में पानी की आपूर्ति : क्या सबको पानी मिल रहा है?

इसमें कोई शक नहीं कि जनसुविधाएँ सभी को मुहैया होनी चाहिए। लेकिन हकीकत में ऐसा नहीं है। बहुत सारे स्थानों पर ऐसी सुविधाओं का भारी अभाव है। इस अध्याय के अगले हिस्सों में आप पानी की व्यवस्था के बारे में पढ़ेंगे। यह जनसुविधा बहुत मायने रखती है।

जैसा कि इस अध्याय की शुरुआत में हमने देखा था, चेन्नई में पानी की भारी कमी है। नगरपालिका की आपूर्ति से शहर की लगभग आधी ज़रूरत ही पूरी हो पाती है। कुछ इलाकों में नियमित रूप से पानी आता है। कुछ इलाकों में बहुत कम पानी आता है। जहाँ पानी का भंडारण किया गया है उसके आसपास के इलाकों में ज़्यादा पानी आता है, जबकि दूर की बस्तियों को कम पानी मिलता है।

जलापूर्ति में कमी का बोझ ज़्यादातर गरीबों पर पड़ता है। जब मध्यम वर्ग के लोगों के सामने पानी की किल्लत पैदा हो जाती है तो इस वर्ग के लोग ज़्यादा आसानी से इसका हल ढूँढ़ लेते हैं। वे बोरवेल खोद कर, टैंकरों से पानी खरीद कर या बोतलबंद पानी खरीद का अपना काम चला लेते हैं।

पानी की उपलब्धता के अलावा कुछ ही लोगों की 'सुरक्षित' पेयजल तक पहुँच है। यह इस पर निर्भर करता है कि कोई व्यक्ति कितना खर्च कर सकता है। इस तरह संपन्न तबके के पास ही ज़्यादा विकल्प होते हैं। वे बोतलबंद पानी और जलशोधक उपकरणों के सहारे साफ पानी का इंतज़ाम कर सकते हैं। इस मद में खर्च कर सकने के कारण उन्हें साफ़ पानी मिल जाता है। परंतु गरीब इस सुविधा से वंचित रह जाते हैं। लिहाज़ा ऐसा लगता है कि जिन लोगों के पास पैसा है उन्हीं के पास पानी का अधिकार है। यह स्थिति 'पर्याप्त और स्वच्छ पेयजल उपलब्ध कराने' के लक्ष्य से बहुत दूर है।

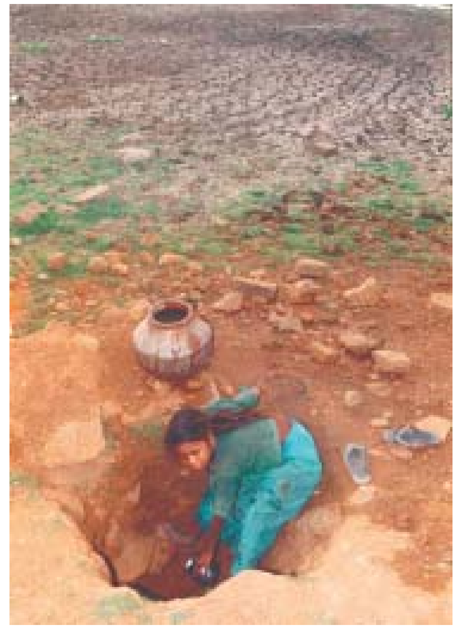

ग्रामीण इलाकों में मनुष्यों और मवेशियों, दोनों के लिए पानी की ज़रूरत पड़ती है। यहाँ कुआँ, हैंडपंप, तालाब और कभी-कभार छत पर स्थित टंकियों से पानी मिलता है। इनमें से ज़्यादातर निजी स्वामित्व में हैं। शहरी इलाकों के मुकाबले ग्रामीण इलाकों में सार्वजनिक जलापूर्ति का और भी ज़्यादा अभाव है।

किसानों से पानी छीनना

पानी की कमी ने निजी कंपनियों के लिए मुनाफ़े के नए रास्ते खोल दिए हैं। बहुत सारी निजी कंपनियाँ शहर के आसपास के इलाकों से पानी खरीद कर शहरों में बेचती हैं। चेन्नई में मामंदूर, पालुर, कारुनगिझी जैसे कस्बों और शहर के उत्तर में स्थित गाँवों से पानी लाया जाता है। 13,000 से भी ज़्यादा टैंकर इस काम में लगे हुए हैं। हर महीने पानी के व्यापारी किसानों को पेशगी रकम देते हैं ताकि वे किसानों की ज़मीन से पानी निकाल सकें। इस तरह न केवल खेती का पानी छिन जाता है, बल्कि गाँवों के लिए पीने के पानी की आपूर्ति भी कम पड़ने लगती है। नतीज़ा यह है कि इन सारे कस्बों और गाँवों में भूमिगत जल स्तर बहुत बुरी तरह गिर चुका है।

विकल्पों की तलाश

चेन्नई की स्थिति कोई अनूठी नहीं है। गर्मियों के महीनों में पानी की कमी का यह हाल देश के दूसरे शहरों में भी दिखाई देने लगता है। नगरपालिका की जलापूर्ति में कमी से निपटने के लिए निजी कंपनियाँ ज़्यादा से ज़्यादा इलाकों में फ़ैलती जा रही हैं। ये कंपनियाँ अपने मुनाफ़े के लिए पानी बेचती हैं। पानी के इस्तेमाल में भी ज़बरदस्त गैर-बराबरी दिखाई देती है। शहरी इलाकों में प्रति व्यक्ति लगभग 135 लीटर पानी प्रतिदिन मिलना चाहिए। पानी की यह मात्रा लगभग 7 बाल्टी के बराबर है। शहरी जल आयोग ने यह मात्रा तय की है। लेकिन झुग्गी बस्तियों में लोगों को रोज़ाना प्रति व्यक्ति 20 लीटर पानी (एक बाल्टी) भी नहीं मिलता। दूसरी तरफ़ आलीशान होटलों में रहने वाले लोगों को रोज़ाना प्रति व्यक्ति 1600 लीटर (80 बाल्टी) तक पानी मिलता है।

नगरपालिका के ज़रिए जलापूर्ति में कमी को अकसर सरकार की नाकामयाबी माना जाता है। कुछ लोगों की दलील है कि चूँकि सरकार ज़रूरत के हिसाब से पानी मुहैया नहीं करवा पा रही है और बहुत सारे शहरी जल विभाग घाटे में चल रहे हैं, इसलिए जलापूर्ति का काम निजी कंपनियों को सौंप दिया जाना चाहिए। उन्हें लगता है कि निजी कंपनियाँ ज़्यादा बेहतर काम कर सकती हैं।

चर्चा करें : अगर सरकार जलापूर्ति की ज़िम्मेदारी से हाथ खींच ले तो क्या होगा? क्या आपको लगता है कि यह सही कदम होगा?

इस दलील की रोशनी में निम्नलिखित तथ्यों पर विचार कीजिए-

1. दुनिया भर में जलापूर्ति की ज़िम्मेदारी सरकार पर रही है। निजी जलापूर्ति व्यवस्था के उदाहरण बहुत कम हैं।
2. दुनिया में कई ऐसे क्षेत्र हैं जहाँ सार्वभौमिक जलापूर्ति सब लोगों तक पहुँच चुकी है (नीचे बॉक्स देखें)।

पोर्तो एलेग्रे में सार्वजनिक जलापूर्ति

पोर्तो एलेग्रे ब्राजील का एक शहर है। इस शहर में बहुत सारे लोग गरीब हैं, लेकिन गौर करने वाली बात यह है कि दुनिया के दूसरे ज़्यादातर शहरों के मुकाबले यहाँ शिशु मृत्यु दर बहुत कम है। यहाँ नगर जल विभाग ने सभी लोगों को स्वच्छ पेयजल मुहैया करा दिया है। शिशु मृत्यु दर में गिरावट के पीछे यह सबसे बड़ा कारण है। यहाँ पानी की औसत कीमत कम रखी गई है और गरीबों से केवल आधी कीमत ली जाती है। विभाग को जो भी फ़ायदा होता है उसका इस्तेमाल जलापूर्ति में सुधार के लिए किया जाता है। जल विभाग का काम पारदर्शी ढंग से चलता है। विभाग को कौन सी योजना हाथ में लेनी चाहिए, इस बारे में लोग मिलकर तय करते हैं। जनसभाओं में जनता प्रबंधकों का पक्ष सुनती है और जल विभाग की प्राथमिकताएँ तय करने में वोट के ज़रिए फ़ैसला करती है।

3. जहाँ जलापूर्ति की ज़िम्मेदारी निजी कंपनियों को सौंपी गई, ऐसे कुछ मामलों में पानी की कीमत में भारी इज़ाफ़ा हुआ। इस कारण वहाँ बहुत सारे लोगों के लिए पानी का खर्चा उठाना संभव नहीं हो पाया। ऐसे शहरों में लोगों के विशाल प्रदर्शन हुए। बोलीविया आदि देशों में तो दंगे भी फैल गए जिसके दबाव में सरकार को जलापूर्ति व्यवस्था निजी हाथों से छीन कर दोबारा अपने हाथों में लेनी पड़ी।

4. भारत में सरकारी जल विभागों की सफलता के कई उदाहरण रहे हैं। लेकिन ये उदाहरण कम हैं और उनकी सफलता कुछ क्षेत्रों में ही सीमित दिखाई देती है। मुंबई का जलापूर्ति विभाग अपने खर्चों को पूरा करने के लिए जल शुल्क के ज़रिए पर्याप्त पैसा जुटा लेता है। हाल ही की एक रिपोर्ट से पता चलता है कि हैदराबाद में जल विभाग के दायरे में इज़ाफ़ा हुआ है और उसकी आमदनी बढ़ी है। चेन्नई में जल विभाग ने वर्षा जल संचय के लिए कई योजनाएँ शुरू की हैं ताकि भूमिगत जलस्तर में सुधार लाया जा सके। वहाँ पर पानी की ढुलाई और वितरण के लिए निजी कंपनियों की भी सेवाएँ ली जा रही हैं, लेकिन पानी के टैंकरों की दर सरकारी जलापूर्ति विभाग ही तय करता है और वही उन्हें काम करने की इजाजत देता है। इसलिए इन टैंकरों को 'अनुबंधित' कहा जाता है।

ऊपर के भाग में आए मुख्य विचारों पर चर्चा करें। जलापूर्ति में सुधार के लिए आपकी राय में क्या किया जा सकता है?

क्या आपको ऐसा लगता है कि पानी और बिजली जैसे संसाधनों को बचाना और सार्वजनिक परिवहन साधनों का ज़्यादा इस्तेमाल करना बेहतर है?

मुंबई की उपनगरीय रेलवे एक अच्छी सार्वजनिक परिवहन प्रणाली है। यह दुनिया का सबसे घना यातायात मार्ग है। यह रेलवे हर रोज़ 65 लाख यात्रियों को एक जगह से दूसरी जगह ले जाती है। 300 किलोमीटर से भी ज़्यादा लंबे नेटवर्क पर चलने वाली इन स्थानीय ट्रेनों के ज़रिए दूर-दूर रहने वाले लोग भी शहर में काम ढूँढ़ने आते हैं। इस बात पर गौर करें कि शहरों में रहन-सहन की भारी लागत के कारण साधारण मेहनतकश लोग शहर में नहीं रह सकते।

स्वच्छता संबंधी सुविधाओं का विस्तार

" 'हमारे लिए पाखाने/शौचालय!' उन्होंने हैरानी से कहा।

'हम तो बाहर खुले में जाकर अपना काम निपटा लेते हैं।'

'लैट्रीन तो तुम्हारे जैसे बड़े लोगों के लिए होती है।' "

'अछूतों' की शिकायतों को याद करते हुए महात्मा गांधी का वक्तव्य, राजकोट स्वच्छता समिति, 1896.

पीने के साफ पानी के अलावा यह भी ज़रूरी है कि पानी से फैलने वाली बीमारियों को रोकने के लिए स्वच्छता का ध्यान रखा जाए। लेकिन भारत में स्वच्छता सुविधाओं का दायरा तो जलापूर्ति से भी छोटा है। 2001 के सरकारी आँकड़ों से पता चलता है कि भारत के 68 प्रतिशत परिवारों के पास पेयजल की सुविधा उपलब्ध है, जबकि स्वच्छता सुविधाएँ (घर के भीतर शौचालय) 36 प्रतिशत परिवारों में ही उपलब्ध हैं। यहाँ भी ग्रामीण और शहरी इलाकों के गरीबों की स्थिति ज़्यादा कमज़ोर दिखाई देती है।

गैर-सरकारी संगठन 'सुलभ इंटरनेशनल' पिछले तीन दशक से निम्न-जाति, निम्न-आय वर्ग लोगों के सामने मौजूद स्वच्छता के अभाव की समस्या से निपटने के लिए कोशिश कर रहा है। इस संगठन ने 75,000 से ज़्यादा सार्वजनिक शौचालय इकाइयाँ और 12,00,000 से ज़्यादा निजी शौचालय बनाए हैं जिससे एक करोड़ लोग इन सुविधाओं का लाभ उठा रहे हैं। सुलभ की सुविधाओं का इस्तेमाल करने वाले ज़्यादातर गरीब मेहनतकश वर्ग के लोग होते हैं।

सुलभ ने सरकारी पैसे से शौचालय इकाइयाँ बनाने के लिए नगरपालिकाओं या अन्य स्थानीय निकायों के साथ अनुबंध भी किए हैं। स्थानीय विभाग इन सेवाओं की स्थापना के लिए ज़मीन और पैसा मुहैया कराते हैं जबकि रख-रखाव की लागत कई बार प्रयोक्ताओं से मिलने वाले पैसे से पूरी की जाती है (शहरों में शौचालयों के इस्तेमाल पर एक रुपया शुल्क लिया जाता है)।

अगली बार जब आप सुलभ शौचालय को देखेंगे तो हो सकता है खुद यह जानना चाहें कि ये शौचालय कैसे होते हैं!

क्या आपको लगता है कि समुचित स्वच्छता सुविधाओं के अभाव से लोगों का जीवन प्रभावित होता है? कैसे?

आपको ऐसा क्यों लगता है कि इससे औरतों और लड़कियों पर ज़्यादा गहरा असर पड़ेगा?

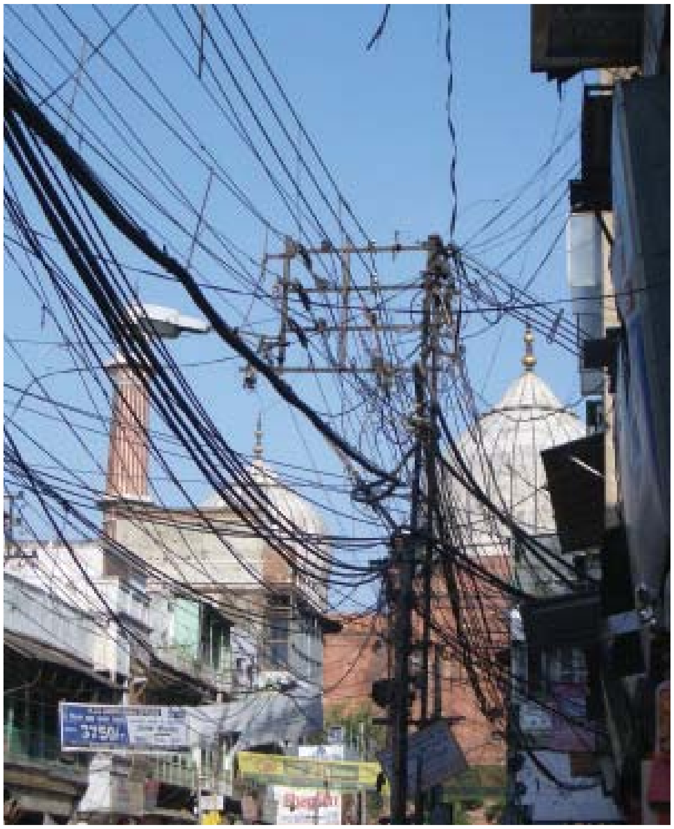

2001 की जनगणना के अनुसार 44 प्रतिशत ग्रामीण घरों में बिजली पहुँच चुकी है। इसका मतलब यह है कि लगभग 7 करोड़ 80 लाख परिवार अभी भी अँधेरे में हैं।

निष्कर्ष

जनसुविधाओं का संबंध हमारी बुनियादी ज़रूरतों से होता है। भारतीय संविधान में पानी, स्वास्थ्य, शिक्षा आदि अधिकारों को जीवन के अधिकार का हिस्सा माना गया है। इस प्रकार सरकार की एक अहम ज़िम्मेदारी यह बनती है कि वह प्रत्येक व्यक्ति को पर्याप्त जनसुविधाएँ मुहैया करवाए।

लेकिन इस मोर्चे पर संतोषजनक प्रगति नहीं हुई है। आपूर्ति में कमी है और वितरण में भारी असमानता दिखाई देती है। महानगरों और बड़े शहरों के मुकाबले कस्बों और गाँवों में तो इन सुविधाओं की स्थिति और भी खराब है। संपन्न बस्तियों के मुकाबले गरीब बस्तियों में सेवाओं की स्थिति कमज़ोर है। इन सुविधाओं को निजी कंपनियों के हाथों में सौंप देने से समस्या हल होने वाली नहीं है। किसी भी समाधान में इस महत्त्वपूर्ण तथ्य को नज़रअंदाज़ नहीं किया जा सकता कि देश के प्रत्येक नागरिक को इन सुविधाओं को पाने का अधिकार है और उसे ये सुविधाएँ समतापरक ढंग से मिलनी चाहिए।

अभ्यास

1. आपको ऐसा क्यों लगता है कि दुनिया में निजी जलापूर्ति के उदाहरण कम हैं?

2. क्या आपको लगता है कि चेन्नई में सबको पानी की सुविधा उपलब्ध है और वे पानी का खर्च उठा सकते हैं? चर्चा करें।

3. किसानों द्वारा चेन्नई के जल व्यापारियों को पानी बेचने से स्थानीय लोगों पर क्या असर पड़ रहा है? क्या आपको लगता है कि स्थानीय लोग भूमिगत पानी के इस दोहन का विरोध कर सकते हैं? क्या सरकार इस बारे में कुछ कर सकती है?

4. ऐसा क्यों है कि ज़्यादातर निजी अस्पताल और निजी स्कूल कस्बों या ग्रामीण इलाकों की बजाय बड़े शहरों में ही हैं?

5. क्या आपको लगता है कि हमारे देश में जनसुविधाओं का वितरण पर्याप्त और निष्पक्ष है? अपनी बात के समर्थन में एक उदाहरण दें।

6. अपने इलाके की पानी, बिजली आदि कुछ जनसुविधाओं को देखें। क्या उनमें सुधार की कोई गुंजाइश है? आपकी राय में क्या किया जाना चाहिए? इस तालिका को भरें।

	क्या यह उपलब्ध है?	**उसमें कैसे सुधार लाया जाए?**
पानी		
बिजली		
सड़क		
सार्वजनिक परिवहन		

7. क्या आपके इलाके के सभी लोग उपरोक्त जनसुविधाओं का समान रूप से इस्तेमाल करते हैं? विस्तार से बताएँ।

8. जनगणना के साथ-साथ कुछ जनसुविधाओं के बारे में भी आँकड़े इकट्ठा किए जाते हैं। अपने शिक्षक के साथ चर्चा करें कि जनगणना का काम कब और किस तरह किया जाता है।

9. हमारे देश में निजी शैक्षणिक संस्थान – स्कूल, कॉलेज, विश्वविद्यालय, तकनीकी और व्यावसायिक प्रशिक्षण संस्थान – बड़े पैमाने पर खुलते जा रहे हैं। दूसरी तरफ सरकारी शिक्षा संस्थानों का महत्त्व कम होता जा रहा है। आपकी राय में इसका क्या असर हो सकता है? चर्चा कीजिए।

शब्द संकलन

स्वच्छता– मानव मल-मूत्र को सुरक्षित ढंग से नष्ट करने की सुविधा। इसके लिए शौचालयों का निर्माण किया जाता है और गंदे पानी की सफ़ाई के लिए पाइप लगाए जाते हैं। संक्रमण से बचाने के लिए ऐसा करना ज़रूरी होता है।

कंपनी– कंपनी एक तरह की व्यावसायिक संस्था होती है जिसकी स्थापना कुछ लोग या सरकार करती है। जिन कंपनियों का संचालन और स्वामित्व निजी समूहों या व्यक्तियों के हाथ में होता है उन्हें निजी कंपनी कहा जाता है। उदाहरण के लिए टाटा स्टील एक निजी कंपनी है, जबकि इंडियन ऑयल सरकार द्वारा संचालित कंपनी है।

सार्वभौमिक पहुँच– जब हर व्यक्ति को कोई चीज़ पूरी तरह हासिल हो जाती है और वह उसका खर्च उठा सकता है तो इसे सार्वभौमिक पहुँच कहा जाता है। उदाहरण के लिए घर में नल में पानी आ रहा हो तो परिवार को पानी तक पहुँच मिल जाती है और अगर उसकी कीमत कम हो या वह मुफ्त उपलब्ध हो तो हर कोई उसका इस्तेमाल कर सकता है।

मूलभूत सुविधाएँ– भोजन, पानी, आवास, साफ़-सफ़ाई, स्वास्थ्य और शिक्षा जैसी बुनियादी ज़रूरतें जो ज़िंदा रहने के लिए ज़रूरी होती हैं।

अध्याय 10

कानून और सामाजिक न्याय

क्या आपको कक्षा 7 का 'बाज़ार में एक कमीज़' अध्याय याद है? वहाँ हमने देखा था कि बाज़ारों की शृंखला किस तरह कपास उत्पादकों को सुपर बाज़ार में कमीज़ खरीदने वाले ग्राहक से जोड़ देती है। इस शृंखला में हर मोड़ पर क्रय-विक्रय चल रहा था।

कपास पैदा करने वाला छोटा किसान, ईरोड के बुनकर या कपड़ा निर्यात कारखाने के मज़दूर कमीज़ के उत्पादन में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से शामिल बहुत सारे लोग बाज़ार में शोषण का शिकार होते हैं। उनके साथ उचित बर्ताव नहीं होता। बाज़ार में हर जगह लोगों के शोषण की संभावना बनी रहती है, चाहे वे मज़दूर हों, उपभोक्ता हों या उत्पादक हों।

लोगों को इस तरह के शोषण से बचाने के लिए सरकार कुछ कानून बनाती है। इन कानूनों के ज़रिए इस बात की कोशिश की जाती है कि बाजार में अनुचित तौर-तरीकों पर अंकुश लगाया जाए।

आइए बाज़ार की एक आम स्थिति को देखें जिसमें कानून बहुत मायने रखता है। मसला मज़दूरों के मेहनताना का है। निजी कंपनियाँ, ठेकेदार, कारोबारी लोग आमतौर पर ज़्यादा से ज़्यादा मुनाफ़ा कमाने की कोशिश करते हैं। मुनाफ़े की चाह में कई बार वे मज़दूरों को उनका हक नहीं देते और कई बार तो उनका मेहनताना तक नहीं देते। मज़दूरों को उनका मेहनताना न देना कानून की नज़र में गैर-कानूनी या गलत है। मज़दूरों को मेहनताना कम न मिले या उनको वाजिब मेहनताना मिले, इस बात को सुनिश्चित करने के लिए न्यूनतम वेतन का भी एक कानून बनाया गया है। इस कानून के तहत किसी भी मज़दूर को न्यूनतम वेतन से कम मज़दूरी नहीं दी सकती। न्यूनतम वेतन में हर कुछ साल में बढ़ोतरी कर दी जाती है।

जिस तरह मज़दूरों को सुरक्षा प्रदान करने के लिए न्यूनतम वेतन का कानून बनाया गया है उसी तरह बाज़ार में उत्पादकों और उपभोक्ताओं के हितों की रक्षा करने के लिए भी कानून बनाए गए हैं। इन कानूनों के ज़रिए मज़दूर, उपभोक्ता और उत्पादक तीनों के संबंधों को इस तरह संचालित किया जाता है कि उनमें से किसी का शोषण न हो।

न्यूनतम वेतन के लिए कानून की ज़रूरत क्यों पड़ती है?

पता लगाएँ-

(क) आपके राज्य में निर्माण मज़दूरों के लिए तय न्यूनतम वेतन क्या है?

(ख) क्या आपको निर्माण मज़दूरों के लिए तय न्यूनतम वेतन सही, कम या ज़्यादा लगता है?

(ग) न्यूनतम वेतन कौन तय करता है?

अहमदाबाद के एक कपड़ा मिल में काम करते मज़दूर। बिजली से चलने वाले करघों के साथ बढ़ती प्रतिस्पर्धा के कारण 1980 और 1990 के दशकों में ज़्यादातर कपड़ा मिल बंद हो गए थे। पावरलूम बिजली से चलने वाले करघों को कहते हैं। यह 4-6 करघों की छोटी इकाई है। इन करघों के मालिक खुद उन पर काम करते हैं और परिवार के लोगों के साथ बाहर के श्रमिकों को भी काम में लगाते हैं। यह जानी हुई बात है कि बिजली से चलने वाले करघों में कार्यस्थितियाँ बहुत खराब होती हैं।

तालिका संख्या 1 में विभिन्न पक्षों की सुरक्षा से संबंधित कुछ महत्त्वपूर्ण कानून दिए गए हैं। उसमें में दिए गए कॉलम (2) और (3) में बताया गया है कि ये कानून क्यों और किसके लिए ज़रूरी हैं। कक्षा में चर्चा के आधार पर इस तालिका के खाली खानों को भरें।

तालिका 1

कानून	इसकी ज़रूरत क्यों है?	यह कानून किसके हित में है?
न्यूनतम मेहनताना कानून। इसमें यह निश्चित किया गया है कि किसी का भी मेहनताना एक निर्धारित न्यूनतम राशि से कम नहीं होना चाहिए।	बहुत सारे मज़दूरों को उनके मालिक सही मेहनताना नहीं देते। चूँकि मज़दूरों को काम की ज़रूरत होती है, इसलिए वे सौदेबाजी भी नहीं कर पाते और बहुत कम मज़दूरी पर ही काम करने को तैयार हो जाते हैं।	यह कानून सारे मज़दूरों, खासतौर से खेत मज़दूरों, निर्माण मज़दूरों, फैक्ट्री मज़दूरों, घरेलू नौकरों आदि के हितों की रक्षा के लिए बनाया गया है।
कार्यस्थल पर पर्याप्त सुरक्षा व्यवस्था का इंतज़ाम करने वाले कानून। उदाहरण के लिए, चेतावनी अलार्म, आपातकालीन द्वार आदि सही ढंग से काम कर रहे हों।		
चीज़ों की गुणवत्ता निर्धारित मानकों के अनुरूप होनी चाहिए यह बताने वाले कानून। उदाहरण के लिए, विद्युत उपकरण सुरक्षा मानकों के अनुरूप होने चाहिए।	विद्युत उपकरणों, भोजन, दवाई आदि की खराब गुणवत्ता के कारण उपभोक्ताओं का जीवन खतरे में पड़ सकता है।	
ज़रूरी चीज़ों जैसे चीनी, मिट्टी का तेल, अनाज आदि की कीमतों को नियंत्रण में रखने वाले कानून।		ऐसे गरीबों के हितों की रक्षा के लिए जो कि इन चीज़ों की भारी कीमत वहन नहीं कर सकते।
ऐसे कानून जो फैक्ट्रियों को हवा या पानी में प्रदूषण फैलाने से रोकते हैं।		
कार्यस्थल पर बाल मज़दूरी को रोकने वाले कानून।		
मज़दूर यूनियन/संगठन बनाने से संबंधित कानून	यूनियनों में संगठित होकर मज़दूर अपनी संयुक्त ताकत के सहारे सही वेतन और बेहतर कार्यस्थितियों के लिए आवाज उठा सकते हैं।	

कानून बना देना ही काफी नहीं होता। सरकार को यह भी सुनिश्चित करना होता है कि कानूनों को लागू किया जाए। इसका मतलब यह है कि कानून को लागू किया जाना बहुत ज़रूरी होता है। जब कोई कानून ताकतवर लोगों से कमज़ोर लोगों की रक्षा के लिए बनाया जाता है तो उसको लागू करना और भी महत्त्वपूर्ण बन जाता है। उदाहरण के लिए, प्रत्येक मज़दूर को सही वेतन मिले, यह सुनिश्चित करने के लिए सरकार को कार्यस्थलों का नियमित रूप से निरीक्षण करना चाहिए और अगर कोई कानून का उल्लंघन करता है तो उसको सज़ा देनी चाहिए। अगर मज़दूर गरीब या शक्तिहीन है तो आमदनी गँवाने या बदले की कार्रवाई के डर से वह कम वेतन पर भी काम करने को तैयार हो जाता है। मालिक भी इस बात को अच्छी तरह समझते हैं। वे अपनी ताकत का इस्तेमाल करते हैं ताकि मज़दूरों से कम पैसे में काम कराया जा सके। ऐसी सूरत में यह बहुत ज़रूरी होता है कि संबंधित कानूनों को अच्छी तरह लागू किया जाए।

इन कानूनों को बनाने, लागू करने और कायम रखने के लिए सरकार व्यक्तियों या निजी कंपनियों की गतिविधियों को नियंत्रित कर सकती है ताकि सामाजिक न्याय सुनिश्चित किया जा सके। इनमें से बहुत सारे कानूनों का जन्म भारतीय संविधान में दिए गए मौलिक अधिकारों से हुआ है। उदाहरण के लिए, शोषण से मुक्ति के अधिकार का अर्थ है कि किसी को भी कम मेहनताना पर काम करने या बंधुआ मज़दूर के तौर पर काम करने के लिए मजबूर नहीं किया जा सकता। संविधान में यह भी कहा गया है कि 14 साल से कम उम्र के किसी भी बच्चे को किसी कारखाने या खदान या किसी अन्य खतरनाक व्यवसाय में काम पर नहीं रखा जाएगा।

व्यवहार में ये कानून किस तरह सामने आते हैं? ये कानून सामाजिक न्याय की चिंताओं को किस हद तक संबोधित करते हैं? इस अध्याय में हम ऐसे ही कुछ सवालों की पड़ताल करेंगे।

सन् 2001 की जनगणना के मुताबिक भारत में 5 से 14 साल की उम्र के 1.2 करोड़ बच्चे विभिन्न व्यवसायों में नौकरी करते हैं। इनमें से बहुत सारे बच्चे खतरनाक व्यवसायों में हैं। 2006 के अक्टूबर महीने में सरकार ने 14 साल से कम उम्र के बच्चों को घर, ढाबों या रेस्तरां में या चाय की दुकानों आदि में नौकरी पर रखने की प्रथा पर पाबंदी लगा दी थी। बाल मज़दूरी रोकथाम अधिनियम में संशोधन करके अब यह प्रावधान किया गया है कि इतने छोटे बच्चों को नौकरी पर रखना एक गंभीर अपराध है। अगर कोई व्यक्ति इस कानून का उल्लंघन करता है तो उसे 3 माह से 2 साल तक जेल की सज़ा और/या 10,000 से 20,000 रुपए तक का जुर्माना हो सकता है। केंद्र सरकार ने राज्य सरकारों को निर्देश दिया है कि वे घरेलू नौकर के तौर पर काम करने वाले बच्चों को मुक्त कराने और उनके पुनर्वास के लिए योजना बनाएँ। अभी तक महाराष्ट्र, कर्नाटक और तमिलनाडु, केवल इन्हीं तीन सरकारों ने ऐसी योजनाएँ प्रकाशित की हैं। इस कानून के पारित होने के एक साल से भी ज़्यादा समय बाद आज 74 प्रतिशत घरेलू बाल मज़दूर 16 साल से कम उम्र के हैं।

भोपाल गैस त्रासदी

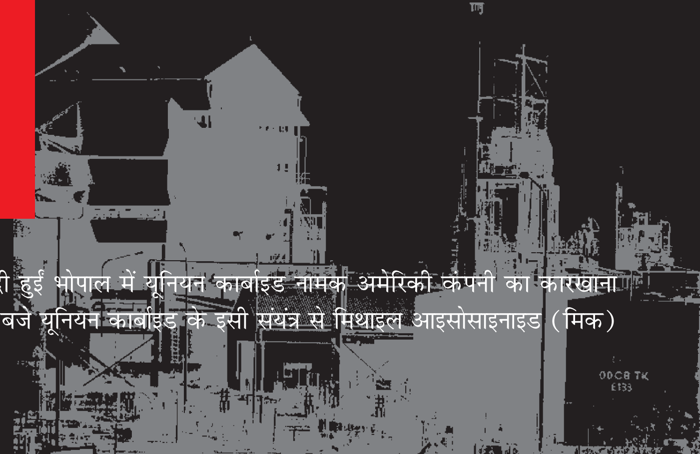

24 साल पहले भोपाल में दुनिया की सबसे भीषण औद्योगिक त्रासदी हुई भोपाल में यूनियन कार्बाइड नामक अमेरिकी कंपनी का कारखाना था जिसमें कीटनाशक बनाए जाते थे। 2 दिसंबर 1984 को रात के 2 बजे यूनियन कार्बाइड के इसी संयंत्र से मिथाइल आइसोसाइनाइड (मिक) गैस रिसने लगी। यह बेहद ज़हरीली गैस होती है...।

अगली सुबह

इस दुर्घटना की चपेट में आने वाली अज़ीज़ा सुल्तान : "तकरीबन 12.30 बजे मुझे अपने बच्चे की तेज़ खाँसी की आवाज सुनाई दी। कमरे में हल्की सी रोशनी थी। मैंने देखा कि पूरा कमरा सफ़ेद धुँए से भरा हुआ था। मुझे लोगों की चीखने की आवाज़ें सुनाई दीं। सब कह रहे थे, 'भागो, भागो'। इसके बाद मुझे भी खाँसी आने लगी। लगता था जैसे मैं आग में साँस ले रही हूँ। आँखें बुरी तरह जलने लगीं।

सामूहिक अंतिम संस्कार

तीन दिन के भीतर 8,000 से ज़्यादा लोग मौत के मुँह में चले गए। लाखों लोग गँभीर रूप से प्रभावित हुए।

जहरीली गैस के संपर्क में आने वाले ज़्यादातर लोग गरीब कामकाजी परिवारों के लोग थे। उनमें से लगभग 50,000 लोग आज भी इतने बीमार हैं कि कुछ काम नहीं कर सकते। जो लोग इस गैस के असर में आने के बावजूद जिंदा रह गए उनमें से बहुत सारे लोग गंभीर श्वास विकारों, आँख की बीमारियों और अन्य समस्याओं से पीड़ित हैं। बच्चों में अजीबो-गरीब विकृतियाँ पैदा हो रही हैं। इस चित्र में दिखाई दे रही लड़की इस बात का उदाहरण है।

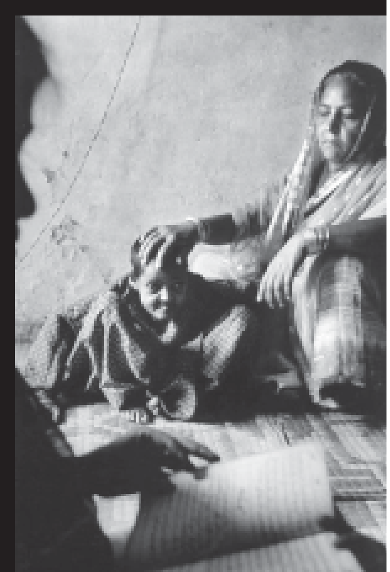

गैस से बुरी तरह प्रभावित एक बच्चा

यह तबाही कोई दुर्घटना नहीं थी। यूनियन कार्बाइड ने पैसा बचाने के लिए सुरक्षा उपायों को जानबूझकर नज़रअंदाज़ किया था। 2 दिसंबर की त्रासदी से बहुत पहले भी कारखाने में गैस का रिसाव हो चुका था। इन घटनाओं में एक मज़दूर की मौत हुई थी जबकि बहुत सारे घायल हुए थे।

यूनियन कार्बाइड कर्मचारी यूनियन के सदस्यों का आंदोलन

गैस राहत मंत्री से बात करते गैस पीड़ित।

सबूतों से पूरी तरह साफ़ था कि इस महाविनाश के लिए यूनियन कार्बाइड ही दोषी है, लेकिन कंपनी ने अपनी गलती मानने से इनकार कर दिया।

इसके बाद शुरू हुई कानूनी लड़ाई में पीड़ितों की ओर से सरकार ने यूनियन कार्बाइड के खिलाफ़ दीवानी मुकदमा दायर कर दिया। 1985 में सरकार ने 3 अरब डॉलर का मुआवजा माँगा था, लेकिन 1989 में केवल 47 करोड़ डॉलर के मुआवजे पर अपनी सहमति दे दी। इस त्रासदी से जीवित बच निकलने वाले लोगों ने इस फ़ैसले के खिलाफ़ सर्वोच्च न्यायालय में अपील की, मगर सर्वोच्च न्यायालय ने भी इस फ़ैसले में कोई बदलाव नहीं किया।

यूनियन कार्बाइड ने कारखाना तो बंद कर दिया, लेकिन भारी मात्रा में विषैले रसायन वहीं छोड़ दिए। ये रसायन रिस-रिस कर ज़मीन में जा रहे हैं जिससे वहाँ का पानी दूषित हो रहा है। अब यह संयंत्र डाओ कैमिकल नामक कंपनी के कब्ज़े में है जो इसकी साफ़-सफ़ाई का जिम्मा उठाने को तैयार नहीं है।

यूनियन कार्बाइड संयंत्र के इर्द-गिर्द बिखरे पड़े रसायनों के बोरे

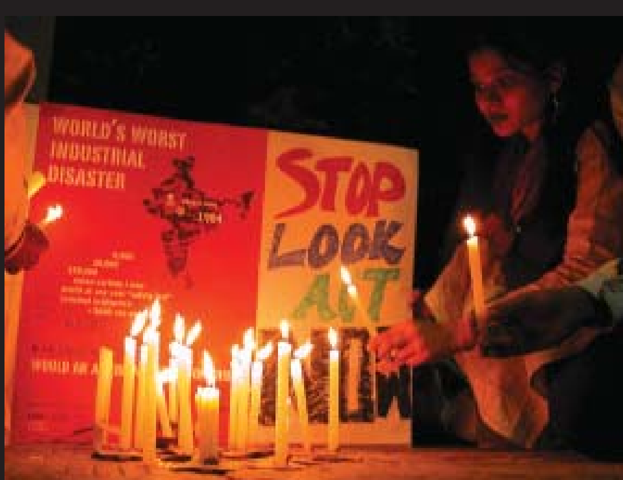

इंसाफ की लड़ाई अभी जारी है...।

24 साल बाद भी लोग न्याय के लिए संघर्ष कर रहे हैं। वे पीने के साफ पानी, स्वास्थ्य सुविधाओं और यूनियन कार्बाइड के जहर से ग्रस्त लोगों के लिए नौकरियों की माँग कर रहे हैं। उन्होंने यूनियन कार्बाइड के चेयरमैन एंडरसन को सज़ा दिलाने के लिए भी आंदोलन चलाया है।

निर्माण स्थलों पर दुर्घटनाएँ आम हैं। इसके बावजूद सुरक्षा उपकरणों और अन्य सावधानियों को अकसर नज़रअंदाज़ कर दिया जाता है।

एक मज़दूर की कीमत क्या होती है?

अगर आप भोपाल के महाविनाश की वजहों को समझना चाहते हैं तो सबसे पहले यह जानना पड़ेगा कि यूनियन कार्बाइड ने भारत में ही अपना कारखाना क्यों खोला।

विदेशी कंपनियों के भारत आने का एक कारण यहाँ का सस्ता श्रम है। अगर ये कंपनियाँ अमेरिका या किसी और विकसित देश में काम करें तो उन्हें भारत जैसे गरीब देशों के मज़दूरों के मुकाबले वहाँ के मज़दूरों को ज़्यादा वेतन देना पड़ेगा। भारत में न केवल वे कम कीमत पर काम करवा सकती हैं, बल्कि यहाँ के मज़दूर ज़्यादा घंटों तक भी काम कर सकते हैं। यहाँ मज़दूरों के लिए आवास जैसी दूसरी चीज़ों पर भी खर्चे की ज़्यादा ज़रूरत नहीं होती। इस तरह ये कंपनियाँ यहाँ कम लागत पर ज़्यादा मुनाफ़ा कमा सकती हैं।

लागत में कटौती के तरीके इससे खतरनाक भी हो सकते हैं। लागत में कमी लाने के लिए सुरक्षा उपायों की अकसर अनदेखी की जाती है। यूनियन कार्बाइड के कारखाने में एक भी सुरक्षा उपकरण या तो सही ढंग से काम नहीं कर रहा था या उनकी संख्या कम थी। 1980 से 1984 के बीच मिक संयंत्र के कामगारों के दल की संख्या 12 से घटाकर 6 की जा चुकी थी। मज़दूरों के लिए सुरक्षा प्रशिक्षण की अवधि तो 6 महीने से घटा कर केवल 15 दिन कर दी गई थी! मिक कारखाने के लिए रात की पाली के मज़दूर का पद ही खत्म कर दिया गया था।

यूनियन कार्बाइड के भोपाल और अमेरिकी संयंत्रों में सुरक्षा व्यवस्था में फ़र्क जानने के लिए नीचे पढ़ें–

"पश्चिम वर्जीनिया (अमेरिका) में कंप्यूटरीकृत चेतावनी और निगरानी व्यवस्था मौजूद थी। भोपाल के यूनियन कार्बाइड कारखाने में गैस के रिसाव के लिए केवल मज़दूरों के अंदाज़े के सहारे काम चलाया जाता था। पश्चिम वर्जीनिया में खतरा पैदा होने पर लोगों को सुरक्षित स्थानों पर ले जाने की व्यवस्था मौजूद थी, जबकि भोपाल में ऐसा कुछ नहीं था।"

अलग-अलग देशों के बीच सुरक्षा मानकों में इतने भारी फ़र्क क्यों हैं? और दुर्घटना हो जाने के बाद पीड़ितों को इतना मामूली मुआवज़ा क्यों दिया जा रहा है?

इस बात का जवाब यह है कि भारतीय मज़दूर का मोल अभी भी ज़्यादा नहीं माना जाता। एक मज़दूर जाता है तो फ़ौरन उसकी जगह

दूसरा मिल सकता है। हमारे यहाँ बेरोज़गारी इतनी ज़्यादा है कि थोड़ी सी तनख्वाह के बदले न जाने कितने लोग असुरक्षित स्थितियों में भी काम करने को तैयार हो जाते हैं। मज़दूरों की इस कमज़ोरी का फायदा उठाकर मालिक कार्यस्थल पर सुरक्षा की ज़िम्मेदारी से बच जाते हैं। इस तरह भोपाल गैस त्रासदी के इतने सालों बाद भी मालिकों के बर्बर रवैये के कारण निर्माण स्थलों, खदानों या कारखानों में दुर्घटना की खबरें हर रोज़ आती रहती हैं।

सुरक्षा कानूनों का क्रियान्वयन

कानून बनाने और लागू करने वाली संस्था के नाते यह सुनिश्चित करना सरकार की ज़िम्मेदारी है कि सुरक्षा कानूनों को सही ढंग से लागू किया जाए। सरकार को इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि अनुच्छेद 21 में दिए गए जीवन के अधिकार का उल्लंघन न हो। जब यूनियन कार्बाइड संयंत्र में सुरक्षा मानकों की इस तरह खुले आम अवहेलना हो रही थी तो सरकार क्या कर रही थी?

पहली बात, भारत में सुरक्षा कानून ढीले थे। दूसरा, उन कमज़ोर सुरक्षा कानूनों को भी ठीक से लागू नहीं किया जा रहा था।

सरकारी अफ़सर इस कारखाने को खतरनाक कारखानों की श्रेणी में रखने को भी तैयार नहीं थे। इस कारखाने को घनी आबादी वाले इलाके में खोलने पर उन्हेंने कोई ऐतराज नहीं किया। जब भोपाल के कुछ नगर निगम अधिकारियों ने इस बात पर उँगली उठाई कि 1978 में मिक उत्पादन कारखाने की स्थापना सुरक्षा मानकों के खिलाफ़ थी तो सरकार का कहना था कि प्रदेश को भोपाल के संयंत्र में लगातार निवेश चाहिए ताकि रोज़गार मिलते रहें। सरकार की राय में यूनियन कार्बाइड से इस बात की माँग करना असंभव था कि वह साफ़-सुथरी तकनीक या ज़्यादा सुरक्षित प्रक्रियाओं को अपनाए। सरकारी निरीक्षक कारखाने में अपनाई जा रही दोषपूर्ण प्रक्रियाओं को बार-बार मंज़ूरी देते रहे। जब कारखाने में बार-बार गैस का रिसाव होने लगा और सबको यह बात समझ में आ चुकी थी कि कहीं कुछ भारी गड़बड़ी चल रही है, तब भी निरीक्षकों के कान पर जूँ तक नहीं रेंगी।

कानून बनाने और उनको लागू करने वाली संस्था के लिए यह रवैया सही नहीं है। लोगों के हितों की रक्षा करने की बजाय सरकार और निजी कंपनी, दोनों ही उनकी सुरक्षा को नज़रअंदाज़ करती जा रही थीं।

यह हरगिज़ अच्छी स्थिति नहीं है। जब भारत में स्थानीय और विदेशी व्यवसायी नए-नए कारखाने खोलते जा रहे हैं तो मज़दूरों के अधिकारों की रक्षा करने वाले सख्त कानूनों और उनके ज़्यादा बेहतर क्रियान्वयन की ज़रूरत और बढ़ गई है।

आपको ऐसा क्यों लगता है कि किसी फैक्ट्री में सुरक्षा कानूनों को लागू करना बहुत महत्त्वपूर्ण होता है?

क्या आप कुछ दूसरी ऐसी स्थितियों का उल्लेख कर सकते हैं जहाँ कानून या नियम तो मौजूद हैं, परंतु उनके क्रियान्वयन में ढिलाई के कारण लोग उनका पालन नहीं करते? (उदाहरण के लिए मोटर गाड़ियों की तेज़ रफ़्तार)। कानूनों को लागू करने में क्या समस्याएँ आती हैं? क्या आप क्रियान्वयन में सुधार के लिए कुछ सुझाव दे सकते हैं?

हाल ही में एक ट्रेवल एजेंसी को आदेश दिया गया कि वह अपने कुछ ग्राहकों को 8 लाख रुपए का मुआवज़ा दे। इन सैलानियों को मुआवज़ा इसलिए दिया जा रहा था क्योंकि कंपनी की लापरवाही के कारण वे डिज्नीलैंड देखने और पेरिस में खरीदारी करने से वंचित रह गए थे। तो फिर भोपाल गैस त्रासदी के पीड़ितों को ज़िंदगी भर की पीड़ा और नुकसान के बदले इतना कम मुआवज़ा क्यों मिला?

पर्यावरण की रक्षा के लिए नए कानून

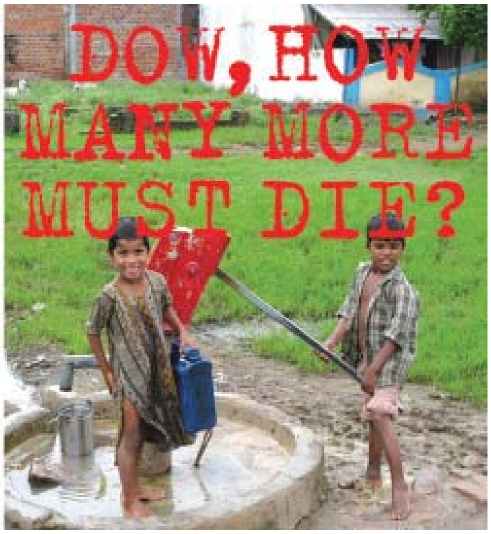

भोपाल स्थित यूनियन कार्बाइड फ़ैक्टरी के आसपास दूषित इलाकों में स्थित हैंडपंपों को सरकार ने लाल रंग से पुतवा दिया है। फिर भी स्थानीय लोग उनका इस्तेमाल कर रहे हैं क्योंकि उनके पास साफ़ पानी का कोई स्रोत नहीं है।

1984 में हमारे पास पर्यावरण की रक्षा के लिए बहुत कम कानून थे। इन कानूनों को लागू करने की व्यवस्था तो और भी कमज़ोर थी। पर्यावरण को एक 'मुफ़्त' चीज़ माना जाता था। किसी भी उद्योग को हवा–पानी में प्रदूषण छोड़ने की खुली छूट मिली हुई थी। चाहे नदियाँ हों, हवा हो या भूमिगत पानी हो – पर्यावरण दूषित हो रहा था और लोगों की सेहत के साथ खिलवाड़ किया जा रहा था।

ढीले सुरक्षा मानकों से न केवल यूनियन कार्बाइड को फ़ायदा मिला, बल्कि उसे प्रदूषण से निपटने के लिए पैसा भी खर्च नहीं करना पड़ा। अमेरिका में यही कंपनी इस ज़िम्मेदारी से नहीं बच सकती थी।

भोपाल त्रासदी ने पर्यावरण के मुद्दों को अगली कतार में ला दिया। कई लाख ऐसे लोग कारखाने से निकली जहरीली गैस का शिकार बन गए थे जो इस कारखाने से किसी भी तरह जुड़े नहीं थे। इससे लोगों को यह अहसास हुआ कि मौजूदा कानून चाहे कितने भी कमज़ोर हों, वे केवल मज़दूरों से ही संबंधित हैं। उनमें उन आम लोगों के अधिकारों पर ध्यान नहीं दिया गया है जो औद्योगिक दुर्घटनाओं के कारण घायल होते हैं।

पर्यावरणवादी कार्यकर्ताओं तथा अन्य लोगों के इस दवाब से निपटने के लिए भोपाल गैस त्रासदी के बाद भारत सरकार ने पर्यावरण के बारे में नए कानून बनाए। पर्यावरण को नुकसान पहुँचाने के लिए प्रदूषण फैलाने वालों को ही ज़िम्मेदार माना जाने लगा। इसके पीछे समझ यह थी कि हमारे पर्यावरण पर अगली पीढ़ियों का भी हक बनता है और उसे केवल औद्योगिक विकास के लिए नष्ट नहीं किया जा सकता।

अदालतों ने स्वस्थ पर्यावरण के अधिकार को जीवन के मौलिक अधिकार का हिस्सा बताते हुए कई महत्त्वपूर्ण फैसले दिए। सुभाष कुमार बनाम बिहार राज्य (1991) के मुकदमे में सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि जीवन का अधिकार संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत एक मौलिक अधिकार है और इसमें प्रदूषण–मुक्त हवा और पानी का अधिकार भी शामिल है। यह सरकार की ज़िम्मेदारी है कि वह प्रदूषण पर अंकुश लगाने, नदियों को साफ़ रखने और जो दोषी हैं उन पर भारी जुर्माना लगाने के लिए कानून और प्रक्रियाएँ तय करे।

'स्वच्छ वातावरण एक जनसुविधा है', क्या आप इस बयान की व्याख्या कर सकते हैं?

हमें नए कानूनों की ज़रूरत क्यों है?

कंपनियाँ और ठेकेदार पर्यावरण कानूनों का उल्लंघन कैसे कर पाते हैं?

जनसुविधा के रूप में पर्यावरण

हाल के वर्षों में न्यायालयों ने पर्यावरण से जुड़े मुद्दों पर कई कड़े आदेश दिए हैं। ऐसे कई आदेशों से लोगों की रोज़ी-रोटी पर भी बुरा असर पड़ा है।

मिसाल के तौर पर, अदालत ने आदेश दिया कि दिल्ली के रिहायशी इलाकों में काम करने वाले उद्योगों को बंद कर दिया जाए या उन्हें शहर से बाहर दूसरे इलाकों में भेज दिया जाए। इनमें से कई कारखाने आसपास के वातावरण को प्रदूषित कर रहे थे। इन कारखानों की गंदगी से यमुना नदी भी प्रदूषित हो रही थी क्योंकि इन कारखानों को नियमों के हिसाब से नहीं चलाया जा रहा था।

अदालत की कार्रवाई से एक समस्या तो हल हो गई, लेकिन एक नई समस्या पैदा भी हो गई कारखानों के बंद हो जाने से बहुत सारे मज़दूरों के रोज़गार खत्म हो गए। बहुतों को दूर-दराज के इलाकों में जाना पड़ा जहाँ उन कारखानों को दोबारा चालू किया गया था। अब प्रदूषण की समस्या इन नए इलाकों में पैदा हो रही है ये इलाके प्रदूषित होने लगे हैं। मज़दूरों की सुरक्षा संबंधी स्थितियों का मुद्दा अभी भी वैसा का वैसा है।

भारत में पर्यावरणीय मुद्दों पर हुए ताज़ा अनुसंधानों से यह बात सामने आई है कि मध्य वर्ग के लोग पर्यावरण की चिंता तो करने लगे हैं, लेकिन वे अक्सर गरीबों की पीड़ा को ध्यान में नहीं रखते। इसलिए उनमें से बहुतों को यह तो समझ में आता है कि शहर को सुंदर बनाने के वास्ते बस्तियों को हटाना चाहिए या प्रदूषण फैलाने वाली फैक्ट्रियों को शहर के बाहर ले जाना चाहिए, लेकिन यह समझ में नहीं आता कि इससे बहुत सारे लोगों की रोज़ी-रोटी भी खतरे में पड़ सकती है। जहाँ एक तरफ़ स्वच्छ पर्यावरण के बारे में जागरूकता बढ़ रही है वहीं दूसरी तरफ़ मज़दूरों की सुरक्षा के बारे में लोग ज़्यादा चिंता नहीं जता रहे हैं।

अब चुनौती ऐसे समाधान ढूँढ़ने की है जिनमें स्वच्छ वातावरण का लाभ सभी को मिल सके। इसका एक तरीका यह है कि हम कारखानों में ज़्यादा स्वच्छ तकनीकों और प्रक्रियाओं को अपनाने पर ज़ोर दें। इसके लिए सरकार को भी चाहिए कि वह कारखानों को प्रोत्साहन और मदद दे। उसे प्रदूषण फैलाने वालों पर जुर्माना करना होगा। इस तरह मज़दूरों के रोज़गार भी बच जाएँगे और समुदायों व मज़दूरों को सुरक्षित पर्यावरण का अधिकार भी मिल जाएगा।

क्या आपको लगता है कि ऊपर उद्धृत मामले में सभी पक्षों को न्याय मिला है?

क्या आपको पर्यावरण की रक्षा के और तरीके दिखाई देते हैं? कक्षा में चर्चा करें।

गाड़ियों से उत्सर्जित धुआँ पर्यावरणीय प्रदूषण का एक बड़ा स्रोत हैं। 1998 के बाद सर्वोच्च न्यायालय ने अपने कई फ़ैसलों में यह आदेश दिया कि दिल्ली में डीजल से चलने वाले सभी सार्वजनिक वाहन कम्प्रेस्ड नेचुरल गैस (सी.एन.जी.) ईंधन का इस्तेमाल करें। इन प्रयासों से दिल्ली जैसे शहरों के वायु प्रदूषण में काफ़ी गिरावट आई है। लेकिन सेंटर फ़ॉर साइंस ऐण्ड एनवायरनमेंट (नयी दिल्ली) की एक ताज़ा रिपोर्ट में कहा गया है कि हवा में विषैले पदार्थों का स्तर काफ़ी ऊँचा है। ये विषैले पदार्थ पेट्रोल की बजाय डीजल से चलने वाली बसों/कारों के कारण पैदा हो रहे हैं।

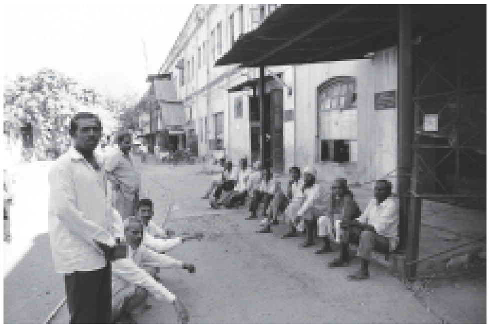

बंद कारखानों के बाहर परेशान मज़दूर

रोज़गार छिन जाने के बाद बहुत सारे मज़दूर छोटा-मोटा व्यापार या दिहाड़ी मज़दूरी करने लगते हैं। कुछ मज़दूरों को पहले से भी छोटे कारखानों में काम मिलता है जहाँ के हालात पहले से भी ज़्यादा शोषण भरे होते हैं और जहाँ कानूनों की स्थिति और भी ज़्यादा कमज़ोर होती है।

विकसित देश अपने विषैले और खतरनाक उद्योगों को विकासशील देशों में ले जा रहे हैं ताकि इन देशों के कमज़ोर कानूनों का फ़ायदा उठा सकें और अपने देशों को साफ़-सुथरा रख सकें। दक्षिण एशियाई देश, खासतौर से भारत, बांगलादेश और पाकिस्तान – कीटनाशक, ऐस्बेस्टॉस बनाने वाले या जस्ते व सीसे को संसाधित करने वाले कारखानों को बड़े पैमाने पर अपने यहाँ बुला रहे हैं।

निष्कर्ष

चाहे बाज़ार हो, दफ़्तर हो या कोई कारखाना हो बहुत सारी स्थितियों में लोगों को गलत तौर-तरीकों से बचाने के लिए कानून ज़रूरी होते हैं। निजी कंपनियाँ, ठेकेदार, व्यवसायी आदि ज़्यादा मुनाफ़ा कमाने के चक्कर में गलत हथकंडे भी अपनाने लगते हैं। उदाहरण के तौर पर वे मज़दूरों को कम मेहनताना देते हैं, बच्चों से काम करवाते हैं, काम की स्थितियों पर ध्यान नहीं देते या पर्यावरण का खयाल नहीं रखते और इस तरह आस-पास के लोगों को भी नुकसान पहुँचाते हैं।

ऐसे में सरकार की एक अहम ज़िम्मेदारी यह बनती है कि वह निजी कंपनियों के गलत तौर-तरीकों को रोकने और सामाजिक न्याय प्रदान करने के लिए कानून बनाए, उनको लागू करे और उन पर निगरानी रखे। यानी न सरकार को केवल 'सही कानून' बनाने चाहिए, बल्कि उनको लागू भी करना चाहिए। अगर कानून कमज़ोर हों और उनको सही ढंग से लागू न किया जाए तो उनसे भारी नुकसान हो सकता है। भोपाल गैस त्रासदी इस बात का सबूत है।

इस दिशा में सरकार की तो ज़िम्मेदारी बनती ही है, आम लोग भी दवाब डालकर निजी कंपनियों और सरकार दोनों को समाज के हित में काम करने के लिए बाध्य कर सकते हैं। जैसा कि हमने पहले देखा, पर्यावरण एक ऐसा विषय है जहाँ लोगों ने जनहित के लिए दवाब डाला है और न्यायालयों ने भी स्वस्थ पर्यावरण के अधिकार को मौलिक अधिकार के रूप में जीवन का अभिन्न अंग माना है। इस अध्याय में हमने इस बात पर ज़ोर दिया है कि लोगों को इस बात के लिए आवाज़ उठानी चाहिए कि स्वस्थ्य वातावरण की सुविधा सबको मिले। इसी तरह मज़दूर अधिकारों (यानी काम का अधिकार, सही मेहनताना और मानवोचित कार्यस्थितियों का अधिकार) के क्षेत्र में भी अभी हालात काफ़ी खराब हैं। लोगों को इस बात के लिए आवाज़ उठानी चाहिए कि कामगारों के अधिकारों की रक्षा के लिए सख्त कानून बनाए जाएँ ताकि सबको जीवन का अधिकार मिल सके।

अभ्यास

1. दो मज़दूरों से बात करके पता लगाएँ कि उन्हें कानून द्वारा तय किया गया न्यूनतम वेतन मिल रहा है या नहीं। इसके लिए आप निर्माण मज़दूरों, खेत मज़दूरों, फ़ैक्ट्री मज़दूरों या किसी दुकान पर काम करने वाले मज़दूरों से बात कर सकते हैं।
2. विदेशी कंपनियों को भारत में अपने कारखाने खोलने से क्या फ़ायदा है?
3. क्या आपको लगता है कि भोपाल गैस त्रासदी के पीड़ितों को सामाजिक न्याय मिला है? चर्चा करें।
4. जब हम कानूनों को लागू करने की बात करते हैं तो इसका क्या मतलब होता है? कानूनों को लागू करने की ज़िम्मेदारी किसकी है? कानूनों को लागू करना इतना महत्त्वपूर्ण क्यों है?
5. कानून के ज़रिए बाजारों को सही ढंग से काम करने के लिए किस तरह प्रेरित किया जा सकता है? अपने जवाब के साथ दो उदाहरण दें।
6. मान लीजिए कि आप एक रासायनिक फैक्ट्री में काम करने वाले मज़दूर हैं। सरकार ने कंपनी को आदेश दिया है कि वह वर्तमान जगह से 100 किलोमीटर दूर किसी दूसरे स्थान पर अपना कारखाना चलाए। इससे आपकी ज़िंदगी पर क्या असर पड़ेगा? अपनी राय पूरी कक्षा के सामने पढ़कर सुनाएँ।
7. इस इकाई में आपने सरकार की विभिन्न भूमिकाओं के बारे में पढ़ा है। इनके बारे में एक अनुच्छेद लिखें।
8. आपके इलाके में पर्यावरण को दूषित करने वाले स्रोत कौन से हैं? (क) हवा; (ख) पानी और (ग) मिट्टी में प्रदूषण के संबंध में चर्चा करें। प्रदूषण को रोकने के लिए किस तरह के कदम उठाए जा रहे हैं? क्या आप कोई और उपाय सुझा सकते हैं?
9. पहले पर्यावरण को किस तरह देखा जाता था? क्या अब सोच में कोई बदलाव आया है? चर्चा करें।

बच्चों पर इस तरह बोझ डालना कितनी बुरी बात है। देखो, मुझे अपने बेटे की मदद के लिए इस लड़के को नौकरी पर रखना पड़ा!

10. प्रसिद्ध कार्टूनिस्ट आर. के. लक्ष्मण इस कार्टून के ज़रिए क्या कहना चाह रहे हैं? इसका 2006 में बनाए गए उस कानून से क्या संबंध है जिसको पृष्ठ 123 पर आपने पढ़ा था।

11. आपने भोपाल गैस त्रासदी और उसके बारे में चल रहे संघर्ष के बारे में पढ़ा है। दुनिया भर के विद्यार्थी न्याय के इस संघर्ष में अपना योगदान दे रहे हैं। वे जुलूस-प्रदर्शनों से लेकर जागरूकता अभियान तक चला रहे हैं। उनकी गतिविधियों के बारे में आप www.studentsforbhopal.com पर पढ़ सकते हैं। इस वेबसाइट पर बहुत सारे चित्र, पोस्टर, वृतचित्र और पीड़ितों के बयान आदि उपलब्ध हैं।

इस वेबसाइट तथा अन्य संसाधनों का इस्तेमाल करते हुए अपनी कक्षा में दिखाने के लिए भोपाल गैस त्रासदी पर एक दीवार पत्रिका (वॉल-पेपर)/प्रदर्शनी तैयार करें। पूरे स्कूल को अपनी रचनाएँ देखने और उन पर चर्चा करने के लिए आमंत्रित करें।

शब्द संकलन

उपभोक्ता: जो व्यक्ति बाज़ार में बेचने के लिए नहीं बल्कि निजी इस्तेमाल के लिए कोई चीज़ खरीदता है उसे उपभोक्ता कहा जाता है।

उत्पादक: ऐसा व्यक्ति या संस्थान जो बाज़ार में बेचने के लिए चीज़ें बनाता है। कई बार उत्पादक अपने उत्पादन का कुछ हिस्सा निजी इस्तेमाल के लिए भी रख लेते हैं, उदाहरण के लिए, किसान।

निवेश: भविष्य में उत्पादन बढ़ाने/सुधारने के लिए नई मशीनरी या इमारत या प्रशिक्षण पर खर्च होने वाला पैसा।

मज़दूरों की यूनियन: मज़दूरों का संगठन। आमतौर पर मज़दूर यूनियनें कारखानों और दफ़्तरों में दिखाई देती हैं लेकिन अन्य किस्म के मज़दूरों की भी यूनियनें हो सकती हैं, जैसे घरेलू नौकरों की यूनियन। यूनियन के नेता अपने सदस्यों की ओर से मालिकों के साथ सौदेबाजी और बातचीत करते हैं। मज़दूर यूनियनें वेतन, श्रम नियमावली, नियुक्ति, बर्खास्तगी और पदोन्नति से संबंधित नियमों, लाभों और कार्यस्थल सुरक्षा आदि मुद्दों पर काम करती हैं।

एक जीवित आदर्श के रूप में संविधान

जीवन का अधिकार एक मौलिक अधिकार है। संविधान के माध्यम से यह अधिकार देश के सभी नागरिकों को मिला हुआ है। जैसा कि आपने इस किताब में पढ़ा है, आम नागरिकों ने इस अधिकार, यानी संविधान के अनुच्छेद 21 का विभिन्न संदर्भों में इस्तेमाल किया है। नागरिकों के इन प्रयासों से ही यह अधिकार और सार्थक व व्यापक हो गया है। उदाहरण के लिए, आपने पढ़ा कि किस तरह हाकिम शेख ने स्वास्थ्य के अधिकार को जीवन के अधिकार का अभिन्न अंग साबित कर दिया। इसी तरह मुंबई के झुग्गीवासियों की कोशिशों से रोज़गार के अधिकार को जीवन के अधिकार का हिस्सा माना गया। इसी अध्याय में आपने यह भी पढ़ा कि किस तरह न्यायालय ने "प्रदूषण मुक्त पानी एवं हवा" के अधिकार को जीवन के अधिकार का हिस्सा बताया था। इसके अलावा शिक्षा और आवास के अधिकार को भी अदालतों ने जीवन के अधिकार का हिस्सा बताया है।

जीवन के अधिकार की यह विस्तृत व्याख्या आम नागरिकों के प्रयासों का नतीज़ा है। जब भी नागरिकों को ऐसा लगता है कि उनके मौलिक अधिकारों का उल्लंघन हो रहा है तो वे अदालत में जाकर न्याय माँगते हैं। जैसा कि आपने इस पुस्तक में कई जगह पढ़ा है, इन्हीं मौलिक अधिकारों ने नए कानून बनाने और खास तरह की नीतियों को लागू करने में भी मदद दी है। ये सब कुछ इसीलिए संभव हुआ कि हमारे संविधान में कुछ खास नियम हैं जो भारत के सभी नागरिकों की प्रतिष्ठा और स्वाभिमान की रक्षा करते हैं। मौलिक अधिकारों तथा कानून के शासन से संबंधित विभिन्न प्रावधानों में इस बात की व्याख्या की गई है।

इन उदाहरणों से स्पष्ट हो जाता है कि हमारा संविधान काफ़ी लचीला भी है। इसी आधार पर संविधान द्वारा दिए गए प्रतिष्ठा और न्याय के विचार में नए सिरे से उभरकर आनेवाले मुद्दों की सूची का भी समावेश किया जाना चाहिए। इस लचीलेपन के कारण संविधान के प्रावधानों की नई व्याख्याएँ की जा सकती हैं। इस आधार पर संविधान को एक जीवन्त दस्तावेज़ माना जा सकता है। स्वास्थ्य का अधिकार या आवास का अधिकार आदि ऐसे मुद्दे हैं जो 1949 में संविधान सभा के सदस्यों द्वारा पेश किए गए संविधान में लिखित तौर पर मौजूद नहीं थे। लेकिन भावना के स्तर पर वे निश्चित रूप से मौजूद थे। इसका मतलब यह है कि संविधान में ऐसे लोकतांत्रिक आदर्श उस समय भी मौजूद थे जिनके ज़रिए लोग राजनीतिक प्रक्रिया का इस्तेमाल करके यह सुनिश्चित कर सकते थे कि आम नागरिकों की ज़िंदगी में ये आदर्श हकीकत का रूप लें।

जैसा कि इस पुस्तक के अध्यायों में चर्चा की गई है, संवैधानिक आदर्शों को यथार्थ रूप देने के लिए काफ़ी कुछ किया जा चुका है। दूसरी ओर, इन्हीं अध्यायों में यह भी बताया गया है कि अभी बहुत कुछ होना बाकी है। देश के विभिन्न भागों में जनता द्वारा किए जा रहे विभिन्न संघर्ष बार-बार इस बात को याद दिलाते हैं कि समाज के ज़्यादातर लोगों की ज़िंदगी में समानता, प्रतिष्ठा और स्वाभिमान जैसे सवाल अभी भी अधूरे हैं। जैसा कि कक्षा 7 की पुस्तक में आपने पढ़ा था, मीडिया भी इन संघर्षों पर अकसर ध्यान नहीं देता। लेकिन इसका यह मतलब नहीं है कि इन आंदोलनों पर ध्यान नहीं दिया जाना चाहिए।

इस पुस्तक के विभिन्न अध्यायों में यह समझाने की चेष्टा की गई है कि संविधान में कौन से लोकतांत्रिक आदर्श दिए गए हैं और उनसे लोगों के दैनिक जीवन पर किस तरह असर पड़ता है। इसके पीछे हमारा मकसद आपको ऐसे साधन मुहैया कराना है जिनके सहारे आप अपने आसपास की दुनिया को समझने-बूझने का प्रयास कर सकें और संविधान द्वारा बताए गए रास्ते पर चलते हुए उसमें हिस्सा ले सकें।

संदर्भ

किताबें

ऑस्टिन, ग्रेनविल. 1966, *दि इंडियन कॉन्स्टीट्यूशन : कॉर्नरस्टोन ऑफ़ ए नेशन,* ऑक्सफ़ोर्ड : क्लेरेंडन प्रेस।

ऑस्टिन, ग्रेनविल. 1999, *वर्किंग ए डेमोक्रेटिक कॉन्स्टीट्यूशन : दि इंडियन एक्सपीरियन्स,* नयी दिल्ली : ऑक्सफोर्ड

लॉयर्स क्लेक्टिव. 2007, *स्टेयिंग अलाइव : फर्स्ट मॉनीटरिंग एंड इवैल्युएशन रिपोर्ट 2007 ऑन द प्रोटेक्शन ऑफ़ वूमैन फ्राम डोमेस्टिक वॉयलैंस एक्ट, 2005,* नयी दिल्ली : लॉयर्स क्लेक्टिव।

रामास्वामी, गीता. 2005, *इंडिया स्टिंकिंग : मैनुअल स्कैवेंजर्स इन आंध्रा प्रदेश एंड देयर वर्क,* नयी दिल्ली : नवनय पब्लिकेशन।

अखबारों के लेख

पी. साईनाथ, "हूज सैक्रिफाइस इज इट ऐनीवे?" द *हिन्दू,* 6 सितंबर 1998।

विधिक प्रकरण

ओल्गा टेलिस वर्सेस बॉम्बे म्यूनिसिपल कॉर्पोरेशन (1985)3 एस सी सी 545।

पश्चिम बंग खेत मज़दूर समिति बनाम पश्चिम बंगाल राज्य (1996)

स्टेट (देहली ऐडमिनिस्ट्रेशन) वर्सेस लक्समन कुमार (1985) 4 एस सी सी 476।

सुभाष कुमार वर्सेस स्टेट ऑफ़ बिहार (1991) 1 एस सी सी 598।

वेबसाइट्स

भोपाल गैस त्रासदी, http://www.studentsforbhopal.org/WhatHappened.htm. Accessed on 12 जनवरी 2008.

सी. के. जानू, www.countercurrents.org Accessed on 12 नवंबर 2007.

नेपाल में लोकतंत्र, http://www.himalmag.com Accessed on 15 दिसंबर 2007.

हाथ से मैला उठाना, www.hrdc.net/sahrdc/hrfeatures/HRF 129.html. Accessed on 2 जनवरी 2008.